बहुचर्चित

दि फाइनल ऑर्डर

(अन्तिम आदेश)

लेखक कृष्णकान्त

विषय – सूची

प्रस्तावना	पृष्ठ संख्या
भूमिका	१
प्रमाण	३
अन्तिम आदेश के स्वभाव और प्रसंग से संबंधित आपत्तियाँ	९
‘ अपॉइंटमेंट टेप (नियुक्ति का टेप)	३४
संबंधित आपत्तियॉ	४४
निष्कर्ष	७९
ऋत्विक क्या है ?	८०
आकृति	८२

परिशिष्ट ः

9 जुलाई **1977** का पत्र	(i)
अन्य प्रमाण	(ii)
श्रील प्रभुपाद की वसियात **(4** जून **1977)**	(xi)
एवं कोडिसिल (संशोधन) **(5** नवम्बर **1977)**	(xiv)

श्रील प्रभुपाल के उपदेशों मे प्रासंगिक प्रमाण ः

- क्या गुरू को उपस्थित होना अनिवार्य है ?	(xvi)
- आदेश का अनुसरण करो. शरीर का नही ।	(xxi)
- श्रील प्रभुपाद की प्रस्तकें ही पर्याप्त है ।	(xxi)
- श्रील प्रभुपाद हमारे शाश्वत गुरू है ।	(xxii)

प्रस्तावना

हाल ही में लिखे गए 'इन्साइडर एण्ड आउटसाइडर परसेपशन्स ऑफ श्रील प्रभुपाद' लेख पर में सोच—विचार कर रही थी। इससे मुझे वर्तमान में चर्चित विषय 'गुरू— शिष्य परम्परा और इसमें श्रील प्रभुपाद के अंतर्धान होने के उपरान्त गुरूओं की भुमिका' पर विभिन्न भक्तों द्वारा प्रकट भिन्न—भिन्न दृष्टिकोणों को ठीक से समझनें और जानने में सहायता मिली। वैसे मैं इससे पहले घटित घटनाओं से परिचित थी जब अनेक गुरू अपने आध्यात्मिक स्तर से गिर कर पथभ्रष्ट हो गये थे। उस समय इन घटनाओं के कारण स्थिती संकटपूर्ण और चिन्ताजनक हो । इस घटना के बाद जो गुरू पथभ्रष्ट एवं पतित हो गए थे उनके शिष्यों, गुरू भाइयों एवं गुरू बहिनों के जीवन में आतंक और शोक छा गया था |

इसके उपरान्त ८0 के अंत में गुरू सुधार हुए और कई अन्य व्यक्तियों की तरह मैंने भी यह आशा की इन गुरू सुधारों के फलस्वरूप इस्कॉन के नेतृत्व और दीक्षा संबंधी समस्याओं का हाल निकल जाएगा | लेकिन अब इस लेख के लिखने से पूर्व मैने इस विषय पर पुनःकई विावाद पढे , कुछ वर्तमान गुरू प्रणाली के समर्थन में और कुछ इसके विरोध में | मैंने गुरू और परंपरा के विषय में कई विद्वानों की टिप्पणियों का अध्ययन भी काफी सजीव है | हाल ही के 'जनरल ऑफ वैष्णव स्टडीस' के पॉचवे प्रकाशन में गुरू परम्परा से संबंधित एक लेख में जेन ब्रजेजिनस्की ने इस विषय के कई पहलुओ की चर्चा की है | उन्होंने चर्चा करते हुए इस्कॉन के भविष्य के लिए योग्य एवं प्रतिभाशाली
नेताओं की जरूरत पर बल दिया | वैसे उनका दृष्टिकोण कई दृष्टिकोणों में से एक है | फिर भी इससे हमें इस विषय की महत्त्वता और गंभीरता का अभ्यास होता है जिसके कारण इस्कॉन के अन्दर रहने वाले ही नही अपितु बाहर वाले भी इस विषय के बारे में सोचने को प्रेरित हो उठे है |

सन् १९९६ के अंत में मुझे ' द फाइनल ऑर्डर ' पढ़ने को कहा गया ताकी मै इस विषय के बारे मे अपने विचार प्रकट कर सकूँ और इस लेख में उठाये गये कई प्रश्नों के बारे में चर्चा कर सकूँ । इस लेख को पढने के बाद मेरे मन में कोई संदेह नही रहा कि यह विषय इस्कॉन के लिए बहुत ही महत्वपूर्ण है और इस विषय पर कई भक्त बहुत गंभीरता से सोचते हैं । मुझे यह लगा कि इस लेख ने कई महत्वपूर्ण प्रश्न खडे कीए है । जैसे– आध्यात्मिक अधिकार एवं अधिपत्य और उसका प्रतिपादन कैसे हो ? भगवान कृष्ण के प्रतिनिधी अथवा गुरू और शिष्य संबंध क्या है ? हमारी भक्तियुत पूजा, सम्मान और सत्काार का पात्र कौन बने ? एक बाहर का व्यक्ति होने के कारण मैं पूर्ण रूप से इस विषय को समझने मे और कोई निर्णय लेने में असमर्थ हूँ । (मै इस्कॉन मे चलित वर्तमान आचार्य प्रणाली के समर्थन एवं विरोध मे दिए गए प्रमाणो की तुलना करने मे भी असमर्थ हूँ)। अपनी असमर्थता के बावजूद मै इस बात की प्रशंसा करती हूँ कि इस लेख मे बहूत ही गंभिरताापूर्वक एवं प्रमाणिक रूप से यह स्थापित करने की चेष्टा की गयी है कि श्रील प्रभुपाद ने ऋत्विक प्रणाली को स्थापित किया था और वे यह ऋत्विक श्रील प्रभुपाद की ओर से दिक्षा प्रदान करे । मुझे यह उम्मीद है कि यह लेख अत्यधिक ध्यानपूर्वक पढा जाएगा और बडे पैमाने पर इसकी चर्चा होगी । मै इस पर ध्यान देने की बात इसलिए नही कर रही हू क्योंकि मै इस लेख का समर्थन करती हू या विरोध ; बल्कि इसलिए कि इस लेख मे उठाया गया विषय सभी स्तरों के लोगो का ध्यानकर्षण करता हे । हर भक्त के लिए यह विषय बहुत महत्वपूर्ण है ।

इसमे कोई शक नही कि मुझ जैसे बाहर के व्यक्ति के लिए इस तरह प्रस्तावना लिखकर अपने आप को आंतरिक मामलों मे सम्मिुलित करना बुद्धिमत्ता नही है फिर भी इस संस्था के प्रति मेरी आसक्ति और सभी भक्तो के प्रती मेरे हृदय मे रहने वाली शुभकामनाओं ने मुझे यह लिखने के प्रेरित किया है ।

फरवरी , १९९७

किम नॉट ,
वरिष्ठ अध्यापिका
धार्मिक विदयापीठ ,
लीड्स महाविदयालय. इंग्लैण्ड

भूमिका

यह दस्तावेज श्रील प्रभुपाद के उन निर्देशों को प्रस्तुत करने का नम्र प्रयास है जो उन्होंने 'गवर्निंग बॉडी कमीशन' जी. बी. सी. को अन्तर्राष्ट्रीय कृष्ण भावनानृत संघ में दीक्षा प्रणाली जारी रखने के लिये छोडे थे। वैसे हम यहाँ ऐसे कई दस्तावेजों एवं लेखों को देखेंगे जो वरिष्ठ इस्कॉन भक्तों ने उपर्युक्त विषय पर लिखे हैं, परन्तु मुख्यतः हम जी. बी. सी. द्वारा प्रकाशित अधिकारिक दीक्षा पुस्तक 'गुरूस एंड इनिशिएशन इन इस्कॉन' इस्कॉन में गुरू एवं दीक्षा' जिसे आगे से हम जी. आई. आई. कहेंगे, और 'ऑन माय ऑर्डर अन्डर्स्टुड' लेख जो इस्कॉन कानुन सेक्शन १.१ में निर्दिष्ट है, को सदंर्भ में लेंगे ः

"जी. बी. सी. 'ऑन माय ऑर्डर अन्डर्स्टुड' लेख कौ अपनी पूरी मान्यता देकर उसे स्वीकार करती है। यह लेख गुरू परम्परा को जारी रखने के लिए श्रील प्रभुपाद की इच्छाओं को लेकर जी. बी. सी. के इस विषय में अंतिम सिद्धांत को स्थापित करता है। इस अंतिम सिद्धांत को इस्कॉन के कानून के रूप में पारित किया जाता है।" (जी. आई. आई. पृष्ठ १)

जी. आई. आई. में जी. बी. सी. का उद्देश गुरू, शिष्य एवं गुरू तत्व से संबंधित इस्कॉन के कानूनों को स्पष्ट करना एवं सदर्भ में लाना है जिससे इस विषय पर अंतिम सिद्धांत स्थापित हो सके। हम प्रार्थना करते हैं कि यह लेख भी इसी तथ्य के अनुरूप है।

पूर्ण स्पष्टता एवं आध्यात्मिक प्रमाणिकता के लिय हम जी. आई. आई. की एक – दो खामियों को परिप्रेक्ष्य में लाना चाहेंगे, जिनको यहाँ संबोधित नहीं किया गया था। वैसे कुछ विवादित विषयों के प्रत्युत्तर एवं हल प्रारम्भ में आघात या घबराहट पैदा कर सकते हैं, फिर भी हमें पुर्णरूपेण विश्वास है कि इन खामियों को इसी वक्त सुधारने से भविष्य में कम लोग भ्रमित एवं पतभ्रष्ट होंगे। पूर्व में भी इस्कॉन की गुरू प्रणाली निरीक्षण में आई है और कई बदलाव भी आये – कुछ चिन्ह निकाले गये, रीतियाँ कम हुई, विचारधाराएँ बदली गयी – सब बिना ज्यादा लम्बी उथल – पुथल के।

इसमें कोई संशय नहीं कि इस्कॉन इस धरती पर सबसे महत्वपूर्ण संस्था है। इसलिये हमें विशिष्ट सावधानी बरतनी होगी कि हम इस्कॉन के प्रबंधन एवं अध्यात्म संबंधी संस्थापकाचार्य द्वारा प्रतिपादित सारे प्रावधानों से लेश मात्र भी अलग न हों। वे तो सिर्फ यह चाहते थे कि बडी सावधानी और परिश्रम से उनके द्वारा बनायी गई संस्था का इसी प्रकार और विस्तार किया जाता रहे।

यह श्रील प्रभुपाद शताब्दी वर्ष है। इससे अच्छा और कौनसा समय हो सकता है जब हम श्रील प्रभुपाद के आन्दोलन को चलाने के अपने प्रयासों का बारीकी से निरीक्षण करें ?

यह हमारा प्रबल मत है कि इस्कॉन की वर्तमान गुरू प्रणाली को श्रील प्रभुपाद के अंतिम हस्ताक्षरयुक्त आदेश के अनुसार बदला जाये। यह आदेश दीक्षा संबंधित अंतिम आदेश था जो ६ जुलाई १६७७ (कृपया परिशिष्ट

देखे) को जारी किया गया था। प्रायः कुछ लोग हमसे प्रश्न करते है कि हम इसी पत्र पर इतना बल क्यों देते है? उत्तर मे हम जी•बे•सी• द्वारा प्रकाशित जी•आई•आई•पुस्तिका से ही दुहाराएँगेः

'तर्कशास्त्र मे, बाद के कथन से ज्यादा महत्वपूर्ण होते है।'
(जी•आई•आई•, पृष्ठ २५)

६ जुलाई का पत्र संपूर्ण संस्था को संबोधित था। इस्कॉन मे दीक्षा प्रणाली का यह इस तरह का अंतिम आदेश है अतः इसकी अपनी एक अलग ही श्रेणी है।यहाँ हम प्रदर्शित करेंगे कि इस पत्र को इस्कॉन में पुर्ण रूप से मानने और लागू करने से श्रील प्रभूपाद के बाकी उपदेशों का उल्लंघन नही होता।

न तो षड्यंत्र की अफवाहों से हमारा कुछ सरोकार है और न ही कुछ बचारे भक्तों की आध्यात्मिक मुश्किलों को उछालने की इच्छा। जो हो गया सो गया। वैसे हम पुरानी गलतियों से सीख सकते है, परन्तु हम भविष्य में प्रेम ,
सौहार्द और क्षमा के वातावरण की अपेक्षा करते है अतः हम पुरानी बदनामियों और गलतियों को उछालना नही चाहते। जहाँ तक हम लेखकों का मत है, इस्कॉन के ज्यादातर भक्त श्रील प्रभूपाद को संतुष्ट करने के लिय प्रयत्नशील है। इसलिए यह असम्भव है की कोई जानबुझकर संस्थापकाचार्य के सीधे आदेश का उल्लंघन कर रहा हो या यह करने पर दूसरों को मजबूर कर रहा हो। फिर भी, किसी प्रकार से, पिछले **16** वर्षों मे प्रबंधन एवं प्रचलन मे कुछ गलतियाँ इस्कॉन संघ मे आवृष्ट हो गयी है। इन गलतियों को दिखलाते हुए हम प्रार्थना करते है कि श्रीकृष्ण एवं श्रील प्रभुपाद की सेवा¯भक्ति करने मे श्रध्दालुाओं की अनावश्यक बाधाएँ दूर हो सके।

इस पुस्तिका में हम स्वयं श्रील प्रभुपाद द्वारा प्रकाशित हस्ताक्षरयुक्त दस्तावेज एवं वार्तालाप की प्रतिलिपियों को प्रमाण की तरह प्रस्तृत करेंगे¯प्रमाण जो स्वयं जी•बी•सी• भी प्रमाणिक मानते है।फिर हम इन प्रमाणों को विषय एवं संदर्भ मे रखकर यह देखेंगे कि उन्हे अक्षरशः लेना चाहिए या ऐसे दूसरे आदेश भी है जो इन आदेशों के मतलब को बदल देते है या उनके पालन मे किसी तरह का संशोधन करते है। हम उन संबंधित प्रश्नो की चर्चा पूरी करेंगें जो की इन प्रमाणों पर उठाये जाते हैं। हम ६जुलाई के पत्र को अक्षरशः लागू करने पर की गई आपत्तियों का भी प्रत्यूत्तर देंगे। अम्त में हम यह भी देखेंगे कि 'ऑफिशिएटिंग आचार्य सिस्टम' (अधिकारित्वक आचार्य प्रणाली), जो ६जुलाई के पत्र में बताई गई है, को किस तरह न्यूनतम अशांति से लागू किया जा सकता है।

हम अपने सारे तर्क पूर्ण रूप से श्रील प्रभुपाद के आदेशों और उपदेशों पर आधारित करेंगे जो उन्होंने अपनी पुस्तको, पत्रचार, प्रवचन एवं वार्तालाप में दिये थे। हम अनन्य वैष्णव वृन्द से आशिर्वाद चाहते है कि हम किसी को भी न तो अपराध पहुँचाएँ और न ही कृष्णकृपामूर्ति श्री श्रीमद् ए•सी• भक्तिवेदान्त स्वामी प्रभुपाद के मिशन को किसी प्रकार की क्षति।

प्रमाण

श्रील प्रभुपाद का यह स्वभाव चिर – परिचित था कि वे हर काम बडी सावधानी और पटुता से करते थे। उनकी एक विशेषता थी कि वे अपनी भक्तियुत सेवा के हर पहलू या अंग पर बडा ध्यान देते थे और कभी किसी प्रकार की लापरवाही नहीं करते थे। जिन लोगों ने उनकी अत्यधिक निकट से सेवा की थी उन्होंने प्रभुपाद जी का भगवान श्रीकृष्ण के प्रति असीम प्रेम और भक्ति को प्रमाणित किया था। उनका सम्पूर्ण जीवन उनके गुरू श्रील भक्ति सिद्धांत सरस्वती ठाकुर के आदेश का पालन करने के लिए न्यौछावर था। उन्होंने अपने गुरू के आदेश को अपना कर्तव्य समझा और इस कर्तव्य का पालन करने में वे हमेशा अद्‌भुत रूप से सर्तक एवं सजग रहे। इस्कॉन को स्थापित करने के कार्य में उन्होंने किसी भी प्रकार की कमहीनता एवं लापरवाही की संभावना नहीं छोडी। इस कार्य के लिए वे हमेशा अपने शिष्यों का मार्गदर्शन करते और गलतियों को सुधारते रहते थे। उनका यह आंदोलन ही उनका जीवन था। उन्होंने यहा तक कहा था कि इस्कॉन उनका जीवन है।

श्रील प्रभुपाद के व्यक्तित्व के इस पहलू को समझने से यह स्पष्ट हो जाता है कि श्रील प्रभुपाद इस्कॉन में भविष्य की दीक्षा प्रणाली जैसे अत्यधिक महत्वपूर्ण विषय को संदिग्ध, अस्पष्ट एवं अनिश्चित अवस्था में नही छोड सकते थे। वे इस विषय को किसी के वाद – विवाद या किसी के मन की कल्पना पर नही छोड सकते थे। ऐसा करना उनके स्वभाव के बिल्कुल विरूद्ध था। इसके अतिरिक्त हम यदि इतिहास मे देखें कि श्रील प्रभुपाद के अपने ही गुरू श्रील भक्ति सिद्धांत सरस्वती ठाकुर प्रभुपाद के मठ को क्या हुआ ? श्रील प्रभुपाद बार – बार इसकी और इशारा करते और बतलते थे कि इनके गुरू महाराज के मठ का नाश एक अवैध और अप्रमाणिक गुरू प्रणाली को स्थापित करने के कारण हुआ। इन सब बातें को ध्यान मे रखकर अब हम शुरूआत में ऐसे तथ्यों को देखेंगे जो सर्वसम्मत हैं ः

६ जुलाई १९७७ को अपना शरिर छोडने से पूर्व श्रील प्रभुपाद ने एक दीक्षा प्रणाली की रचना की, जिसमे उन्होंने 'आचार्य के प्रतिनिधियों' का प्रयोग किया था।उन्होंने आदेश दिया था कि इस 'ऑफिशिएटिंग आचार्य (आचार्य के प्रतिनिधि) प्रणाली को तुरन्त स्थापित किया जाये और 'हेंसफॉर्वर्ड' शब्द का प्रयोग करते हुए उन्होंने कहा कि यह प्रणाली इस समय से कार्यान्वित होगी। (परिशिष्ट में ६ जुलाई का पत्र पढे) इस प्रबन्ध संबंधित निर्देशिका (६ जुलाई के पत्र) को इस्कॉन के सारे जी. बी. सी. और टेंपल प्रेसिडेंट्स को भेजा गया था। इस पत्र मे यह आदेश था कि अब से नए शिष्यों को नामकरण, जपमाला और गायत्री मन्त्र आदि इन ग्यारह प्रतिनिधियों द्वारा दिए जाएँगे। षे ग्यारह प्रतिनिधि श्रील प्रभुपाद के प्रतिनिधि के रूप में उनकी ओर से कार्य करेंगे और जो नए शिष्य बनेंगें या दीक्षा लेगे वे श्रील प्रभुपाद के शिष्य होंगे। इस तरह श्रील प्रभुपाद ने उनकी ओर से दीक्षा ग्रहण करने का पूर्ण अधिकार इन ग्यारह व्यक्तियों को दिया था। उन्होंने यह भी स्पष्‌ किया था कि अब से इस मामले में उनसे कोई सम्मति न ली जाए। (इस प्रतिनिधियों के कर्तव्यों की ज्यादा जानकारी के लिए पढें शीर्षक 'ऋत्विक क्या है ?' पृष्ठ ८३)

श्रील प्रभुपाद के देह त्यागने के तुरन्त बाद ही जी. बी. सी. ने इस प्रणाली को स्थगित कर दिया। सन १९८३ के गौर पूर्णिमा तक इन ग्यारह प्रतिनिधियों ने 'जोनल आचार्य दीक्षा गुरू' की पदवी धारण कर ली और वे स्वतंत्र होकर अपनी ओर से दीक्षा देने लगे। इसे उन्होंने श्रील प्रभुपाद का तथाकथित आदेश बताते हुए कहा कि केवल

वे ग्यारह लोग ही श्रील प्रभुपाद के बाद दीक्षा देने का एकाधिकार रखते थे। कुछ सालों बाद इस ' जोनल आचार्य प्रणाली को कई चुनौतियों का सामना करना पडा, जिसके कारण उसे बदलना पड़ा। ' जोनल आचार्य ' प्रणाली को बदलकर श्रील प्रभुपाद की मूल प्रणाली की पुनःस्थापना करने के बजाय उन्होंने दर्जनों नए गुरूओं को शामिल कर लिया। इसके साथ ही उन्होनें एक ऐसी विस्तृत व्यवस्था की रचना की जिसमे पथभ्रष्ट और पतित गुरूओं से जूझने के लिए अनेक प्रकार के नियमों और कानूनों का उल्लेख था। अपनी इस नई व्यवस्था का समर्थन करने के लिए अब उन्होंने कहा कि श्रील प्रभुपाद द्वारा गुरू बनने के लिए दिया गया तथाकथित आदेश केवल ग्यारह व्यक्तियों के लिए ही नही था अपितु हर भक्त के लिए था जो भी दृढता से नियमों का पालन कर रहा हो और जिसे जी•बी•सी• से दो—तिराह (2/3) मत या वोट प्राप्त हो।

उपर्युक्त वर्णन कोई राजनीतिक मत नही वरन ऐतिहासिक तथ्य है
जो जी•बी•सी• सहित सर्वसम्मत है।

जैसा कि पहले कहा जा चुका है ६ जुलाई १६७७ का पत्र सारे जी•बी•सी और टेंपल प्रेसिडेंटस को भेजा गया था। आज तक यह आदेश इस्कॉन में दीक्षा के संबधित एकमात्र हस्तारक्षरयुक्त आदेश है। ६ जुलाई के आदेश पर टिप्पणी करते हुए हाल ही मे जयअद्वैत स्वामी ने कहा ः

'इस पत्र की प्रामाणिकता पर किसी प्रकार का प्रश्नचिन्ह नही लगाया जा सकता,... यह पत्र बहुत ही स्पष्ट रूप से ऋत्विक गुरू प्रणाली को स्थापित करता है।'
(जयअद्वैत स्वामी 'व्हेअर द ऋत्विक पीपल आर रोग '१९६६)

यह एक बहुत ही स्पष्ट आदेश है लेकिन इसको समझने में असमंजस्य का कारण है दो अवैध संशोधन जो बाद मे इस आदेश पर थोपे गये ः

संशोधन (अ) ः श्रील प्रभुपाद द्वारा इन प्रतिनिधियों या ऋत्विक की नियुक्ति केवल तत्कालीन थी और श्रील प्रभुपाद के देह त्यागने पर इसका अंत होना था।

संशोधन (ब) ः अपने प्रतिनिधित्व या ऋत्विक का दायित्व त्याग कर ये ऋत्विक अपने आप दीक्षा गुरू बन जाएँगे।दीक्षा देकर वे लोगों को अपना शिष्य बनाएँगे, श्रील प्रभुपाद का नही।

१६८७ में क्षेत्रिय आचार्य प्रणाली में जब संशोधन हुए, तब इन दों संशोधनों को बरकरार रखा गया। मजे की बात तो यह है कि ये दोनों संशोधन ही पुरानी प्रणाली का साहारा थे। हम उपर्युक्त (अ) एंव (ब) को अवैध संशोधन कहते है क्योंकि ये दोनों कथन न तो ६ जुलाई के पत्र में या इसके उपरान्त श्रील प्रभुपाद द्वारा जारी अन्य किसी दस्तावेज मे पाये जाते है।

जी. बी. सी. का लेख जी. आई. आई. पूर्ण रूप से इन अवैध संशोधनों का समर्थन करता है ः

"जब श्रील प्रभुपाद से पूछा गया कि आपके तिरोभाव उपरान्त दीक्षा कौन देगा, तो उन्होंने संकेत किया कि वे अपने कुछ शिष्यों को 'इंगित करेंगे' और उन्हें 'आदेश' देंगे। षह शिष्य श्रील प्रभुपाद के जीवनकाल में श्रील प्रभुपाद की ओर से एवं उसके उपरान्त एक 'सामान्य गुरू' की तरह अपनी ओर से दीक्षा देंगे।तब उनके शिष्य श्रील प्रभुपाद के परम शिष्य कहलाएँगे।" (जी. आई. आई. पृष्ठ १४)

बीते कुछ बरसों में ऐसे भक्तों की संस्था बढने लगी है जो इन उपर्युक्त मूल संशोधनों पर प्रश्न उठाने लगे हैं। ज्यादातर भक्तों के लिए यह हमेशा संदेहास्पद ही रहे हैं। अतः इस्कॉन के भीतर और बाहर एक किस्म का संशय एवं संदेह फैल गया है। आजकल कई पुस्तकें, लेख, ई–मेल एवं इंटरनेट वैब साइट इस्कॉन और उसके तथाकथित पथभ्रष्ट गुरू प्रणाली पर रोजमर्रा की जानकारी उपलब्ध कराते हैं। जो भी व्यक्ति श्रील प्रभुपाद के आंदोलन को हृदय से चाहता है वो ऐसे किसी भी लेख को, जो इस समस्या का समाधान लाने में सहायता करता है, उपयुक्त ही मानेगा।

श्रील प्रभुपाद ही इस्कॉन के समस्त सदस्यों के परम अधिपति हैं। वस्तुतः हरके व्यक्ति इस बात का समर्थन करता है। इस विषय पर दिये गये उनके हर आदेश का हमें पालन करना ही होगा। षह हम सबका कर्तव्य है।

६ जुलाई का आदेश ही केवल एक ऐसा लिखित अधिकारिक कथन है जो कि संस्था के संपूर्ण वरिष्ठ भक्तों को भविष्य की दीक्षा प्रणाली के विषय पर भेजा गया था। इस बात का भी समस्त सदस्य समर्थन करते हैं।

जी. आई. आई में ६ जुलाई के पत्र के अस्तित्व को दर्शाया ही नहीं गया है। यह एक आश्चर्यजनक तथ्य है, क्योंकि यह पत्र ही एकमात्र स्थान है जहाँ प्रथम ग्यारह 'आचार्यो' का नाम पाया जाता है। यह भूल आश्चर्यजनक है, विशेषतः जब जी. आई. आई संपूर्ण गुरू प्रणाली विषय पर 'अंतिम सिद्धांत' देने का दावा करती है।

अब हम जरा गौर से ६ जुलाई के आदेश को देखेंगे कि क्या उसमें उपर्युक्त अवैधिक संशोधनों (अ) एवं (ब) का समर्थन मिलता है ः

<u>आदेश प्रधान में ः</u>

जैसा पहले बतलाया गया था, ६ जुलाई के पत्रानुसार ऋत्विक प्रणाली 'हेन्सफॉर्वर्ड' लागू की जानी चाहिये थी। श्रील प्रभुपाद के द्वारा पूर्व प्रचलन में एवं अंग्रेजी भाषानुसार इस विशिष्ट शब्द 'हेन्सफॉर्वर्ड' का एक ही अभिप्राय है – 'इस समय से'। शब्दकोश में हर शब्द के कई मतलब हो सकते हैं, परन्तु इस शब्द का एक ही मतलब है। इसलिये अस्पष्टता का कारण ही नहीं बनता।

फेलियो के अनुसार बाकी ८६ बार जहाँ श्रील प्रभुपाद ने ' हेन्सफॉर्वर्ड ' शब्द का प्रयोग किया है, किसी ने भी आपत्ति नही उठायी कि इस शब्द का ' इस समय से ' के अलावा कोई और भी अभिप्राय हो सकता है। 'इस समय से ' का मतलब यह नही लगा सकते कि ' इस समय से जब तक मै चला न जाऊँ।इसका सीधा मतलब होता है ' इस पत्र में एक बार भी निर्दिष्ट नही है कि यह प्रणाली श्रील प्रभुपाद के तिरोभाव उपरान्त रूक जानी चाहिये। और न ही कि यह प्रणाली श्रील प्रभुपाद की सशरीर उपस्थिति में ही लागू होगी। प्राय ः एक तर्क प्रस्तुत किया जाता है कि समस्त ऋत्विक प्रणाली केवल एक शब्द ' हेन्सफॉर्वर्ड ' पर ही निर्भर है। यह अप्रमाणिक तर्क है क्योंकी अगर हम इस शब्द को पत्र में से निकाल भी दें, तो भी कुछ बदला नही। श्रील प्रभुपाद ने एक प्रणाली ापने तिरोभाव से ४ माह पूर्व स्थापित की थी। इसके उपरान्त उन्होंने इस प्रणाली को रोकने संबंधी कोई निर्देश नही दिया। ऐसे किसी विपरीत

आदेश के अभाव में इसप त्र को ही श्रील प्रभुपाद का दीक्षा प्रणाली विषय पर अंतिम आदेश मानना होगा और इसलिए इसको वर्तमान में भी पालन करना होगा।

अन्य अनुकूल कथन ः

६ जुलाई के पञोपरांत के ही कुछ दिनों में श्रील प्रभुपाद एंव उनके सचिव के कई ऐसे कथन थे जो कि यह स्पष्ट दर्शाते है कि ऋत्विक प्रणाली बिना अवरोध के जारी रहनी थी।

' भविष्य में लागू होने वाली दीक्षा प्रणाली ' (११ जुलाई)

'ऋत्विक बनते रहो एंव मेरे आदेश पर कार्य करो' (१३ जुलाई)

'ऋत्विक बनते रहो एंव मेरी आरि से कार्य करो' (३१ जुलाई)

इन दस्तावेजों में ' हेन्सफॉर्वर्ड ' शब्द के साथ ' भविष्य में, बनते रहो ' जैसे शब्दों का प्रयोग यह दर्शता है कि ऋत्विक प्रणाली स्थायी रहनी थी।

श्रील प्रभुपाद द्वसरा ऐसा कोई कथन नही है जो बात का अभास भी करता हो कि यह ऋत्विक प्रणाली उनके देह त्यागने के बाद रोक दी जानी चाहिए थी।

तदनंतर दिए गए आदेश ः

ऋत्विक प्रणाली के स्थापित होने और उसके कार्यान्वित होने के बाद श्रील प्रभुपाद ने कभी भी इस प्रणाली को बंद करने का आदेश नही दिया था। उन्होंने यह भी नही कहा कि मेरे देह त्यागने के पश्चात् इस प्रणाली को बंद कर दिया जाए। इसके विपरीत शायद श्रील प्रभुपाद को उस बात का आभास था कि ऐसा कुछ हो सकता है इसलिए उन्होंने अपनी अंतिम वसीयत की शुरूआत में लिखा था कि इस्कॉन की वर्तमान प्रबन्धन प्रणाली (मैनेजमेंट सिस्टम) को इसी तरह जारी रखा जाए और इसमे कोई बदलाव ना हो। अपनी भोतिस् देह को त्यागने

के सिर्फ ६ दिन पूर्व श्रील प्रभुपाद ने अपने कोडिसिल (वसीहत में संशोधन) में भी इस तथ्य को बदला नहीं। यदि श्रील प्रभुपाद के मन में यह विचार था कि ऋत्विक प्रणाली को बन्द कर दिया जाए तो उनके लिए यह सही अवसर था। (कृपया परिशिष्ट देखें) प्रतिनिधियों (ऋत्विक) का उपयोग कर दीक्षितों को नाम इत्यादि देना यह किस प्रकार प्रबन्धन प्रणाली (मैंनेजमेट सिस्टम) ही है इसको हम निम्नलिखित वर्णन से समझ सकते है।

सन १९७७ में जी. सी. बी. ने एक प्रस्ताव पारित किया था ः 'प्रबंधन संबंधी सारे मामले में केवल जी. बी. सी. ही उत्तरदायी होगी।' निम्नलिखित उस वर्ष के प्रबंधन संबंधित कुछ विषय हैं जिनको जी. बी. सी. ने अपने हाथ में लिया था –

'यदि किसी को हरीनाम दीक्षा लेनी है तो उसे कम से कम ६ माह तक पूर्णकालिक सदस्य होना चाहिए। ब्राह्मण दीक्षा लेने के लिए हरिनाम दीक्षा के बाद कम से कम एक साल का समय होना चाहिए'।
(नियम नं. ६. २७मार्च,१९७७)

'संन्यास दीक्षा की विधि'। (नियम नं. २. २७मार्च,१९७७)

यह प्रस्ताव स्वयं श्रील प्रभुपाद द्वारा अनुमोदित किया गया था। यह हमें बदलाता है कि दीक्षा की विधि भी प्रबंधन प्रणाली का ही एक अंग है। यदि संपूर्ण दीक्षा विधि को श्रील प्रभुपाद द्वारा प्रबंधन प्रणाली का ही एक अंग माना जाता है तब दीक्षा विधि के एक अंग 'आध्यात्मिक नामकरण प्रतिनिधियों (ऋत्विक) द्वारा करवाना' यह भी प्रबंधन प्रणाली के अंतर्गत ही आता है। इसे भी एक प्रबंधन प्रणाली कहकर संबोधित किया जाना चाहिए।

फलस्वरूप ऋत्विक द्वारा दीक्षा देने की प्रणाली को बदलना श्रील प्रभुपाद की अंतिम वसीयत का उल्लंघन है।

एक और आदेश जो ऋत्विक प्रणाली को जारी रखने का सूचक है श्रील प्रभुपाद ने अपनी वसीयत में लिखा था। इस आदेश के अनुसार भारत की स्थायी जायदादों (प्रोपर्टी) के शासकीय अध्यक्ष (एक्जीक्यूटिव डाइरेक्टर) केवल उनके दीक्षित शिष्यों में से ही चुने सकते है।

'यदि उत्तराधिकारी अध्यक्ष (सक्सेसर डाइरेक्टर) या अध्यक्षों को नियुक्त करना हो तो उसे अन्य अध्यक्षगण मिलकर नियुक्त कर सकते हैं लेकिन जो नया अध्यक्ष होगा वह मेरा दीक्षित शिष्य होना चाहिए।'
(श्रील प्रभुपाद की वसीयत, ४जून,१९७७)

यह तब ही हो सकता है जब श्रील प्रभुपाद के तिरोभाव के बाद ऋत्विक प्रणाली को बनाये रखा जाए। यदि ऐसा न हुआ तो अध्यक्ष बनने लायक लोग खत्म हो जाएँगे।

इसके अतिरिक्त ६ जुलाई के बाद जब भी श्रील प्रभुपाद ने दीक्षा की बात की तो उन्होंने ऋत्विक गुरू प्रणाली के अनुरूप ही की। उन्होंने कभी ऐसा संकेत नहीं दिया कि ऋत्विक गुरू प्रणाली को उनके देह त्यागने

के बाद बंद कर दिया जाए या कुछ भक्त दीक्षा गुरू का उत्तरदायित्व लेने के लिए तैयार हो जाएँ।जहाँ तक सीधे प्रमाणों का सवाल है वे जी.बी.सी.के उपरोक्त संशोधनों (अ)और (ब) का बिल्कुल समर्थन नही करते। ीकन्तु यही संशोधन आज इस्कॉन की वर्तमान गुरू प्रणाली का आधार है। यदी इन संशोधनों को गलत सिद्ध किया जाए तो
जी.बी.सी। को इस विषय पर गंभीरता से पुनर्विचार करना पड़ेगा।

उपर्युक्त वर्णन इस विषय को पूर्णरूपेण स्पष्ट करता ही। पहलेपहल श्रील प्रभुपाद का आदेश फिर इसके अनुरूप एवं अनुकूल आदेश और तदनंतर दिए गए आदेश ये सभी केवल ऋत्विक प्रणाली को जारी रखने का समर्थन करते है। यह सर्वसम्मत है कि श्री प्रभुपाद ने अपने देह त्यागने के पश्चात ऋत्विक प्रणाली को बंद करने के लिए किसी प्रकार का आदेश नही दिया था।यह भी सर्वसम्मत है की श्रील प्रभुपाद ने ऋत्विक प्रणाली को ६ जुलाई के बाद से कार्यान्वित होने के लिए स्थापित किया था। अतः यह ऐसी स्थिति है जब आचार्य ने —

(क) ऋत्विक प्रणाली को लागू करने का स्पष्ट आदेश दिया है।

(ब) देह त्यागने पर ऋत्विक प्रणाली को बंद करने का आदेश नही दिया।

परिणामस्वरूप यदि कोई इस आदेश का पालन करना बंद करता है तो उसके इस कार्य का आधार पूछा जा सकता है। यदि श्रील प्रभुपाद ने इस विषय में कोई आदेश दिया था तो वह था ऋत्विक प्रणाली का पालन करन के लिए।उन्होंने इस प्रणाली को स्थगित करने के लिए कभी नही कहा। न ही उन्होंने कभी कहा कि इसका पालन केवल उनकी सशरीर उपस्थिति में ही हो। प्रमाण

दिखलाने का भार अपने आप ही ऊन लोगों पर पड़ता है जो अपने आचार्य द्वारा स्थापित इस प्रणाली को स्थगित करना चाहते हो। कोई भी मनमाने ढंग से गुरू के आदेश का उल्लंघन नही कर सकता ः

'———— विधी यह है कि तुम गुरू के आदेश को बदल कर नही सकते'।
(श्रील प्रभुपाद चैतन्य चरितामृत प्रवचन, २१/१२/७३, लॉस एंजिल्स)

एक शिष्य को अपने गुरू के सिधे आदेश का पालन करते रहने के लिए गवाही नही देनी पड़ती। यही शिष्य होने का अर्थ हे।

' जब कोई शिष्य बनता है तो वह अपने गुरू को आदेश का उल्लंघन नही कर सकता।'
(श्रील प्रभुपाद प्रवचन, ११/२/७५, मेक्सिको)

चूँकि श्रील प्रभुपाद के देह त्यागने पर ऋत्विक प्रणाली को बन्द करने के संबंध मे कोई सीधा या स्पष्ट प्रमाण नही है इसलिए उपर्युक्त संशोधनों को सिद्ध करने के लिए अप्रत्यक्ष प्रमाण ही देने पड़ेंगे। अप्रत्यक्ष प्रमाणों का प्रश्न तब उठता है जब किसी आदेश को अक्षरशः लेना विशेष परिस्थितियों में ठीक नही बैठता। तब ऐसी परिस्थितियों को अधार बनाकर आदेश के अक्षरशः अर्थ को बदला जा सकता है। आइए अब हम ६ जुलाई के आदेश के प्रसंग और उससे घिरी परिस्थितियों का अध्ययन करे और देखे कि क्या उस समय ऐसी परिस्थितियाँ थी ? यह भी देखेंगे कि क्या जी.बी.सी के संशोधनों (अ) एंव (ब) को सिद्ध करने के प्रमाण मिलते है।

अंतिम आदेश के स्वभाव और प्रसंग से संबंधित आपत्तियां

१. "यह पत्र स्पष्ट दर्शाता है कि ऋत्विक प्रणाली सिर्फ श्रील प्रभुपाद की सशरीर उपस्थिति में ही लागू होनी थी।"

पत्र में ऐसा कोई भी कथन नहीं है जो यह दर्शाता हो की यह आदेश श्रील प्रभुपाद की सशरीर उपस्थिति में ही लागू होना था। वस्तुतः जो जानकारी यहाँ दी गई है वह तो श्रील प्रभुपाद के तिरोभाव के बाद ऋत्विक दीक्षा प्रणाली को बरकरार रखने का समर्थन करती है। ६ जुलाई के पत्र में यह ३ बार कहा गया है कि दीक्षा लेने वाले श्रील प्रभुपाद के शिष्य होंगे। वर्तमान गुरू प्रणाली को प्रमाणिक सिद्ध करने के लिये जी. बी. सी. बारम्बार यह तर्क देती है कि श्रील प्रभुपाद के अनुसार यह एक अभेद्य कानून है कि गुरू की उपस्थिति में दूसरा कोई दीक्षा नहीं दे सकता। अतः इस बात पर जोर देने की भविष्य के सारे दीक्षित शिष्य श्रील प्रभुपाद के ही शिष्य होंगे, दर्शाता है कि यह आदेश तभी लागू होना था जब इन शिष्यों के प्रभुत्व पर सवाल उठ सकता था – यानी कि श्रील प्रभुपाद के तिरोभाव पर।

अंतिम कुछ वर्षों में श्रील प्रभुपाद अपने कुछ प्रतिनिधियों से मालाओं पर जाप, अग्नि होम, गायत्री मंत्र आदि करवा रहे थे। किसी ने भी उन शिष्यों के प्रभुत्व पर उँगली नहीं उठायी थी। ६ जुलाई के पत्र की शुरूआत में यह बहुत ही जोर देकर कहा गया है कि श्रील प्रभुपाद द्वारा यहाँ नियुक्त भक्त उनके 'प्रतिनिधि' होंगे।

इस पत्र से सिर्फ एक ही नवीन पद्धति उभर कर आयी – इन प्रतिनिधियों की औपचारिक रूप से नियुक्ति। इससे क्या यह संशय हो सकता है कि यह उनके पूर्ण दीक्षा गुरू बनने का स्पष्ट आदेश था ? जब तक श्रील प्रभुपाद सशरीर उपस्थित थे तब तक तो वह खुद यह देख सकते थे कि कोई और उनके शिष्यों पर प्रभुत्व न जमाए। अतः श्रील प्रभुपाद जब इस पत्र में शिष्यों के अपने प्रभुत्व पर जोर दे रहे हैं तो यह स्वतः ही दर्शाता है की यह प्रणाली उनके पदार्पण के उपरान्त के लिए भी थी। जैसा कि पहले कहा जा चुका है, यह दृष्टि स्थिति इस पत्र में ३ बार ठोक – ठोक कर कही है – एक ऐसा पत्र कि स्वंय छोटा और संक्षिप्त है।

'एक चीज पर जब तीन बार जोर दिया जाये, समझ लो की वही अंतिम है।'
(श्रील प्रभुपाद प्रवचन, २१/११/६८, लॉस एंजिल्स में)

६ जुलाई के पत्र में एक कथन है कि नये दीक्षित शिष्यों का नाम 'श्रील प्रभुपाद को' भेजना होगा। क्या इसका यह मतलब है कि यह प्रणाली श्रील प्रभुपाद की सशरीर उपस्थिति में लागू होनी थी ? कुछ भक्तों ने तर्क दिया है कि क्योंकि अब हम श्रील प्रभुपाद को यह नाम भेजने में असमर्थ हैं, अतः ऋत्विक प्रणाली अवैधानिक है।

उत्तर में, श्रील प्रभुपाद को नाम भेजने का कारण था कि वे नाम उनकी 'इनिशिएटेड डिसाइपल्स' (दीक्षित शिष्य) किताब में संकिलित हो जाएँ। ७ जुलाई के वार्तालाप (कृपया परिशिष्ट देखें) से हमें यह जानकारी मिलती

है। श्रील प्रभुपाद के सचिव इस पुस्तक में नाम लिख रहे थे, खेद श्रील प्रभुपाद नही। इसका एक प्रमाण हमे एक अन्य पत्र से

उजागर होता है। इसमे तमाल कृष्ण गोस्वामी हंसदूता को उनके ऋत्विक कर्तव्य बता रहे है।

'——— तुम्हें उनके नाम श्रील प्रभुपाद की 'इनिशिएटेड डिसाइपल्स' (दीक्षित शिष्य) पुस्तिका में सम्मिलित करने ले लिए भेजने होंगे।'

(तमाल कृष्ण गोस्वामी द्वारा हंसदूता को पत्र,१०/७/७७)

यहाँ स्वयं श्रील प्रभुपाद को नाम भेजने की नही कही गयी है। यह प्रणाली श्रील प्रभुपाद के सशरीर पदार्पण के उपरान्त भी सरलता से चल सकती है। अन्तिम आदेश में कही भी ऐसा कथन नही आता कि 'इनिशिएटेड डिसाइपल्स' (दीक्षित शिष्य)किताब के श्रील प्रभुपाद से अलग होने पर दीक्षा देना ही रोक देना होगा।

दुसरा उत्तर यह है कि ने दीक्षित शिष्यों का नाम श्रील प्रभुपाद को भेजने का कार्य दीक्षा के बाद का कार्य है। शिष्य का नाम दीक्षा उपरान्त ही भेजा जा सकता है।दीक्षा उपरान्त प्रणाली के औपचारिकतावश, दीक्षा पूर्व प्रणाली या स्वयं दीक्षा प्रणाली में न तो परिवर्तन किया जा सकता है और न ही रोका सकता। (क्योंकि दीक्षा विधी पूर्ण होने के पूर्व ही ऋत्विक का कार्य समाप्त हो चुका होता है।) जब तक श्रील प्रभुपाद को दीक्षा उपरान्त नाम भेजने का प्रश्न उठेगा, तब तक दीक्षा विधि पूर्ण हो चुकी होती है।अतः नाम भेजने या न भेजने से दीक्षा प्रणाली पर कोई फर्क नही पड़ता।

श्रील प्रभुपाद को नाम भेजना, अगर दीक्षा प्रणाली का महत्त्वपूर्ण हिस्सा होता तो श्रील प्रभुपाद के पदार्पण के पूर्व ही यह प्रणाली किसी या तो बंद हो गई होती या फिर हर समय बंद होने का डर रहता।ज्यादातर भक्त जानते थे कि श्रील प्रभुपाद किसी भी वक्त अपना शरीर छोड़ने वाले है।अतः यह आदेश जारी होने के उपरान्त प्रथम दिन से ही यह ड़र रहता कि इन नामों का भेजने के लिये कोई नही रहेगा।दूसरे शब्दों में,उदाहरण के लिये एक शिष्य द्वारा इस प्रणाली से दीक्षा लेने के उपरान्त अगर एक दिन बाद ही श्रील प्रभुपाद इस धरती से चले जाते उपर्युक्त तर्क अनुसार यह शिष्य दीक्षित नही होता क्योंकि पोस्ट समय से नही पहुँच सकी। हमे श्रील प्रभुपाद की पुस्तकों में कही यह उपदेश नही मिलता कि जन्म—जन्मातर से मिल रही दिव्य दीक्षा, डाकघर की मर्जी अनुसार रूक सकती है।स्पष्ट तो यह है कि आज भी श्रील प्रभुपाद की 'इनिशिएटेड डिसाइपल्स' (दीक्षित शिष्य) किताब में नव दीक्षित शिष्यों के नाम सम्मिलित किए जा सकते है।फिर इस पुस्तिका को समयानुसार श्रील प्रभुपाद को अर्पित किया जा सकता है।

२. '' यह पत्र निश्चित रूप से यह नही कहता कि 'यह प्रणाली केप पदार्पण के बाद जारी रहनी चाहिए'।अतः इस प्रणाली को श्रील प्रभुपाद के तिरोभाव उपरान्त बंद करना उचित था।'

कृपया निम्मलिखित तर्कों पर विचार करें –

(क) ६ जुलाई का पत्र यह नहीं कहता कि 'ऋत्विक प्रणाली को श्रील प्रभुपाद के तिरोभाव उपरान्त खत्म कर देना चाहिए'। इसके बावजूद प्रभुपाद के देह त्यागने के तुरन्त बाद इसको खत्म कर दिया गया।

(ख) पत्र यह भी नहीं कहता कि 'ऋत्विक प्रणाली को श्रील प्रभुपाद की सशरीर उपस्थिति के दौरान चलाया जाना चाहिए'। फिर भी इसे श्रील प्रभुपाद की सशरीर उपस्थिति में चलाया गया।

(ग) पत्र यह भी नहीं कहता कि 'ऋत्विक प्रणाली को केवल श्रील प्रभुपाद के देह त्यागने तक ही चलाना जाना चाहिए'। फिर भी इसे

उनके देह त्यागने तक ही चलाया गया।
(घ) पत्र यह भी नहीं कहता कि 'ऋत्विक प्रणाली बंद होनी चाहिए'। फिर भी इसे बंद कर दिया गया।

सारांश में, जी. बी. सी. निम्नलिखित बातों पर अडे हुए हैं –
– ऋत्विक प्रणाली बंद होनी चाहिए।
– ऋत्विक प्रणाली को श्रील प्रभुपाद के तिरोभाव उपरान्त बंद होना चाहिए।

इन दो बातों में कोई भी बात ६ जुलाई के पत्र में नहीं पाई जाती, न ही किसी अन्य हस्ताक्षरयुक्त आदेश में ये बातें पाई जाती हैं। इसके बावजूद ये दोनों संशोधन 'जोनल आचार्य' (क्षेत्रीय आचार्य) प्रणाली और वर्तमान में चलित 'मल्टिपल आचार्य सक्सेसर सिस्टम' (बहुल आचार्य परम्परा प्रणाली) का आधार हैं। अब से हम 'मल्टिपल आचार्य सक्सेसर सिस्टम' को म. आ. स. सि. से संबोधित करेंगे। (यहाँ आचार्य शब्द का प्रयोग हम दीक्षा गुरू के समान करेंगे।)

यह अनुचित तर्क है कि क्योंकि पत्र में उसके चलने की अवधि का विशेष रूप से उल्लेख नहीं है अतः उचित होगा कि देह त्यागने के तुरन्त बाद ही उसे बंद कर देना चाहिए। इसी तर्क का प्रयोग कर यह भी कहा जा सकता है कि यह पत्र यह भी नहीं कहता कि इसका पालन ६ जुलाई के बाद किया जाए अतः इस पत्र का पालन कदाचित् नहीं होगा चाहिए था। हम यह भी मान सकते हैं कि 'हेन्सफॉर्वर्ड' अर्थात् 'इस समय से' का तात्पर्य केवल उस दिन के अम्त तक के लिए था क्योंकि पत्र यह भी नहीं कहता कि उसका पालन १० जुलाई तक भी हो। अतः इसको उसी दिन के अंत में ही पालन करना बंद कर देना चाहिए था। यह माग की जाती है कि ६ जुलाई के पत्र को केवल पूर्वघोषित अवधि में ही चलाना जाना चाहिए। लेकिन असल में हुआ यह कि इस पत्र को १२६ दिनो तक अर्थात् चार महिनों तक चलने दिया गया। इन १२६ दिन या चार माह की अवधि का उल्लेख भी इस पत्र में नहीं है लेकिन सभी लोग इस पत्र के चार महीने तक ही चलने से संतुष्ट हैं।

यह 'हेन्सफॉर्वर्ड' का अर्थ 'अब से अनिश्चित काल के लिए' ना लिया जाए तो ऋत्विक प्रणाली को ६ जुलाई के बाद किसी भी समय बंद किया जा सकता था। इसको बंद करने के लिए केवल श्रील प्रभुपाद के देह त्यागने का दिन ही क्यों चुना गया?

श्रील प्रभुपाद ने ८६ बार इस 'हेन्सफॉर्वर्ड' का प्रयोग किया।उनके इस शब्द के प्रयोग या अंग्रेजी के इतिहास में ऐसा उदाहरण नही मिलता जहाँ इस शब्द का निम्नलिखित मतलब हो ः

' जिस व्यक्ति ने यह आदेश दिया है उसके जीवनकाल तक ही या उसकी मृत्यु ही '

फिर भी वर्तमान सोच के अनुसार ६ जुलाई के पत्र से इस शब्द का मतलब यही निकाला गया है। जबकि पत्र केवल यही कहता है कि ' इस समय से ' इस प्रणाली को लागू किया जाए।फिर इसको रोक क्यों दिया गया ?

३. " कुछ आदेशों का पालन हम श्रील प्रभुपाद के प्रदार्पण के प्रभुपादए के बाद नही कर सकते, अतः यह निष्कर्ष निकलता है कि ऐसे आदेश केवल उनके जीवनकाल तक के लिए ही थे। उदाहरणार्थ किसी को नियुक्त कर उससे कहा जा सकता है कि 'इस समय से' (हेन्सफॉर्वर्ड) तुम श्रील प्रभुपाद को रोज मालिश दो। शायद हो सकता है ऋत्विक बनने का आदेश कुछ इसी तरह का हो ?"

यदि किसी आदेश का पालन करना असंभव हो जाए तो उस आदेश को पालन करने का प्रश्न ही नही उठता।उदाहरणार्थ श्रील प्रभुपाद को उनके पदार्पण उपरान्त मालिश देने का प्रश्न ही नही उठता।एक शिष्य का यह कर्तव्य है कि वह तब तक किसी आदशि का पालन करता रहे जब तक उस आदेश का पालन असंभव ना हो जाए या फिर गुरू अपने आदेश को ही बदल न दे।अब प्रश्न यह उठता है कि ऋत्विक प्रणाली को उसके रचयिता श्रील प्रभुपाद की अनुपस्थिति में भी चलाया जा सकता है?

वास्तव में ऋत्विक प्रणाली को इस तरह बनाया गया था कि उसमें श्रील प्रभुपाद की किसी शारीरिक येगदान की जरूरत न थी।यदि ऋत्विक प्रणाली को श्रील प्रभुपाद के बाद भी चलने दिया जाता तो भी इस प्रणाली के कार्यक्रम मे कोई फर्क नही आता।६ जुलाई के बाद ऋत्विक प्रणाली इस तरह चल रही थी मानो श्रील प्रभुपाद इस संसार से चले गए हों।परिणामस्वरूप हम यह नही कह सकते कि श्रील प्रभुपाद केप प्रदार्पण के बाद ऋत्विक प्रणाली को कार्यान्वित नही किया जा सकता या ऋत्विक प्रणाली सफलता से कार्य नही कर सकता क्योंकि श्रील प्रभुपाद की शारीरिक अनुपस्थिति इस ऋत्विक प्रणाली के कियाशील रहने मे कोई बाधा नही डालती। इस ऋत्विक प्रणाली को श्रील प्रभुपाद के देह त्यागने के बाद कार्य करने के लिए ही बनाया गया था अतः ऐसी स्थिति आने से यह प्रणाली अपंग नही हो जाती।

४. " यह आदेश केवल एक पत्र द्वारा जारी किया गया था, किताबों से नही। अतः हम इसका अप्रत्यक्ष अर्थ निकाल सकते है "

यहाँ लैटर्स वर्सस बुक्स (पत्र बनाम पुस्तक) तर्क लागू नही होता क्योंकि यह एक साधारण पत्र नही है।साधारणायता श्रील प्रभुपाद किसी एक शिष्य के विशेष प्रश्न के उत्तर में या किसी को विशेष मार्ग दर्शन देने के

लिए या सुधारने के लिए पत्र लिखते थे; क्योंकि ऐसे पत्र किसी एक भक्त के व्यक्तिगत प्रश्न, अवस्था या पथभ्रष्टता के कारणवश लिखे गये थे, अतः उनका भिन्न – भिन्न भावार्थ निकाला जा सकता है। श्रील प्रभुपाद के पत्रों में पाये गये समस्त उपदेशों को सर्वस्व लागू नहीं किया जा सकता। (उदाहरणतया – एक भक्त को, जिन्हें मिर्च – मसाला भा नहीं रहा था, उन्होंने सलाह दी कि वे सिर्फ नमक और हल्दी से खाना पकाएँ। स्वभावतया इस सलाह को पूरे आंदोलन में लागू नहीं किया जा सकता) परन्तु, दीक्षा प्रणाली से इस अंतिम आदेश का और कोई अर्थ नहीं लगाया जा सकता; क्योंकि यह पत्र किसी एक शिष्य के व्यक्तिगत प्रश्न, अवस्था या गलती सुधारने हेतु नहीं लिखा गया था। ६ जुलाई का पत्र संपूर्ण संस्था की एक प्रबंधन प्रणाली बनाता है जिसे आंदोलन के समस्त अतिवरिष्ठ भक्तों को लिखा गया था।

जब भी श्रील प्रभुपाद कोई महत्त्वपूर्ण आदेश जारी करते थे और चाहते थे कि कोई उसका गलत अर्थन निकाले तब वे उसे लिखवाते, अनुमोदित करते एवं उसे समस्त अतिवरिष्ठ भक्तों को भेज देते थे। ६ जुलाई का पत्र भी इसी श्रेणी में आता है। उदाहरण के लिये, उन्होंने एक पत्र २२ अप्रैल १९७२ को 'ऑल टेम्पल प्रेसिडेन्ट' (समस्त टेम्पल प्रेसिडेन्ट) को भेजा था-

क्षेत्रीय सचिव का कार्य है अपने क्षेत्र के समस्त मंदिरों का निरिक्षण करना कि वहाँ समस्त आध्यात्मिक नियमों का पालन उचित ढंग से हो रहा है या नही। अन्यथा, हर एक मंदिर स्वतंत्र एवं स्वावलम्बी होगा।'

(श्रील प्रभुपाद का पत्र समस्त टेम्पल प्रेसिडेन्ट को,२२/४/७२)

जब भी श्रील प्रभुपाद ने कोई महत्त्वपूर्ण आदेश जारी किया, तो हर बार उन्होंने नई किताब जारी नही की। चाहे वह आदेश उनके शारीरिक प्रस्थान के बाद भी जारी रहना था। अतः इस आदेश को जिस रूप में जारी किया गया था, उससे न तो भिन्न भावार्थ निकल सकता है और न ही इसकी प्रामाणिकता घट जाती है।

७. "संभवतः इस आदेश को किसी विशेष अवस्था के कारण जारी किया गया था जो श्रील प्रभुपाद के शारीरिक प्रस्थान उपरान्त लागू नही होती।"

अगर ऐसी अवस्था विदयमान भी होती तो श्रील प्रभुपाद ने उस पत्र में या सलग्न किसी दस्तावेज मं उसको प्रकट किया होता। श्रील प्रभुपाद अपने निर्देशों को उचित ढंग से लागू करवाने के लिये सदैव जरूरतानुसार जानकारी देते थे। निश्चित रूप से उनकी कार्य–शैली इस पर निर्भर नही थी कि उनके टेंपल प्रेसिडेन्ट यौगिक सिद्धि प्राप्त हो जो कि अधूरे एवं अपूर्ण आदेश जारी करने पर टेलीपैथी (मानसिक संक्रमण) द्वारा उन्हें समझ ले। उदाहरणतया, अगर श्रील प्रभुपाद चाहते थे कि ऋत्विक प्रणाली उनके शारीरिक प्रस्थान उपरान्त रूक जाये तो वह ये १० शब्द ६ जुलाई के पत्र में अवश्य सम्मिलित करते, 'यह प्रणाली मेरे शारीरिक प्रस्थान उपरान्त रोक दी जानी चाहिये।' बल्कि पत्र पर एक सरासरी निगाह डालने से ही हमे दिखता है कि वे चाहते थे कि यह प्रणाली हेन्सफॉवर्ड ६ (इस समय से) चलती रहे। (कृपया परिशिष्ट देखे)

कई बार यह तर्क भी दिया जाता है कि केवल श्रील प्रभुपाद की बीमारी के कारणवश यह ऋत्विक प्रणाली स्थापित की गयी थी।

भक्तगण श्रील प्रभुपाद की बीमारी की स्थिति से भिज्ञ या अभिज्ञ हो सकते थे, परन्तु वे एक पत्र को देखकर जिसमें उनकी बीमारी का जिर्क भी न था, कैसे ज्ञात कर सकते थे कि उनकी बीमारी ही इस पत्र को लिखने का एकमात्र कारण है। श्रील प्रभुपाद ने कब ऐसा कहा कि उनके हर आदेश को लागू करते वक्त उनकी वर्तमान 'मेडिकल रिपोर्ट' (स्वास्थ्य का विवरण) का निरीक्षण करके आदेश का भावार्थ निकाला जाये। इस पत्र के प्रतिग्राहक यह भी सामान्यतः मान सकते थे कि यह दीक्षा प्रणाली पर एक स्पष्ट आदेश है जो अक्षरक्षः लागू किया जाना चाहिऐ।

श्रील प्रभुपाद ने पूर्व में ही घोषणा कर दी थी कि वे अपना शरीर छोड़ने हेतु वृन्दावन जा रहे हैं। त्रिकालज्ञा होने के नाते अत्यन्त सम्भवतः उन्हों मालूम ही होगा कि वे ४ माह में इस धरती से प्रस्थान करने वाले है। अपनी अनुपस्थिति में अपने आंदोलन को जारी रखने के लिये वे अन्तिम आदेश दे चुके थे। अपनी अनुपस्थिति में मार्गदर्शन के लिये उन्होंने अपनी वसीयत और बी•बी•टी• (भक्तिवेदान्त बुक ट्रस्ट) एवं जी•बी•सी• संबंधित दस्तावेज तैयार कर लिये थे। केवल एक विषय का निबटारा करना रह गया था-उनकी अनुपस्थिति में दीक्षा प्रणाली किस तरह चलेगी। तब तक अनिश्चिता थी कि आगे किस प्रकार कार्य चलेगा। ६ जुलाई के पत्र से सबको स्पष्ट कर दिया गया कि उनकी अनुपस्थिति में दीक्षा विधी किस तरह चलेगी।

सारांश में, कोई एक आदेश को कुछ ऐसे तथ्यों के कारणवश नही बदला जा सकता जो आदेश जारी करेंगे जब उन्होंने मालूम था कि कोई इसका ठीक से पालन नहीं कर सकता; क्योंकि उस आदेश के साथ संबंधित तथ्य बताये ही नही गये थे। अगर ऋत्विक प्रणाली श्रील प्रभुपाद की बीमारी के कारणवश स्थापित की गयी थी तो यह तथ्य वे इस पत्र या संलग्न दस्तावेजों मे जरूर जाहिर करते। पूर्व

में हमे कही भी ऐसी व्याख्या नही मिलती जब उन्होंने बिना सोचे-समझे नही करते थे। और जब इतने महत्त्वपूर्ण आदेश की बात आती है तब तो और ज्यादा अचरज होता है कि वे कोई महत्त्वपूर्ण तथ्य कहना भूल गये हों।

६." क्या 'अपॉइंटमेन्ट टेप' (नियुक्ति का टेप) में गयी जानकरी यह सिद्ध नहीं करती कि ६ जुलाई का आदेश केवल श्रील प्रभुपाद की सशरीर उपस्थिति तक ही था ? "

जी•बी•सी• के संशोधन (अ) और (ब) सिद्ध करने के लिए जी •आई•आई• में एक ही प्रमाण पाया जाता है। यह प्रमाण २८ मई १६७७ के एक वार्तालाप से लिया गया है। इस लेख की धारणा है कि श्रील प्रभुपाद के आदेशों में ऐसा कोई प्रमाण नही है जो इस विषय से संबंधित हो।

'हालाँकि श्रील प्रभुपाद ने अपने वाक्यों को फिर से नही दोहराया फिर भी सब यही समझते थे कि श्रील प्रभुपाद अपेक्षा करते है कि उनके शिष्य भविष्य में दीक्षा देंगे।'

चूँकि यह जी•बी•सी• ल एकमाज प्रमाण है इसलिए २८ मई के वार्तालाप को लेकर इस लेख मे एक विशेष अध्याय बनाया गया है। वास्तव में यह कहना ही काफी होगा कि६ जुलाई केप ज में इस २८ मई के वार्तालाप

का कोई उल्लेख ही नही है, ना ही श्रील प्रभुपाद ने इस बात पर जोर दिया कि ६ जुलाई के पज के साथ वार्तालाप के टेप की प्रतिलिपि भी भेजी जाए। अतएव हम पूरे विश्वास के साथ कह सकते है कि इसमें अन्तर ऐसी जानकरी नही है जो ६ जुलाई के पज के सार को बदले या जिससे ६ जुलाई के पज को समझने में अन्तर आए। वास्तव में देखा जाए तो २८ मई के वार्तालाप के टेप को श्रील प्रभुपाद के पदार्पण के कई सालों बाद तक भी प्रकाशित नही किया गया था। इस तरह एक और बार हमें एक व्हुत ही स्पष्ट पज को बदलने को कहा जा रहा है। और वह भी इस ६ जुलाई का पज भेजा गया था। आगे चलकर हम देखेंगे कि इस २८ मई के वार्तालाप में ऐसा कुछ तथ्य नही है जो कि इस अंतिम आदेश से भिन्न हो।

सामान्यतः किसी एक विषय पर गुरू द्वारा बाद में दिए गए आदेश पहले दिए गये आदेशों की तुलना में श्रेष्ठ होते है। 'फाइनल ऑर्डर' श्रील प्रभुपाद का अंतिम आदेश है अतएव इसका पालन करना अनिवार्य है ः

"मै तुम्हें बहुत कुछ कह सकता हूँ, लेकिन जब मै तुमसे सीधे कुछ कहूँ तो तुम वही करो। यह तुम्हारा कर्तव्य हो जाता है कि तुम वही करो, तुम यह विवाद नही कर सकते कि 'स्वामीजी आपने मुझे पहले इस तरह करने को कहा था',नही,
वह तुम्हारा कर्तव्य नही, जो मै तुम्हें अभी कह रहा हूँ तुम वही करो, इसको कहते है आज्ञा पालन।"
(श्रील प्रभुपाद श्रीमद्-भागवतम् प्रवचन,१४/४/७५, हैदराबाद)

जैसे कि भगवद्गीता में भगवान कृष्ण अर्जुन को कई तरह की योग इपद्धतियों के बारे में बताते है, जैसे- पहले ध्यान योग फिर ज्ञान योग इत्यादि लेकिन बाद में भगवान ने अपना अंतिम आदेश दिया ः

“हमेशा मेरा चिन्तन करो और मेरे भक्त बनो- इसी को भगवान का अंतिम आदेश मानना चाहिए और इसी का पालन करना चाहिए।”
(चैतन्य महाप्रभु का शिक्षामृत,अध्याय ११)

शंकराचार्य का अंतिम आदेश था ‘भज गोविन्दम' और यह आदेश उनके पहले दिए गए अन्य आदेशों की अपेक्षा श्रेटठ है। यह अंतिम आदेश उनके पहले दिए गए सभी आदेशों को निलंबित करता है। जी.बी.सी. स्वयं इसको तर्क का प्रामणिक सिद्धान्त मानती है।

“तक—वितर्क में, बाद में कहे गए वाक्यों से अधिक महत्त्वपूर्ण हो जाते है।’
(जी.आई.आई.,पृष्ठ २७)

ऐसा संभव नही कि हम अंतिम कथन के बदले उससे पहले वाले कथनों को स्वीकारे। अतएव जी.बी.सी. को अपने ही तर्क से ऋत्विक प्रणाली ले अपनाना चाहिए।

७. “ श्रील प्रभुपाद मे कई बार यह कहा था कि उनके सारे शिष्यों को गुरू बनना चाहिए। यह निश्चित रूप से साबित करता है कि श्रील प्रभुपाद ऋत्विक प्रणाली को स्थायी रूप से नही चाहते थे।”

श्रील प्रभुपाद ने अपने बाद किसी को दीक्षा गुरू बनने का आदेश नही दिया था। और इसके विरोध में अभी तक किसी पमाण प्रस्तुत नही किया है।वास्तव में इस्कॉन के कई वरिष्ठ नेता इस बात का समर्थन करते है।

“ और यह तथ्य है कि श्रील प्रभुपाद ने कभी यह नही कहा कि ‘ठीक है यह अगले आचार्य होंगे या ये ग्यारह लोग आचार्य है और सारे संसार भर के आंदोलन का गुरू बनने के लिए इन्हें अनुमति है’ उन्होंने ऐसा कभी नही किया।”
(रविन्द्र स्वरूप दास, सॅनडियागो शास्त्रार्थ, १९९0)

श्रील प्रभुपाद ने स्पष्ट कहा है कि एक महाभागवत ही दीक्षा गुरू बन सकाता है। (महाभागवत-भगवद् साक्षात्कार की उच्चतम अवस्था) केवल यही नही बल्कि उसे अपने गुरू द्वारा निजी आदेश भी प्राप्त होना चाहिए। जो लोग बिना योग्यता के और बिना किसी आदेश के गुरू की पदवी धारण करते थे उनका श्रील प्रभुपाद बहुत जोरदार निन्दन करते थे।

हम यहाँ श्रील प्रभुपाद की प्रस्तकों में पाए जाने वाले एकमात्र श्लोक को प्रस्तुत कर रहे है जहाँ दीक्षा शव्द किसी योग्यता के साथ जुड़ा हुआ है।

महाभागवत श्रेष्ठो ब्राह्मणों वै गुरूर नुनम्
सर्वेषम एव लोकनम् असौ पूज्यो यथा हरिः

महाकुलप्रसुतोपि सर्व यज्ञेशु दिक्षितः
सहस्र साखाद्ययि च न गुरूः स्याद अवैष्णवः

'गुरू को भक्ति की सर्वोत्तम अवस्था पर स्थित होना ही चाहिए। भक्तों को तीन स्तरों में विभाजित कीया जा सकता है और गुरू को उच्चतम स्तर के भक्तों में से ही चुना जाना चाहिए।'

(चैतन्य चरितामृत मध्य, २४.३३0, भावार्थ)

'जब कोई भक्ति के उच्चतम स्तर महाभागवत् को प्राप्त हो जाता है तब उसे गुरू के रूप में स्वीकार करना चाहिए और साक्षात् भगवान हरि के समान उनको पूजना चाहिए। केवल ऐसा व्यक्ति ही गुरू की पदवी धारण करने योग्य है।'

(चैतन्य चरितामृत मध्य, २४.३३0, भावार्थ)

श्रील प्रभुपाद ने विशेष रूप से यह भी कि दीक्षा गुरू बनने के लिए योग्यता ही नही बल्कि अपने पूर्व आचार्य का आदेश और अनुमति भी होनी चाहिए ः

' सारांश में तुम यह जाना लो कि वह मुक्तात्मा नही है, अतएव वह किसी को कृष्ण भावनामृत में दीक्षा नहीं दे सकाता। इसके लिए पूर्व अधिकारियों का विशेष आशीर्वाद होना चाहिए।'

(श्रील प्रभुपाद का पत्र जर्नादन को, २६/४/६८)

'एक प्रामाणिक गुरू जिन्हें उनके पूर्व गुरू ने अनुमति देकर अधिकृत किया हो एवं जो गुरू परम्परा के अंतर्गत आते है ऐसे गुरू से ही दीक्षा लेनी चाहिए। इसी को दीक्षा विधान कहते है।'

(श्रीमद्-भागवतम्,४.८.५४, भावार्थ)

भारतीय व्यक्ति ः आप इस कृष्ण भावनामृत आंदोलन के आध्यात्मिक नेता कब बने ?

श्रील प्रभुपाद ः क्या कहा ?

ब्रत्मानंदा ः यह पूछा रहा है कि आप कृष्ण भावनामृत के आध्यात्मिक नेता कब बने ?

श्रील प्रभुपाद ः जब मेरे गुरू महाराज ने मुझे आदेश दिया। यही गुरू परम्परा है।

भारतीय व्यक्ति ः क्या यह ----

श्रील प्रभुपाद ः समझने की कोशिश करो। तीव्रता से आगे मत जाओ। एक व्यक्ति तभी गुरू बन सकता है जब उसके गुरू ने उसे आदेश दिया हो। यहि तथ्य सर्वस्व है। अन्यथा कोई गुरू नही बन सकता।

(श्रील प्रभुपाद भगवद्-गीता प्रवचन्,२८/१०/७५)

इस तरह श्रील प्रभुपाद के अनुसार कोई दीक्षा गुरू तभी बन सकता है,जब उसके पास योग्यता और आदेश हो।श्रील प्रभुपाद ने ऐसे किसी गुरू की नियुक्ति नही की थी और न ही उन्होंने कहा था कि उनके शिष्यों में से कोई दीक्षा देने के लिए योग्य है। इसके विपरीत ६ जुलाई के पत्र के दो महीने पहले ही उन्होंने यह स्वीकार किया था कि उनके शिष्य अभी तक 'बद्धजीव' थे और अत्यधिक सतर्क एवं सजग रहना आवश्यक था ताकि कही कोई आप को गुरू न घोषित कर दे।

(कृपया परिशिष्ट देखे, २२ अप्रैल १९७७)

ऋत्विक प्रणाली को बदलकर किसी दूसरी प्रणाली को स्थापित करने के समर्थन में दिए गए प्रमाणों को तिन मूल वगों में बाँटा जा सकता है।

(क) श्रील प्रभुपाद द्वारा सभी को बार-बार गुरू बनने का आह्वान करना जो कि श्री चैतन्य महाप्रभु द्वारा दिया गया आदेश 'आमार आज्ञाय गुरू हाना' पर आधारित है।

(ख) श्रील प्रभुपाद के आधे दर्जन के करीब लिखे गए व्यक्तिगत पत्र जिसमें उनके प्रदार्पण के बाद उनके शिष्यों के दीक्षा गुरू होने की बात कही गई है।

(ग) श्रील प्रभुपाद की पुस्तकों एवं प्रवचनों में दिए गए कथन जहाँ शिष्य आगे चलकर क्रमशः दीक्षा गुरू होने के विधान का उल्लेख है।

(क) श्रेणी का विश्लेषण ः

चैतन्य चरितामृत के निम्नलिखित श्लोक में सभी को गुरू बनने का आदेश दिया गया है। श्रील प्रभुपाद इस श्लोक को कई बार कहा करते थे ः

'सभी को भगवद् — गीता एवं श्रीमद् — भागवतम् में कृष्ण द्वारा दिये गये उपदेशों का पालन करने को कहो। इस तरह गुरू बनो और इस क्षेत्र में सभी को मुक्त करने का प्रयास करो।'

(चैतन्य चरितामृत मध्य, ७.१२८, भावार्थ)

परन्तु, श्री चैतन्य महाप्रभु जिस तरह के गुरू बनने का आदेश दे रहे है वह निम्नलिखित भावार्थों में स्पष्ट हो जाता है ः

'इसका अर्थ है, अपने घर में रहो, हरे-कृष्ण मंत्र का जाप करो और भगवद्-गीता और श्रीमद-भागवतम् में दिये कृष्ण उपदेशों का प्रचार करो।

(चैतन्य चरितामृत मध्य, ७.१३0, भावार्थ)

'गृहस्थ,चिकित्स,अभियांत्रिक अथवा कुछ और बने रह सकते हो। इसमे कोई हर्ज नही है। केवल श्री चैतन्य महाप्रभु के उपदेशों का पालन करना चाहिये। हरे•कृष्ण मन्त्र का जप करना चाहिये और सपने रिश्तेदारों और दोस्तों को भगवद्-गीता एवं श्रीमद-भागवतम् की शिक्षाओं को बताना चाहिये.... सबसे उत्तम यह होगा कि कोई शिष्य नहीं स्वीकारो।'

(चैतन्य चरितामृत मध्य, ७.१३0, भावार्थ)

हम यहाँ देख सकते है कि उपर्युक्त गुरू का कार्य करने से पूर्व किसी प्रकार की साधना सिद्धि की आवश्यकताा नहै है।यह निवेदन वर्तमान का है। स्पष्टतः सभी को उत्साहित किया जा रहा है कि जो मालूम हो उसका प्रचार करो। षह करते ुक्त इस प्रकार शिक्षा गुरू बनो। इसका स्पष्टीकरण इस निर्देश से होता है कि —

'सबसे उत्तम होगा कि कोई नहीं स्वीकारो।'

(चैतन्य चरितामृत मध्य, ७.१३0, भावार्थ)

शिक्षा गुरू को अपने स्थान पर ही रहना चाहिये, दीक्षा गुरू बनने का स्वपन नहीं देखना चाहिये। दीक्षा गुरू का प्राथमिक कार्य है, शिष्य स्वीकारना। जबकि शिक्षा गुरू क्षमतानुसार केवल कृष्ण भावनामृत का प्रचार करता है और अपने कार्य रहता है। श्रील प्रभुपाद के इस भावार्थ से यह स्पष्ट हो जाता है कि उपरक्ति श्लोक में श्री चैतान्य महाप्रभु शिक्षा गुरू बनने का अधिकार दे रहे है, दीक्षा गुरू बनने का नहीं।

निम्नलिखित कथनों से यह और भी स्पष्ट हो जाता है जहाँ श्रील प्रभुपाद सबको गुरू बनने का आह्वान कर रहे है ः

'यारे देखा, तारे कह, कृष्ण उपदेश। तुम्हें कुछ भी अविष्कार करने की आवश्यकता नही। जो श्रीकृष्ण ने अब तक कहा है, उसको दोहराओ। बस। कुछ भी ना जोडो, बदलो। तब तुम गुरू बनोगे....। मै एक बेवकूफ मूढ हो सकता हूँ..... तो हमें इस पथ का अनुसरण करना चाहिए, कि तुम गुरू बनो, अपने पडोस के लोगों, मिलने वालों का उद्धार कारो, पर कृष्ण के प्रमाणिक शब्द ही दुहाराओ। तब यह काम करेगा ..... इसे कोई भी कर सकता है। एक बच्चा भी।

(श्रील प्रभुपाद संध्या दर्शन,११/५/७७,ऋषिकेश)

'क्योंकि लोग अंधकार में डुबे हुए है, हमें लाखों गुरूओं की आवश्यकता है जो उनको ज्ञान दे। इसलिए चैतन्य महाप्रभु का आंदोलन है.... उन्होंने कहा था, तुम सब गुरू बनो।'

(श्रील प्रभुपाद प्रवचन,२१/५/७६,होनोलूलू)

"तुम सिर्फ कहो.... कृष्ण बोलते है 'निरन्तर मेरा ध्यान करो, मेरे भक्त बनो। मेरी पूजा करो और मुझे नमन करो। कृपया यह सब करो। तो अगर तुम सिर्फ एक व्यक्ति को यह करने के लिये प्रेरित कर सके तब तुम गुरू बने। क्या इसमें कुछ मुश्किल है ?"

(श्रील प्रभुपाद वार्तालाप,२/८/७६,पेरिस)

"असली गुरू वह है जो वही उपदेश दे जो कृष्ण ने कहा है.... तुम्हें सिर्फ यही कहना है 'यह ऐसे है' बस! क्या यह अति कठिन कार्य है ?''

(श्रील प्रभुपाद प्रवचन,२१/५/७६,होनोलूलू)

....'परन्तु मै योग्य नही हूँ। मै गुरू कैसे बन सकता हूँ।' योग्यता की कोई जरूरत नही है। जिससे भी मिलो, सिर्फ वही कहो जो श्रीकृष्ण ने कहा है। बस! तुम गुरू बन गये।'

(श्रील प्रभुपाद प्रवचन,२१/५/७६,होनोलूलू)

(आश्चर्यजनकपूर्वक, कुछ भक्तों ने इन कथनों से मिनिमली क्वालिफाइड दीक्षा गुरू (न्यूनतम योग्य दीक्षा गुरू* (१) को उचित बतलाना चाहा है। जबकि इस तरह के गुरू का वर्णन श्रील प्रभुपाद की किताबों,पत्रों,प्रवचनों,अथवा वार्तालापों में एक बार भी नही किया गया है।)

ऐसे गुरू, जिनकी योग्यता सिर्फ यह है कि उसने जो सुन है वही दुहराए, का उदाहरण इस्कॉन के किसी भी नए 'भक्त' में मिल जाएगा। उपर्युक्त कथनों से स्पष्ट हो जाता है कि ये कथन शिक्षा गुरू बनने का निमंत्रण है। हम यह जोर देकर कह सकते है क्योंकि श्रील प्रभुपाद ने अपनी पुस्तकों में दीक्षा गुरू की अति

उच्च योग्यता बता रखी है।

'जब कोई व्यक्ति महाभागवत् की उच्चतम अवस्था अर्जित कर लेता है तब उसे गुरू मान लेना चाहिये और उसे भगवान पुरूषोत्तम हरि की तरह पूजा जान चाहिए। केवल यह योग्य व्यक्ति ही गुरू की पदवी ग्रहण कर सकता है।'

(चैतन्य चरितामृत मध्य, २४.३३0, भावार्थ)

'गुरू-शिष्य परम्परा में आने वाले किसी योग्य गुरू से ही दीक्षा लेनी चाहिये। ऐसे गुरू को उसके गुरू ने यह अधिकार दिया होगा। इस दीक्षा-विधान कहते है।'

(श्रीमद्-भागवतम्,४.८.५४, भावार्थ)

उपर्युक्त कथनों मे श्रील प्रभुपाद बताते है कि दीक्षा गुरू बनने का आदेश अपने गुरू द्वारा मिलना चाहिये। श्री चैतन्य का आदेश पिछले ५00 साल से पाचलित था। षह स्पष्ट है कि श्रील प्रभुपाद 'आमार आज्ञाया गुरू हाना' आदेश को दीक्षा संबंधी आदेश नही मानते थे। नहीं तो वह अपने गुरू के द्वारा प्रतिपादित एक और आदेश की बात क्यों करते ? श्री चैतन्य का आदेश शिक्षा गुरू बनने का आह्वान है न कि दीक्षा गुरू बनने का। दीक्षा गुरू कए अपवाद है, नियम नही। बल्कि श्रील प्रभुपाद लाखों पुरूषों, महिलाओं और बच्चो को शिक्षा गरू बनता देखना चाहते थे।

(ख) श्रेणी प्रभुपाद की उपस्थिति में भी कुछ मुट्ठीभर ऐसे अति आत्माविश्वासी शिष्य थे जो खुद दीक्षा प्रणाली देकर अपने शिष्य बनाना चाहते थे। श्रील प्रभुपाद ने उन्हें खुद कुछ पत्र लिखे थे। ये पत्र म.आ.स.सि दीक्षा प्रणाली के प्रमाणस्वरूप प्रस्तुत किये जाते है। श्रील प्रभुपाद का इन महत्त्वकांक्षी शिष्यों से एक ही तरह का बर्ताव होता था। सामान्यतः वे उनसे यह कहते थे कि वर्तमान में तो सावधानपूर्वक प्रशिक्षित रहो और भविष्य में उनके प्रस्थान उपरान्त शिष्य स्वीकार सकते हो।

'पहली चीज, मैं अच्यतानंद को चेतावनी देता हूँ , दीक्षा देने का प्रयास न करो। तुम ऐसी स्थिति में नही हो कि दीक्षा दे सको ....ऐसी माया से भ्रमित ना हो। मैं तुम सबको भविष्य में गुरू बनने की शिक्षा दे रहा हूँ, परन्तु जल्दबाजी मत करो।'

(श्रील प्रभुपाद का पत्र अच्यतानंद एवं जय गोविंद को, २१/८/६८)

'कुछ समय पहले तुमने अपने खुद के शिष्य स्वीकारने की आज्ञा माँगी थी। द्याह समय अब जल्द ही नजदीक आ रहा है जब अपने प्रभावशाली प्रचार से तुम कई शिष्य बनाओगे।'

(श्रील प्रभुपाद का पत्र अच्यतानंद को, १६/५/७२)

'मेरे सुनने में आया है कि दूसरे भक्तों द्वारा तुम्हारी थोड़ी पूजा हो रही है। यह सही है कि वैष्णव को नमन करना चाहिए, पर गुरू के प्रस्थान उपस्थिति में नही। गुरू के प्रस्थान उपरान्त वह स्थिति आयेगी, पर अभी रूको। नही तो अलग-अलग पक्ष बन जावेंगे।'

(श्रील प्रभुपाद का पत्र हंसदूता को, १/१0/७४)

---

*(9) - जी.बी.सी. के इस्कॉन जर्नल 9६६० में प्रकाशित अजामिला दास का लेख 'रेगुलर या ऋत्विक' इस प्रकार के अर्थ की वकालत करता है।

'सावधानीपूर्वक प्रशिक्षण करते रहो और तब तुम प्रामाणिक गुरू हो। और उसी सिद्धान्त पर शिष्य ले सकते हो। पर यह शिष्टाचार की रीति है कि अपने गुरू की उपस्थिति में, होने वाले शिष्य को गुरू के पास लेकर आओ और गुरू की अनुपस्थिति में बिना किसी रोक-टोक के शिष्य स्वीकारो। यह गुरू-शिष्य परम्परा का कानून है। मै चाहता हूँ कि मेरे शिष्य प्रामाणिक गुरू बनें और कृष्ण भाववनामृत का दूर-दूर तक प्रसार करे। इससे मुझे और कृष्ण दोनों को खुशी होगी।'

(श्रील प्रभुपाद का पत्र तुष्ट कृष्ण को, २/१२/७५)

मजेदार बात तो यह है कि वैसे तो जी.आई.आई. में म.आ.स.सि. दर्शन के प्रमाण के लिए इस 'कानून' का उपयोग किया गया है, फिर भी उसी दस्तावेज में यह स्वीकार किया गया है कि यथार्थ में यह कानून नही ही ः शास्त्रों में ऐसे कोई उदाहरण है जहाँ गुरू की उपस्थिति में ही शिष्य दीक्षा देते है। शास्त्रों में ऐसा कोई विशेष निर्देश नही जहाँ यह कहा गया हो कि शिष्य को गुरू की उपस्थिति में दीक्षा नही देनी चाहिए।' (जी.आई.आई., पृष्ठ २३)

सम्मान,पूजा एवं अनुयायी ग्रहण करने की उत्सुकता एक अयोग्यता है। ऐसा अयोग्य व्यक्ति गुरू नही बन सकता। हम तो घमंड के प्रकोप की सिर्फ प्रशंसा ही कर सकते जिससे धरती के इतिहास के सबसे महान आचार्य की शारीरिक उपस्थिति में भी ऐसे कुछ व्यक्ति खुद दीक्षा देने के लिये अपने आप को योग्य समझ बैठे। *(२)

इन पत्रों में यह स्पष्ट दिखता है कि श्रील प्रभुपाद ऐसे शिष्यों को थोडा और धीरज रखने को कहकर उन्हें भक्ति सेवा में रखना चाह रहे थे। ऐसा करने से यह संभावना तो रहती थी कि समय के साथ इनकी महत्त्वकांक्षी इच्छाएँ शुद्ध हो जाएँगी।

श्रेसे कई नम्र भक्त थे जो दृढता, श्रद्धा और स्वार्थहीनता से अपने गुरू की सेवा में लीन थे। ऐसे भक्तों को कभी ऐसा पत्र न मिला जिसमें उनके गुरू बनने के प्रज्वल भविष्य का वर्णन हो। गुरू बनने की महत्त्वकांक्षा ही आयोग्यता होती है। तब श्रील प्रभुपाद ने ऐसे महत्त्वकांक्षी शिष्यों को ही दीक्षा गुरू बनाने का वायदा क्यों किया ?

श्रील प्रभुपाद के ऐसे भी कथन है जहाँ उन्होंने अपनी देह त्यागने के उपरान्त अपने शिष्यों को दीक्षा देने की स्वतंत्रता दी थी। यह कथन सत्य है। उदाहरणतया भारत में १८ वर्ष की आयु से कार चलाने के लिये हर कोई स्वतन्त्र होता है। परन्तु हमें दो चीजे नही भूलनी चाहिये- पहले उसे कार चलाना आना चाहिये (यानी योग्य होना चाहिये) दूसरे उसको 'ड्राइविंग लाइसेंस' अधिकारी द्वारा 'अधिकार' मिलना चाहिये। पाठक समानांतर खुद निकाल सकते है।

म•आ•स•सि• के प्रमाणस्वरूप एक और पत्र प्रस्तुत किया जाता है ः

'१९७५ से, वे सब जो सभी उपर्युक्त परीक्षाओं में उत्तीर्ण होंगे उन्हें दीक्षा देने हेतु विशेष अधिकार मिलेगा जिससे वे कृष्ण भावनामृत सदस्यों की संख्या बढ़ा सकेंगे।'

(श्रील प्रभुपाद का पत्र कीर्तनानन्द को,१२/१/६६)

---

*(२) - यहाँ हम सूचित करना चाहेंगे कि उपर्युक्त ज्यादातर भक्तों ने अपने गलती को पहचाना है इसलिए उन्हें हम किसी अपराध या कठिनाई पहुँचाने के लिए क्षमा चाहते है। शायद वह इस बात से सहमत होंगे कि उनके व्यक्तिगत अनर्थो को संबोधित करके श्रील प्रभुपाद द्वारा लिखे गए पत्रों को आज इस्कॉन में चलित म.आ.स.सि. (बहुल आचार्य परंपरा प्रणाली) का समर्थन करने के लिए प्रयोग में लाया जा रहा है।

क्या उपर्युक्त कथन द्वारा दीक्षा संबंधी अंतिम आदेश को रोका जा सकता है ?

क्योंकि यह व्यक्तिगत पत्रों द्वारा ऋत्विक प्रणाली रोकाने का प्रयास है, हम यहाँ श्रील प्रभुपाद के 'गुरू-शिष्य परम्परा के कानून' का उपयोग करेंगे। इस कानून के प्रथम भाग के अनुसार अपने गुरू की सशरीर उपस्थिति में किसि शिष्य को दीक्षा आचार्य नही बनन चाहिये। यह 'कानून' लागू करने से यह स्पष्ट हो जाता है कि उपर्युक्त पत्र में श्रील प्रभुपाद अपने शिष्यों को दीक्षा गुरू बनकर अपने शिष्य बनाने के लिये नही कह रहे है। वे १९७५ में इस धरती पर ही थे। इससे यह स्वभावतः निष्कर्ष निकाल सकते है कि श्रील प्रभुपाद शुरूआती वर्षो यानी १९६९ में भी किसि प्रकार की 'अधिकारिक' दीक्षा प्रणाली का मनन कर रहे थे। और जैसा बाद में हुआ, श्रील प्रभुपाद ने सचमुच १९७५ तक अपने कुछ शिष्यों, जैसे कि कीर्तनानन्द को दीक्षा से पहले माला पर जपना और दीक्षा होम है कि यह पत्र दीक्षा देने के लिये प्रतिनिधियों के उपयोग की भविष्यवाणी करता है। तदुपरान्त इन प्रतिनिधियों को उन्होंने 'ऋत्विक' नाम दिया और ६ जुलाई के पत्र से उनके कार्य को औपचारिक बना दिया। श्रील प्रभुपाद क्या कीर्तनानन्द को कुछ परीक्षाओं में उत्तीर्ण होने पर संप्रदय के दीक्षा आचार्य की पदवी दे सकते थे ?

'श्री चैतन्य महाप्रभु के आदेशों को उनके प्रामाणिक प्रतिनिधि के संरक्षण में पालन कर कोई भी गुरू बन सकता है। और मेरी इच्छा है कि मेरी अनुपस्थिति में मेरे सारे शिष्य प्रामाणिक गुरू बने और कृष्ण भावनामृत का समस्त मे प्रचार करे।'
(श्रील प्रभुपाद का पत्र मधुसूदन को, २/११/६७)

यहाँ श्रील प्रभुपाद अपनी अनुपस्थिति में शिष्यों को गुरू बनने को कह रहे। इस कथन का उपयोग कर यह तर्क दिया जाता है कि श्रील प्रभुपाद उन्हें दीक्षा गुरू बनने को कह रहे है, क्योंकि वे शिक्षा गुरू पहले से ही थे। संभवतः यह भी तो हो सकता है कि उन्हें अच्छे शिक्षा गुरू बनने का प्रोत्साहन फिर दे रहे हों। और यह भी कि उनकी अनुपस्थिति में भी अच्छे शिक्षा गुरू बने रहे।निश्चित ही यहाँ यह नही कहा गया है कि उनके शिष्य दीक्षा दे सकते है और खुद के शिष्य बना सकते है। यह कथन कि 'प्रामाणिक गुरू बने और कृष्ण भावनामृत का समस्त संसार में प्रचार करे' शिक्षा गुरू पर भी समान रूप से लागू होता है।

हो सकता है कि ये पत्र किसी और तरह की गुरू प्रणाली का संकते दे रहे हो। अगर यह मान भी ले तो भी यह पत्र ६ जुलाई के अन्तिम आदेश को बदल नही सकते; क्योंकि ये पत्र समस्त आंदोलन को दुहराए नहीं गये थे। उपर्युक्त पत्र १९८६ तक प्रकाशित ही नही हुए थे। कभी-कभी यह भी कहा जाता है कि ये पत्र संस्था

के कुछ सदस्यों के पास किसी तरह पहुँच गये थे। ऐसा हो सकता है या नही भी। परन्तु प्राथमिकता तो इस तथ्य पर दी जानी चाहिये कि श्रील प्रभुपाद ने इस तरह की वितरण प्रणाली न तो स्थापित की और नही अनुमोदित। हमें इस तरह का सबूत कही नही मिलता जहाँ श्रील प्रभुपाद ने अपने निजी पत्र-व्यवहार को सर्वत्र वितरित करने का आदेश दिया हो। उन्होंने एक बार लापरवाह प्रतीत होते हुए कह दिया था कि उनके पत्रों को 'समय होने' पर प्रकाशित किया जा सकता है। परन्तु उन्हेंने ऐसा संदेश कभी नही भेजा कि इन पत्रों के बिना म.आ.स.सि. को लागू करने की पूर्ण जानकारी नही मिलेगी।

१९७७ मे क्या होना चाहिए था – इसकी दलील पेश करने के लिए सारे प्रमाण उसी समय अधिकारिक रूप में एवं सरलता से उपलब्ध होने चाहिए थे। अगर इन्ही पत्रों में भविष्य के **१०** हजार सालों की दीक्षा प्रणाली की कुंजी छुपी थी, तो श्रील प्रभुपाद निश्चित ही इनका प्रकाशन और बडी संख्या में वितरण अंतिमहत्त्वपूर्णता से कराते। ऐसा भी हो सकता था कि कुछ वरिष्ठ भक्तों ने उनके निजी पत्र न पढे हो और इस कारणवश स्पष्टतापूर्वक समझ न पाए हों कि श्रील प्रभुपाद के शारीरिक प्रस्थान उपरान्त दीक्षा प्रणाली किस तरह चलेगी। और ऐसा समझना गलत नही है; क्योंकि **२८** मई **१९७७** तक भी संम्पूर्ण जी.बी.सी. को यह ज्ञात नही था कि श्रील प्रभुपाद क्या करना चाह रहे है। (कृपया परिशिष्ट देखिए)

अतः यह कहना कि इसी तरह के मुट्ठीभर पत्रों के कारण ६ जुलाई के पत्र को बदल देना चाहिये सरासर बेईसाफी है। अगर यह इतने महत्वपूर्ण थे तो श्रील प्रभुपाद इनको ६ जुलाई के पत्र में सम्बोधित करते या संलग्न करते।

अम्त में दीक्षा के लिए एक ही पदवी दी गयी थी वह थी आचार्य के प्रतिनिधि की तरह यानी ऋत्विक।

अंत में (ग) श्रेणी का विश्लेषण ः

ऋत्विक प्रणाली को रोकने के लिए श्रील प्रभुपाद की पुस्तकों और प्रवचनों से कई वाक्यों को प्रमाणस्वरूप प्रस्तुत किया जाता है। अब हम इन प्रमाणों का परीक्षण करेंगे।

प्रायः श्रील प्रभुपाद की किताबों में हमे दीक्षा गुरू की योग्यताओं का वर्णन मिलता है। ऐसा कोई विशेष कथन नही है जो उनके शिष्यों के कमशः दीक्षा गुरू होने की बात कर रहा हो। इसके विपरीत ये कथन केवल इसी बात पर जोर देते है कि दीक्षा गुरू बनने के लिए बहुत ही उच्च योग्यता एवं अपने गुरू द्वारा आदेश प्राप्त होना चाहिए।

'जो अभी शिष्य है वह अगला गुरू होगा। यदि कोई दृढतापूर्वक गुरू का आज्ञाकारी नही रहा हो तो वह प्रामाणिक व सहमति प्राप्त गुरू नही बन सकता।'
(श्रीमद्-भागवतम्, २.६.४३, भावार्थ)

उपर्युक्त निर्देश किसी तरह से भी यह छूट नही देता कि केवल गुरू के चले जाने के कारण कोई दीक्षा दे सकता है। गुरू के इस धरती को छोडकर जाने का विचार इस निर्देश में ही नही। केवल यह विचार है

कि उनको अनुमति प्राप्त होनी चाहिए व दृढ़तापूर्वक आज्ञाकारी होना चाहिए। हम पहले से यह जानते है कि उन्हें महाभागवत भी होना चाहिए।

कुछ भक्त 'अन्य ग्रहों की सुगम याजा' (पृष्ठ ३२) में सम्बोधित मोनिटर गुरू को प्रमाण बताते हुए म•आ•स•सि• (बहुल आचार्य परम्परा प्रणाली) का समर्थन करते है और यह निष्कर्ष निकालते है कि ऋत्विक प्रणाली को बंद कर देना चाहिए, किन्तु यक उदाहरण स्पष्ट रूप से शिक्षा की परिभाषा देता है दीक्षा गुरू की नही। पुस्तक के इस अंश के अनुसार 'मोनिटर' गुरू अपने निर्देशक

की ओर से काम करते है, वह स्वयं निर्देशक नही है। वह निर्देशक होने के लिए योग्य हो सकता है परन्तु इसके लिए एक प्रकिया है और यह प्रकिया निर्देशक के अंतर्धान होने पर अपने आप ही सकिय नही होती (निर्देशक का अर्थ है दीक्षा गुरू)। 'मोनिटर गुरू' केवल शिक्षा के लिए ही शिष्य रख सकते है और वह भी सीमित संख्या में। जब ये 'मोनिटर गुरू' योग्य हो जाएँ यानी महाभागवत बन जाएँ और पूर्व आचार्य से उन्हें सहमति या आदेश प्राप्त हो तब उनको फिर 'मोनिटर गुरू' नही कहा जाएगा। टब वे स्वयं गुरू होंगे, और तब असंख्य शिष्य बना सकते है। इस तरह,'मोनिटर' शिक्षा गुरू है और निर्देशक एक दीक्षा गुरू है। शिक्षा गुरू, दीक्षा गुरू का दृढतापूर्वक अनुसरण करते हुए पूरी तरह योग्य बन सकते है और फिर दीक्षा देने की सहमति या आदेश पाने के पात्र बन सकते है। जब तक निर्देशक उपस्थित है तब तक 'मोनिटर' केवल अपने निर्देशक की साहयता करते है। यदि 'मोनिटर गुरू' वास्तव में दीक्षा गुरू ही है तो यह फिर गुरू परम्परा के कानून के विरूध्द होगा जो म•आ•स•सि•

(बहुल आचार्य परम्परा प्रणाली) का समर्थन करने के लिए प्रयोग में लाया जाता है। निष्कर्ष में 'मोनिटर गुरू' निर्देशक (दीक्षा गुरू) का स्थान लेने के लिए अथवा उनका

उत्तरधिकारी बनने के लिए नहीं है बल्कि निर्देशक के साथ काम करने के लिए है।

निश्चित रूप से 'मोनिटर' प्रणाली जी•बी•सी• के संशोधनों (अ) और (ब) का समर्थन नही करती। संशोधन (अ)- ऋत्विक प्रणाली श्रील प्रभुपाद के देह त्यागने के उपरान्त बंद हो जानी थी। (ब)- ऋत्विक अपने आप ही दीक्षा गुरू बनते थे।

श्रील प्रभुपाद के पत्रों के आलावा भी कुछ ऐसे संदर्भ है जिनको लेकर कहा जाता है कि श्रील प्रभुपाद ने अपने शिष्यों को दीक्षा गुरू बनने की अनुमति दी थी –

'अभी, दसवाँ,ग्यारहवाँ,बारहवाँ। मेरे गुरू महाराज चैतन्य महाप्रभु से दसवे थे, मै ग्यारहवाँ हूँ और तुम बारहवे हो। तो अब इस ज्ञान का वितरण करो।'

(श्रील प्रभुपाद आगमन सम्बोधन,१८/ ५/७२, लॉस एंजिल्स)

' साथ मे मै उन सबसे गुरू बनने का अनुरोध करूँगा। तुम सबको अगला गुरू बनन चाहिए।'

(श्रील प्रभुपाद व्यास-पूजा संबोधन,५/ ७/६६,हेमबर्ग)

पहला कथन साफ-साफ यह बताता है कि श्रील प्रभुपाद के शिष्य पहले से ही बारहवें हो चुके है-'तुम बारहवे हो'। अतएव यह भविष्य में दीक्षा गुरू बनने के लिए कोई अनुमति या आदेश नही है। यह केवल यही कहता है कि पहले से ही तुम परम्परा के संदेश का प्रसार कर रहे हो।

दूसरा कथन भी पहले कथन के अनुरूप ही है। यह निःसंदेश ही कहता है कि श्रील प्रभुपाद के शिष्य उनके बाद आते है,लेकिन जैसा कि पहला कथन कहता है वे अपने जोरदार प्रचार कार्य के कारण श्रील पभुपाद के उत्तराधिकारी बन चुके थे।

दोनें ही कथनों में शिष्य बनाने का स्पष्ट आदेश नही है अपितु प्रचार करने का आदेश है;क्योंकि श्रील प्रभुपाद ने कहा कि तुम अगले गुरू होंगे,इसका यह मतलब नही होता कि श्रील प्रभुपाद चाहते थे कि वे अगले दीक्षा गुरू बने। श्रेसा कहना या समझना मन की कल्पना माज है।

यह तर्क देना कि ऐसे कथन श्रील प्रभुपाद के अंतिम आदेश को स्थगित कर देते है,बिल्कुल असमर्थनीय है। इसको श्रील प्रभुपाद के अन्य कथनों से विपरीत साबित किया जा सकता है। उनके प्रस्थान के बाद क्या होगा ? इस संबंध में श्रील प्रभुपाद के कई कथन उपर्युक्त मनोधारणाओं का विरोध करते है।

रिपोर्टर ः आपकी मृत्यु पश्चात् अमरीका में आपके आंदोलन का क्या होगा ?
श्रील प्रभुपाद ः मेरी मृत्यु कभी नही होगी।
भक्तगण ः जय ! हरी बोल ! (हँसी)
श्रील प्रभुपाद ः मै अपनी पुस्तकों द्वारा जीवित रहूँगा और तुम लाभ उठाओगे।
(श्रील प्रभुपाद पत्रकार सम्मेलन, १६/७/७५,सेन फ्रॉन्सिको)

यदि श्रील प्रभुपाद म•आ•स•सि• प्रणाली (बहुल आचार्य परम्परा प्रणाली) चाहते थे तो इसका उल्लेख करने का यह स्पष्ट अवसर था। ऐसा कहने की बजाय कि मेरे शिष्य दीक्षा गुरू बनेंगे उन्होंने कहा कि वे कभी नही मरेंगे और उनकी किताबें ही सारा आवश्यक कार्य करेंगी। उपर्युक्त संवाद से पता चलता है कि श्रील प्रभुपाद अब भी सजीव गुरू है और वे अपनी पुस्तकों के माध्यम से दिव्य ज्ञान (दीक्षा का मुख्य अंग) दे रहे है और यह तब चलता रहेगा जब तक इस्कॉन रहेगा। इस प्रकिया में सहायक होना ही उनके शिष्यों का योगदान है।

'अपरिक्व आचार्य न बनो। पहले आचार्य के आदेशों का पालन कर परिपक्व बनो। उसके बाद आचार्य बनन अच्छा रहेगा। हम लोग आचार्य बनाना चाहते है लेकिन शिष्टाचार यह है कि जब तक गुरू उपस्थित है किसी को आचार्य नही बनन चाहिए। यदि वह संपूर्ण रूप से परिपक्व हो गया हो तब भी नही;क्योंकि शिष्टता इसी में है कि यदि कोई दीक्षा लेना चाहता है तो यह शिष्य का कर्तव्य है कि वह उस व्यक्ति को अपने आचार्य के पास ले जाए।'

(श्रील प्रभुपाद चैतन्य चरितामृत प्रवचन,६/४/७५,मायापुर)

उपर्युक्त कथन जरूर यह नियम बताता है कि शिष्य आगे चलकर आचार्य बन सकते है। परन्तु यह जोर देकर कहा जा रहा है कि वे अभी नही बने। बल्कि,तभी श्रील प्रभुपाद शिष्यों के आचार्य बनने की बात करते है,जब अपनी सशरीर उपस्थिति में गुरू बनने से रोकना हो। वे यही प्रकिया निजी पत्रों में भी अपनाते है।

स्पष्ट रूप से यह केवल एक नियम बताता है न कि अपने शिष्यों को गुरू बनने का स्पष्ट आदेश। जैसा हम 'अपाइंटमेंट टेप' के विश्लेषण में देखेगें कि श्रील प्रभुपाद ने मई १६७७ तक भी दीक्षा गुरू बनने का स्पष्ट आदेश नही दिया था। (" मेरे आदेश पर,....परन्तु मेरे आदेश पर,....जब मै आदेश दूं") और उनके देह त्यागने तक यही स्थिति वर्तमान रही। उपर्युक्त प्रवचन में तो आगे चलकर वे बताते है कि गुरू बनने की महत्वकांक्षा को जिस तरफ मोड़ा जायेः

"और आचार्य बनना ज्यादा मुश्किल नही है.... आमार आज्ञाय गुरू हाना तारा एई देश, यारे देखा तारे कह कृष्ण उपदेश ' मेरे आदेश का पालन कर, तुम गुरू बनो।'....फिर,भविष्य में जैसे तुम्हारे पास है अभी दस हजार। हम इसे बढ़ाऐगे एक लाख। यह हमे चाहिऐ।फिर एक लाख से दस लाख; और दस लाख से एक करोड़।"

(श्रील प्रभुपाद चैतन्य चरितामृत प्रवचन,६/४/७५,)

यह पहले ही बताया जा चुका है कि चैतन्य महाप्रभु का आदेश सबको प्रचार करने व ज्यादा कृष्ण भक्त बनाने के लिया था, शिष्य बनाने के लिए नहीं। श्रील प्रभुपाद भी उसी बात को दोहराते हुए अपने शिष्यों को प्रोत्साहन देने के लिए कह रहे है कि बहुत से भक्त बनाओ। श्रील प्रभुपाद का यह कथन 'यदी तुम्हारे पास अभी दस हजार....(अर्थात श्रील प्रभुपाद की उपस्थिति मे) बहुत महत्त्वपूर्ण है। इससे यह स्पष्ट होता है कि वे कृष्ण भावनामृत अनुयायियों की बात कर रहे अपने 'शिष्य के शिष्यों' की नही; क्योंकि उस प्रवचन का मुख्य विषय था कि वे श्रील प्रभुपाद की उपस्थिति में दीक्षा न दें।

इसका अर्थ यह होगा कि उस समय करीब दस हजार अनुयायी होगे और भविष्य में सहस्रों अनुयायी और जाडि जाएँगे। ऋत्विक प्रणाली यह तय करेगी कि ये अनुयायी कब दीक्षा लेने योग्य होंगे ध्यान रखेंगी कि इन अनुयायियों मे से जब भी कोई दीक्षा के योग्य हो उ
से श्रील प्रभुपाद से दीक्षा प्राप्त हो ठीक उसी तरह जब श्रील प्रभुपाद सशरीर उपस्थित थे व उपरोक्त भाषण दे रहे थे।

निष्कर्ष मे ः

श्रील प्रभुपाद द्वारा दीक्षा गुरू बनने के लिए अपने शिष्यों को दिये गये ऐसे किसी आदेश का प्रमाण नही है जो ऋत्विक प्रणाली का स्थान ले सके।

हमारे पास जो है वह मुट्ठीभर (उस समय अप्रकाशित) व्यक्तिगत पत्र जे उन्ही लोगों को भेजे गए थे जो श्रील प्रभुपाद की सशरीर उपस्थिति में ही दीक्षा देना चाहते थे। इनमे से कुछ लोगों को तो आंदोलन मे प्रविष्ट हुए ज्यादा समय भी नही हुआ था। ऐसे मामलों मे उन्हे अपनी महत्त्वकांक्षा की पूर्ती करने के लिए कम से कम श्रील प्रभुपाद के देह त्यागने तक प्रतीक्षा करने के लिए कहा जाता था। चूँकि ये सब पत्र इत्यादि ६ जुलाई के पत्र के समय तक भी प्रकाशित नही किए गए थे। इससे हम समझ सकते है कि इनका इस्कॉन की भविष्य की दीक्षा प्रणाली से कई सीधा संबंध नही था।

श्रील प्रभुपाद की पुस्तकों और वार्तालाप में केवल उनके शिष्यों के गुरू बनने के आदेश ही मिलते है। वैसे शिष्य के दीक्षा गुरू बनने के सामान्य सिद्धांत को संबोधित किया गया है परन्तु श्रील प्रभुपाद अपने शिष्यों को दीक्षा गुरू बनकर अपने ही शिष्य बनाने का आदेश नही देते।

उपर्युक्त उदधृत वाक्य किसी भी रूप में ६ जुलाई के स्पष्ट आदेश का स्थान नही ले सकते। ६ जुलाई का आदेश सारे आंदोलन को भेजा गया प्रबन्धन प्रणाली का एक विशेष दस्तावेज है। वर्तमान म.आ.स.सि.(बहुल आचार्य परम्परा प्रणाली) को रेखांकित करने वाले इस तरह का कोई दस्तावेज नही है।

इस तरह यह विचार कि श्रील प्रभुपाद ने कई जगह और कई बार अपने शिष्यों को उनके प्रस्थान के तुरन्त बाद या कुछ देर बाद या कभी भी दीक्षा गुरू बनने का आदेश दिया था,महज एक कल्पना ही है।

सामान्यतः यह भी कहा जाता है कि श्रील प्रभुपाद ने बार-बार अपनी पुस्तकों,पत्रों,प्रवचनों एवं वार्तालापों में निश्चित रूप से यह स्पष्ट कर दिया था कि वे भविष्य की दीक्षा प्रणाली किस प्रकार चाहते थे,इसलिए यह जरूरी नही था कि श्रील प्रभुपाद इसको ६ जुलाई के पत्र में फिर से बतलाएँ। ऐसा दावा पूरी तरह गलत तो है हि बल्कि यह और अधिक असामंजस्य की स्थिति पैदा कर देता है। यदि श्रील प्रभुपाद की शिक्षाओं में यह बहुत स्पष्ट था कि उनकी अनुपस्थिति में वे दीक्षा प्रणाली को किस प्रकार जारी रखना चाहते थे और यदि उन्होंने सोचा था कि इस मामले में किसी विशेष निर्देश की आवश्यकता नही थी तो जी.बी.सी. ने एक विशेष आयोग का गठन कर उसे श्रील प्रभुपाद के पास क्यों भेजा ? इस आयोग का मुख्य लक्ष्य यही मालूम करना था कि दीक्षा कैसे दी जाएगी,विशेषकर जब श्रील प्रभुपाद हमारे बीच नही रहेंगे।(कृपया परिशिष्ट देखे,एपॉइंटमेंट टेप) उस समय श्रील प्रभुपाद दहि त्यागने का विचार कर रहे थे। ऐसी अवस्था में उनके वरिष्ठ शिष्य कुछ ऐसे आधारहीन प्रश्न पूछ रहे थे जिनका उत्तर अनुसार पिछले में श्रील प्रभुपाद कई बार दे चुके थे।

यदि श्रील प्रभुपाद ने स्पष्ट रूप से म.आ.स.सि. (वर्तमान में चलित बहुल आचार्य परम्परा प्रणाली) को स्थापित करने के लिए कहा था तो उन्होंने इसको स्थापित करने के संबंध में इतने कम आदेश क्यों छोड़े,जिसके कारण,श्रील प्रभुपाद के समाधि लेने के कुछ समय बाद ही उनके वरिष्ठ शिष्य श्रीधर महाराज के पास जाकर यह पूछने को बाध्य हो गए कि इस प्रणाली को किस प्रकार लागू किया जाए।

यदि सबके लिए यह अति स्पष्ट था कि श्रील प्रभुपाद चाहते थे कि उनके शिष्य गुरू बने तो जी.बी.सी. फिर 'जोनल आचार्य प्रणाली' (क्षेत्रीय आचार्य प्रणाली) का गठन क्यों किया ? यहाँ गुरू बनने का अधिकार कुछ लोगों तक ही सीमित था,और इस प्रणाली को एक

पूरे दशक यानी दस साल तक चलने दिया गया।
हालाँकि हम जी.बी.सी. के लेख जी.आई.आई. की आलोचना कर रहे है फिर भी इसका एक अंग श्रील प्रभुपद के परिवार को एकजुट करने का भाव रखता है। वह है ः

'एक शिष्य का एकमाज कर्तव्य है कि वह अपने गुरू की पूजा एवं सेवा करे। उसका मन इस बात से व्याकुल या ज्रस्त नही होना चाहिए कि वह किस प्रकार गुरू बने। एक भक्त,जो सच्चे मन से आध्यात्मिक प्रगति करना चाहता है,उसे चाहिए कि वह शिष्य बनने की कोशिश करे,गुरू बनने की नही।

(जी.आई.आई.,पृष्ठ २५, जी.बी.सी.,१६६५)

हम इससे पूरी तरह सहमत है।

८." शायद श्रील प्रभुपाद की किताबों मे कई ऐसा शास्त्रिक निर्देश है जिससे गुरू को दीक्षा देते वक्त शिष्य के समान ग्रह पर ही होना चाहिए ?"

श्रील प्रभुपाद की प्रस्तकों में ऐसा कोई कथन नही है। उनकी पुस्तकों मे सारे आवश्यक शास्त्रिक नियम दिये हुए है, अतः इस तरह का निषेध अपनी परम्परा में नही है।

श्रील प्रभुपाद के ऐसे कई कथन है जो यह स्पष्ट करते है कि गुरू-शिष्य संबंध शारीरिक निकटता पर निर्भर नहीं करते। (कृपया परिशिष्ट देखे) अतः श्रील प्रभुपाद के तिरोभाव उपरान्त ऋत्विक प्रणाली का उपयोग उनके इन निर्देशों के अनुरूप है। इन कथनों को पढ़ने से स्पष्ट हो जाता है कि जी•बी•सी• के कुछ सदस्यों ने कुछ अलग तरह का दृष्टिकोण प्रस्तुत किया है ः

'श्रील प्रभुपाद ने हमें सिखाया है कि गुरू-शिष्य परम्परा एक जीवंत संबंध है.... गुरू-शिष्य परम्परा का कानून है कि हमे एक जीवंत गुरू लेना चाहिये-जीवंत मतलब कि शारीरिक उपस्थित।'

(शिवराम स्वामी,इस्कॉन जर्नल, पृष्ठ ३१,गौर पूर्णिमा १६६०)

उपर्युक्त कथन और निम्नलिखित कथनों मे अंतर देखिये ः

'शारीरिक उपस्थिति महत्त्वपूर्ण नही है।'

(श्रील प्रभुपाद के कमरे में वार्तालाप,६/१०/७७ वृन्दावन)

षा

'शारीरिक उपस्थिति अनावश्यक है।'

(श्रील प्रभुपाद पज,१६/१/६७)

निश्चित ही, हमें एक बाहय गुरू की आवश्यकता है, क्योंकि प्राकृतिक गुणों के अधिन अवस्था में संपूर्ण रूप से परमात्मा का सहारा नही लिया जा सकता। परन्तु श्रील प्रभुपाद कही नही बताते कि शारीरिक गुरू मतलब सशरीर उपस्थित भी होना चाहिए।

'अतः हमे वाणी की साहयता लेनी चाहिए, शारीरिक उपस्थिति की नही'।
(चैतन्य चरितामृत, अंतिम शब्द)

श्रील प्रभुपाद ने इसका उदाहरण भी पेशा किया था। उन्होंने ऐसे कई शिष्यों को दीक्षा दी जिनसे वे कभी शारीरिक रूप में मिले ही नही। इससे यह तथ्य सर्वथा प्रमाणित हो जाता है कि गुरू से शारीरिक संबंध के बिना भी दीक्षा मिल सकती है। शास्त्रों में या श्रील प्रभुपाद द्वारा दीक्षा और शारीरिक उपस्थिति को जोड़ा नही गया है। अतः ऋत्विक प्रणाली का चलन शास्त्र एवं अपने आचार्य के व्यक्तिगत उदाहरण से प्रमाणिक सिद्ध होता है।

श्रील प्रभुपाद की किताबों के दीक्षा संबंधी भाग में लिखा है कि दीक्षा पाने की एक ही आवश्यकता है-

गुरू की सहमती। यह सहमति पूर्ण रूप से ऋत्विक को सौप दी गयी थी ः

'तो मेरा इंतजार किये बिना,तुम जिसे योग्य समझो। यह (तुम्हारे) विवेक पर निर्भर करेगा।'
(श्रील प्रभुपाद वार्तालाप,७/७/७७,वृन्दावन)

श्रील प्रभुपाद हमें निर्देश देते है कि –

'जहाँ तक दीक्षा के समय का सवाल है,सब गुरू की मर्जी पर निर्भर है....अगर सदगुरू,प्रमाणिक गुरू राजी हो जाते है,तो उसी समय दीक्षा मिल सकती है,उचित समय और स्थिति की प्रतिक्षा किये बिना भी।
(श्रील चरितामृत मध्य,२४.३३१,भावार्थ)

ऐसा कोई निर्देश नही है कि दीक्षा गुरू और संभावित शिष्य का किसी प्रकार का शारीरिक संपर्क होना चाहिए या अपनी सहमति देने के लिये दीक्षा गुरू की शारीरिक उपस्थिति जरूरी होनी चाहिए। (यहाँ श्रील प्रभुपाद सद्गुरू और दीक्षा गुरू को समान बता रहे है।) श्रील प्रभुपाद ने कई बार कहा है कि दीक्षीत होने की एक ही आवश्यकता है - उनके द्वारा दिये हुए नियमों का पालन –

'यह दीक्षा की प्रणाली है। शिष्य सहमति देता है कि आगे से वह कोई पाप कर्म नही करेगा....वह वचन देता है कि गुरू के आदेशों का निर्वाह करेगा। तब,गुरू उसे अपने संरक्षण में लेता है और उसे आध्यात्मिक मुक्ति तक उठा लेता है।'
(श्रील चरितामृत मध्य,२४.२५६,)

भक्त - औपचारिक दीक्षा कितनी महत्त्वपूर्ण है ?
श्रील प्रभुपाद - औपचारिक दीक्षा का मतलब है श्रीकृष्ण और उनके प्रतिनिधि के आदेशों का पालन करने की औपचारिक सहमति दी। वह औपचारिक दीक्षा है।
(श्रील प्रभुपाद प्रवचन,२२/२/७३,ऑकलैड)

श्रील प्रभुपाद ः मेरा शिष्य कौन है ? सबसे पहले उसे सारे अनुशासित नियमों का पालन करना होगा।
शिष्य ः जब तक कोई इनका पालन कर रहा हो, तब वह....

श्रील प्रभुपाद ः तब वह ठीक है।
(श्रील प्रभुपाद,प्रातः भ्रमण,१३/६/७६,डेट्रोइट)

'.....जब तक अनुशासन नही है,तब तक शिष्य का मतलब ही नही है। शिष्य वो जो अनुशासित हो।'
(श्रील प्रभुपाद,प्रातः भ्रमण,८/३/७६,मायापुर)

दीक्षा के अथे से क्या यह निष्कर्ष सकते है कि गुरू को इसी धरती पर सशरीर उपस्थित रहना होता है ?

'दीक्षा एक प्रणाली है जिससे दिव्य ज्ञान प्रकाशित होता है और पाप कर्म के फलों का नाश होता है। एक दक्ष व्यक्ति जिसे शास्त्रों का ज्ञान है इस प्रणाली को दीक्षा कहता है।'
(कृपया दीक्षा आकृति पृष्ट ८५ देखे)
(चैतन्य चरितामृत मध्य,१५.१०८, भावार्थ)

दीक्षा प्रणाली के अर्थ से ऐसा कुछ इंगित नही होता कि गुरू को शिष्य के साथ इसी धरती पर स्थित होन चाहिए। दूसरी ओर, श्रील प्रभुपाद के उपदेश एवं निजी उदाहरण स्पष्ट प्रमाणित करते है कि दीक्षा विधि के लिये आवश्यक तत्त्व गुरू की सशरीर उपस्थिति में लाये जा सकता है-

'दिव्य ज्ञान की प्राप्ति में किसि प्राकृतिक अवस्था से व्यवधान नही आ सकता'।
(श्रीमद-भागवतम्, ७.७.१,भावार्थ)

'वक्ता की प्रत्यक्ष अनुपस्थिति से दिव्य शब्द की शक्ति में कोई कमी नही आ सकती।'
(श्रीमद-भागवतम्, २.६.८,भावार्थ)

अतः दीक्षा के समस्त तत्त्व-दिव्य ज्ञान,मन्त्र प्राप्ति आदि,गुरू की सशरीर उपस्थिति के बिना भी सरलता से साँपे जा सकता है।

सारांश में, निश्चित रूप से दिखाया जा सकता है कि श्रील प्रभुपाद की पुस्तकों में ऐसा कोई शास्त्रिक निर्देश नही है जिससे धरती छोडने के उपरान्त गुरू दीक्षा नहीं दे सकता। यह आपत्ति की जाती है कि पूर्व में परम्परा में कोई ऐसा उदाहरण नही मिलता। परन्तु पूर्व के उदाहरणों से सिद्धांत बनाना शास्त्रिक निर्देश नहीं है। पूर्व उदाहरण एक शास्त्रिक सिद्धांत को लागू करते वक्त उदाहरणतया काम में लिये जा सकता है। परन्तु पूर्व उदाहरण की अनुपस्थिति में शास्त्रिक सिद्धांत बदला नही जा सकता। अपनी परम्परा शास्त्रिक निर्देशों पर आधारित है न कि पूर्व उदाहरणों पर। यही तथ्य इस्कॉन को दूसरे गौडिय वैष्णव संस्थाओं से अलग सिद्ध करती है। भारत में ऐसे कई कट्टरपंथी स्मर्थ ब्राह्मण है जो श्रील प्रभुपाद की निंदा करते है क्योंकि श्रील प्रभुपाद रीति-रिवाजों के साथ नही

चले।

शास्त्रिक उदाहरण और श्रील प्रभुपाद का निजी उदाहरण सिद्ध करते है कि दीक्षा किसी भी तरह से गुरू की शारीरिक उपस्थिति पर निर्भर नहीं करती।

६. "इस निर्देश को लागू करने से एक प्रणाली की स्थापना हो जायेगी जिसका न तो पूर्व में उदाहरण है न ऐतिहासिक आधार। इसलिए इस प्रणाली को नकार दिया जाना चाहिए।"

६ जुलाई के पत्र को उपर्युक्त कारण से नकारा नही जा सकता; क्योंकि श्रील प्रभुपाद ने कई नए नियम बनाये थे- (नाम जप की संख्या ६४ से घटाकर १६ करना,विवाह करना, महिलाओं कों मंदिर में रहने की

इजायत देना,टेप के द्वारा गायत्री मंत्र देना आदि।) यहाँ तक कि हमारी परम्परा के आचार्यों का विशिष्ट लक्षण है कि करीब-करीब सभी ने नए संस्कार और रीतियाँ स्थापित की है।

एक आचार्य होकर यह उनका अधिकार है। अपितु शास्त्रिक निर्देशों के अनुरूप ही। जैसा पहले बताया गया था,इस ग्रह पर गुरू की सशरीर अनुपस्थिति में ऋत्विक का उपयोग कोई भी शास्त्रिक निर्देशों का उल्लंघन नही करता। श्रील प्रभुपाद की पुस्तकों में सारे जरूरी शास्त्रिक निर्देशों का वर्णन है। उनकी किताबों में ऐसा कही निर्देश नही आता कि दीक्षा के समय गुरू को उसी ग्रह पर रहना होता है। अतः यह कोई नियम नही है। उनके शारीरिक प्रस्थान उपरान्त ऋत्विक का प्रयोग <u>बाह्य रीति</u> में फर्क हो सकता है,<u>नियम</u> मे नही।

श्रील प्रभुपाद ने दीक्षा देने हेतु कई नई रीतियों एवं संस्कारों का उपयोग किया (कृपया पृष्ठ ४६पर आकृति देखे) परन्तु हम उन्हें नकार नही देते।

यह तर्क भी दिया जा सकता है कि कुछ रीतियों में बदलाव उन्होंने अपनी पुस्तकों में संबोधित किये थे। यह सत्य है,परन्तु कई ऐसी रीतियाँ भी है जो उन्होंने संबोधित नही की। इसके अलावा, ऋत्विक प्रणाली की अपनी किताबों में सविस्तार विवरण देने की आवश्यकता नही थी;क्योंकि इस प्रणाली का मॉडल उन्होंने व्यवहारिक रूप से कई वर्षो तक लागू किया हुआ था। ६ जुलाई के पत्र से उन्होंने इस प्रणाली को बस अन्तिम रूप दिया था कि सशरीर अनुपस्थिति में यह प्रणाली कैसे चलेगी। श्रील प्रभुपाद नें हमें सिखाया था कि आँखे बंद करके रितियों का पालन नही करना चाहिए ः

'हमारी एकमात्र रीति है कि किस प्रकार विष्णु को संतृष्ट करना।
(श्रील प्रभुपाद भगवद्-गीता प्रवचन,३0/७/७३,लंदन)

'नही। रीति,धर्म,यह सब भौतिक है। यह सब उपाधियाँ है।'
(श्रील प्रभुपाद वार्तालाप,१३/३/७५0,तेहरान)

अपनी परम्परा के पूर्व आचार्यों ने क्या बिल्कुल श्रील प्रभुपाद जैसे ही आदेश दिये थे – यह तथ्य औपचारिक है। हमारा कर्तव्य सिर्फ अपने आचार्य के आदेश का पालन करना है।

<u>अगर कोई दीक्षा प्रणाली इसलिए नकार दी जानी चाहिए क्योंकि उसका पूर्व में कोई उदाहरण नही मिलता,तो उस तर्क से इस्कॉन की वर्तमान गुरू प्रणाली को नकार देना चाहिए</u>।

ऐसा कभी नही हुआ कि दीक्षा गुरूओं का समूह एक समिति के अधिन हो जो उनकी दीक्षा संबंधित कार्यवाहियों को निलंबित या बर्खास्त कर सकती

है। हमारे संप्रदाय में पूर्व में ऐसा कोई दीक्षा आचार्य नही हुआ जिसे अपनी पदवी पर दो-तिराई बहुमत से स्थापित किया गया हो और उसके उपरान्त पाप कर्मों में लिप्त पाए जाने पर गुरू-शिष्य परम्परा से हटा दिया गया हो। हम इन अनियमित प्रचलनों को नकराते है,इसलिए नही कि यह परम्परा में नही है,परन्तु इसलिए कि ये प्रचलन मूल रूप से श्रील प्रभुपाद के उपदेशों से बिल्कुल अलग है और उनके अन्तिम आदेश का सीधा उल्लंघन है।

यह तर्क कि ऋत्विक जैसी कोई प्रणाली भी शास्त्रों में नही मिलती है, यहाँ लागू नही होता। कुछ वैदिक नियमों के अनुसार शूद्र और महिलाओं को बाह्मण दीक्षा कभी नही देनी चाहिए ः

'शूद्र को दीक्षा नही दी जा सकती....यह दीक्षा वैदिक नियमों के आधार पर नहीं दी जा रही, क्योंकि योग्य बाह्मण मिलना बहुत कठिन है।'

(श्रील प्रभुपाद प्रवचन,२६/३/७१, बम्बई)

अतः, नियमानुसार, श्रील प्रभुपाद द्वारा अपने पाश्चात्य शिष्यों का दीक्षा नही देनी चाहिए थी। इन सबका जन्म न्यूनतम वैदिक वर्ण से भी निचले स्तर पर हुआ था। श्रील प्रभुपाद उच्चस्तरीय शास्त्रिक निर्देशों का पालन कर इन वैदिक नियमों को लाँघ गये। उन्होंने इन निर्देशो को इस तरह लागू किया जैसा पहले किसी ने नही किया था।

'जैसे हरि को सामाजिक नियमों के अधिन नही लाया जा सकता, वैसे ही उनके प्रतिनिधि गुरू को भी नही।'

(चैतन्य चरितामृत मध्य,१०.१३६,अनुवाद व भावार्थ)

'अतः पुरूषोत्तम भगवान एवं ईश्वर पुरी की करूणा सामाजिक नियम के अधिन नही आती।'

(चैतन्य चरितामृत मध्य,१०.१३७)

महत्त्वपूर्ण तथ्य यह है कि ऋत्विक प्रणाली पूर्ण रूप से निराली सकती है (जहाँ तक हमें मालूम है)
परन्तु वह किसी शास्त्रिक निर्देशक का उल्लंघन नही करती। यह श्रील प्रभुपाद की आध्यात्मिक निपुणता ही है कि वे ऐसे शास्त्रिक निर्देशों को समय और स्थिति अनुसार नये और करूणामयी तकों से लागू कर पाए।

शायद हमने अभी तक यह नही जाना है कि श्रील प्रभुपाद कितने अद्वितीय है। ऐसे जगद आचार्य पहले कोई भी नहीं हुए। पहले के किसी आचार्य ने यह नही कहा था कि उनकी पुस्तके भविष्य के दस हजारे वर्षो तक कानून की पुस्तकें होगी। इस्कॉन जैसी संस्था पहले कोई नही हुई। हम इस बात पर आश्चर्य क्यो व्यक्त करे कि इस तरह के अद्वितीय व्यक्ति ने एक अलग तरह की दीक्षा प्रणाली स्थापित की?

१०. " क्योंकि ऋत्विक प्रणाली का ६ जुलाई १९७७ के पूर्व कोई स्पष्ट निर्देश नहीं था, अतः इसको श्रील प्रभुपाद के शारीरिक प्रस्थान उपरान्त चालू रखने का उनका उद्देश नही था।"

यह आपत्ति इस दृष्टिकोण पर आधारित है कि श्रील प्रभुपाद आंदोलन पर कोई नई चीज नही उछालेंगे। यह एक निरर्थक आपत्ति है; क्योंकि इसका मतलब यह हुआ कि गुरू के किसी भी आदेश को नकार देना चाहिए अगर वह आदेश नया हो या पूर्व आदेशों से जरा

भी भिन्न हो। इससे यह तात्पर्य निकलता है कि अपने अंतिम महीनों में श्रील प्रभुपाद को अपनी संस्था संबंधित कोई भी महत्त्वपूर्ण आदेश नही जारी कारना चाहिए थे जब तक कि हर कोई उन आदेशों से पहले से ही वाकिफ न हो।

जैसा हम पहले समझा चुके है,ऋत्विक प्रणाली नई नही है। ६ जुलाई के पत्र के पूर्व भी आंदोलन में दीक्षा मूल रूप से प्रतिनिधियों द्वारा ही दी गई थी। श्रील प्रभुपाद इस्कॉन के दीक्षा गुरू थे,और ज्यादातर दीक्षा संस्कार,ख्यासतौर से अंतिम वर्षो में,टेंपल प्रेसिडेंट या कोई और प्रतिनिधि या पुजारी द्वारा किये जाते थे।

६ जुलाई १६७७ के पत्र के बाद जो भिन्न विधि उभर कर आयी वह भी नए शिष्यों को स्वीकारते वक्त श्रील प्रभुपाद की सहमति की जरूरत नही। जो पत्र अब तक नए शिष्यों को भेजा जाता था,उस पर श्रील प्रभुपाद के हस्ताक्षर नही होंगे। उनके नामों का चयन ऋत्विक द्वारा होगा। हाँ,यह प्रणाली अब एक अपरिचित शब्द से जुड गई - ऋत्विक।

एक प्रतिनिधि के माध्यम से एक प्रामाणिक आचार्य द्वारा दीक्षा लेना,यह अनुभव कई हजारों शिष्यों को हुआ था।

६ जुलाई का पत्र 'ऋत्विक' का मतलब परिभाषित करता है –'आचार्य का प्रतिनिधि'। स्पष्टतः प्रतिनिधियों के माध्यम से दीक्षा देने के प्रणाली कतिपय 'नई' नही थी। इस तरह की प्रणाली का संस्था के कुछ विस्तार उपरान्त ही श्रील प्रभुपाद ने उपयोग करना प्रारम्भ कर लिया था। ६ जुलाई का पत्र सिर्फ इसको बरकरार रखता था।

<u>यह सुनकर भारी धक्का क्यों लगा कि यह प्रणाली १४ नवम्बर १६७७ के उपरान्त भी लागू होनी थी ?</u>

'ऋत्विक' शब्द कइयों को अपरिचित लगा होगा,पर यह नया नही था। यह शब्द और इसके साधित शब्दों का ३२ बार श्रील प्रभुपाद की पुस्तकों में उपयोग किया गया है। 'नया' यह था कि जो प्रणाली पिछले कई वर्षो से चल रही थी,उसको अब भविष्य में जारी रखने हेतु संशोधन करके लिखित रूप में प्रस्तुत किया गया। यह आश्चर्य की बात नही है,क्यों कि श्रील प्रभुपाद उस समय अपने आंदोलन को भविष्य में चलाने हेतु कई लिखित दस्तावेज जारी कर रहे थे। यह प्रबन्ध तो ऐसी प्रणाली का अनुमोदन था जो सारे भक्त सामान्य समझने लगे थे।

'नया' तो 'क्तत्विको' द्वारा श्रील प्रभुपाद के भौतिक एवं आध्यात्मिक शुद्ध उत्तराधिकारी रूप मे रूपान्तरित होना था। इस ईजाद से इतना गंभिर आघात लगा कि कई सौ शिष्य आंदोलन छोड गये। हजारों ने बाद में छोड दिया।

<u>सारांश में</u> – हमने यहाँ दर्शा दिया है कि श्रील प्रभुपाद के सशरीर प्रस्थान उपरान्त ऋत्विक प्रणाली को रोकने के लिए कोई स्पष्ट प्रमाण नही है। न ही ऋत्विक से दीक्षा गुरू में रूपान्तरित होने का प्रमाण है। यानी संशोधन (अ) एवं

(ब) गलत है। अगर संशोधन (अ) एवं (ब) की सहमती का कोई बहुत प्रभावशाली अप्रत्यक्ष प्रमाण हो तो भी प्रत्यक्ष अग्रणी होता है। वैसे हम दिखा चुके है कि कोई अप्रत्यक्ष प्रमाण भी नही है। अतः -

(क) एक आदेश प्रेषित हुआ जो समस्त आंदोलन का पालन करना था – प्रत्यक्ष प्रमाण।

(ख) स्वयं इस आदेश और संबंधित निर्देशों को परखने से ऋत्विक प्रणाली का ही प्रमाण मिलता है – प्रत्यक्ष प्रमाण।

(ग) ऐसा कोई अप्रत्यक्ष प्रमाण नही है कि श्रील प्रभुपाद ने अपने सशरीर प्रस्थान उपरान्त ऋत्विक प्रणाली को रोकने के लिए निर्देशक दिये थे।

(घ) इस अन्तिम आदेश का शास्त्रों,दूसरे निर्देश,आदेश से संबंधित विशेष स्थिति या पृष्ठ भूमि,आदेश का प्रसंग या और कुछ में ऐसा प्रमाण नही है जिससे श्रील प्रभुपाद के सशरीर प्रस्थान उपरान्त ऋत्विक प्रणाली को रोक चाहिए। आश्चार्य तो यह है कि आपत्तियों को परखने से ऋत्विक प्रणाली के ही अनुमोदन का अप्रत्यक्ष प्रमाण मिलता है।

उपर्युक्त विश्लेषण की दृष्टि से, हम विनम्रता से कहना चाहेंगे कि श्रील प्रभुपाद के दिक्षा संबंधी अंतिम आदेश १४ नवम्बर १९७७ को अवरूद्ध करना कम से कम एक मन्गढ़त और गैरकानूनी कार्य तो है ही। इन गलत संशोधनों (अ) एवं (ब), जो इस्कॉन की वर्तमान गुरू प्रणाली का आधार है, के अनुमोदन के लिए हमें कोई प्रमाण नही मिलता। श्रील प्रभुपाद के इस प्राथमिक निर्देश का पालन करना उनके समस्त शिष्यों, अनुयायियों और सेवकों का प्रथम कर्तव्य है।

इस काम मे सहायता देने के लिए अब हम २८ मई के वार्तालाप ले परखेंगे। साथ में हम उन संबंधित आपत्तियों को भी देखेंगे जो भ्रम पैदा करती है।

'अपॉइंटमेंट टेप' (नियुक्ति का टेप)

जी.बी.सी. के अनुसार ६ जुलाई के आदेश में दोनो संशोधन (अ) एवं (ब) करने का एकमात्र कारण है ६ मई,१६७७ को वृन्दावन में हुआ वार्तालाप। वे संशोधन है ः

संशोधन (अ) ः श्रील प्रभुपाद द्वारा इन प्रतिनिधियों या ऋत्विक की नियुक्ति केवल तत्कालीन थी और श्रील प्रभुपाद के देह त्यागने पर इसका अंत होना था।

संशोधन (ब) ः अपने प्रतिनिधित्व या ऋत्विक का दायित्व त्याग कर ये ऋत्विक अपने आप दीक्षा गुरू बन जाएँगे। दीक्षा देकर वे लोगों को अपना शिष्य बनाएँगे,श्रील प्रभुपाद का नही।

अतः इस भाग में २८ मई को हुए वार्तालाप को बारीकी से देखा जायेगा कि क्या इस वार्तालाप से दोनों संशोधन करने का पर्याप्त कारण बनता है।

जी.बी.सी. का पूर्ण पमाण केवल यही वार्तालाप है। तो भी आश्चार्य की बात तो यह है कि इस एक वार्तालाप की चार प्रतिलिपियाँ है। यह निम्नलिखित चार लेखों मे सम्मिलित है ः

१६८५ : अण्डर माई आर्डर (रविन्द्र स्वरूप दास)
१६६० : इस्कॉन जर्नल (जी.बी.सी.)
१६६४ ः कन्टीन्यूइंग दी परम्परा (शीवराम स्वामी)
१६६५ ः गुरूस एण्ड इनिशिएशन इन इस्कॉन (जी.आई.आई.) (जी.बी.सी.)

एक ही वार्तालाप की चार अलग-अलग प्रतिलिपियों से इसकी प्रमाणिकता पर कोई खडे हो जाते है,जैसे-ठीक प्रतिलिपि कौनसी है ? अलग-अलग प्रतिलिपियों क्यों है ? क्या ये प्रतिलिपियाँ कई वार्तालापों को सम्मिलित कर बनाई गई है ? क्या यह टेप ही कई वार्ता लापों को जोड कर बनाया हुआ है ? क्या इस वार्तालाप के अलग-अलग टेप जारी किये गये है ? कौनसा सही है ?

इन सब प्रश्नों से इस वार्तालाप की प्रामाणिकता पर ही शक हो जाता है ? हम कैसे ६ जुलाई के पत्र के स्पष्ट हस्ताक्षरयुक्त आदेश को इस संदेहास्पद प्रमाण से बदल सकते है ?

तो भी इस वार्तालाप की चारों प्रतिलिपियों को सम्मिलित कर हम इस प्रमाण को परखते है –

(१) सतस्वरूप दास गोस्वामी ः अब हमारा अगला प्रश्न भविष्य की दीक्षाओं पर है,विशेषतया तब जब
(२) आप हमारे बीच नही रहेंगे। हम जानना चाहते है कि पहली और दूसरी
(३) दीक्षाओं का किस प्रकार प्रबन्ध किया जायेगा।
(४) श्रील प्रभुपाद ः हाँ। मै तुममे से कुछ को अनमोदित करूँगा। जब यह खत्म हो
(५) जायेगा तब मै तुममे से कुछ को ऑफिशिएटिंग आचार्य के कार्य के
(६) लिए अनुमोदित करूँगा।
(७) तमाल कृष्ण गोस्वामी ः क्या उसे ऋत्विक आचार्य कहा जायेगा ?

(८) श्रील प्रभुपाद ः ऋत्विक। हाँ।
(९) सतस्वरूप दास गोस्वामी ः (फिर) उनका क्या संबंध होता है जो व्यक्ति दीक्षा देता है और.....
(१०) श्रील प्रभुपाद ः वह गुरू है। वह गुरू है ।
(११) सतस्वरूप दास गोस्वामी ः पर वह आपकी ओर से करता है।
(१२) श्रील प्रभुपाद ः हाँ। षह औपचारिकता है; क्योंकि मेरी उपस्थिति मे किसी को भी
(१३) गुरू नही बनना चाहिए,इसलिए मेरी ओर से, मेरी आज्ञा पर,'अमार
(१४) आज्ञाय गुरू होना', (वह) होगा वस्तुस्थिति में गुरू। पर मेरी आज्ञा
(१५) उपरान्त।
(१६) सतस्वरूप दास गोस्वामी ः तो वे (वह) आपके भी शिष्य माने जायेंगे?
(१७) श्रील प्रभुपाद ः हाँ।वे शिष्य है, (पर) (क्यों) माने.... कौन ?
(१८) तमाल कृष्ण गोस्वामी ः नही। यह पूछ रहे है कि यह ऋत्विक आचार्य,वे औपचारिकतापूर्वक
(१९) दीक्षा दे रहे है.....(उनके) उन व्यक्तियों को जिन्हे ये दीक्षा देंगे,वे
(२०) किनके शिष्य होंगे।
(२१) श्रील प्रभुपाद ः वे उसके शिष्य होगे।
(२२) तमाल कृष्ण गोस्वामी ः वे उसके शिष्य होगे।
(२३) श्रील प्रभुपाद ः जो दीक्षा दे रहा है.....(उसके) (वह) परम शिष्य।
(२४) सतस्वरूप दास गोस्वामी ः (ठिक है)
(२५) तमाल कृष्ण गोस्वामी ः (अब समझ गये)
(२६) तमाल कृष्ण गोस्वामी ः (अब आगे चलते है)
(२७) सतस्वरूप दास गोस्वामी ः अब हमारा अगला प्रश्न है....
(२८) श्रील प्रभुपाद ः जब मै आदेश दूँ 'तूम गुरू बनो',वह सामान्य गुरू बनेगा।बस।वह
(२९) ः मेरे शिष्य बनेगा। (बस)

जैसा हम पहले बता चुके है, न तो ६ जुलाई का पत्र और न ही दूसरा कोई दस्तावेज इस वार्तालाप का उल्लेख करता है। यह एक आश्चार्यजनक तथ्य है क्योंकि जी•आई•आई• मे बतलाया गया है कि ६ जुलाई का पत्र समजझने के लिए यह संक्षिप्त वार्ता लाप अति आवश्यक है।

विश्व भर मे फैले अपने आंदोलन को श्रील प्रभुपाद इस तरह से आदेश नही देते थे। यानी पुराने चार्तालापों को ढूँढ़ कर अपूर्ण लिखित निर्देशों का समजझना।

हम जानते है कि यह विषय १० हजार साल तक चलने वाले संकीर्तन आन्दोलन में दिक्षा प्रदान करने की प्रणाली जैसा महत्त्वपूर्ण विषय है। साथ में श्रील प्रभुपाद जानते थे कि इसी विषय पर गौड़िय मठ टूटा था। इन सब तथ्यों को ध्यान मे रखकर विश्वास नही होता कि वे इस विषय को इस अभिज्ञता से संभालेंगे।परन्तु वर्तमान
की जी.बी.सी. धारणा के अनुसार श्रील प्रभुपाद ने यही किया था। चलिए अब हम वार्तालाप को पंक्ति-दर-पंक्ति देखे और फिर उन पंक्तियों को भी देखे जो जी.बी.सी. के अनुसार ६ जुलाई के आदेश को बदलती है।

पंक्ति १ से ३ - यहाँ सतस्वरूप दास गोस्वामी ने श्रील प्रभुपाद से एक विशेष प्रश्न पूछा कि भविष्य में दीक्षा कैसे मिलेगी – विशेषतया जब आप हमारे बीच नही रहेंगे। जो भी उत्तर श्रील प्रभुपाद देंगे वह इस विषय से ही संबंधित होगा,क्योंकि सतस्वरूप उसी समय परिधि के बारे मे पूछ रहे है यानी 'जब आप हमारे बीच नही रहेंगे'।

पंक्ति ४ से ८ - यहाँ श्रील प्रभुपाद,सतस्वरूप दास गोस्वामी के प्रश्न का उत्तर दे रहे है। उन्होंने कहा। कि वे कुछ शिष्यों को 'आफिशिएटिंग आचार्य' या 'ऋत्विक' नियुक्त करेंगे। यह देने के बाद वे चुप ही गये। इस विषय पर वे और कुछ नही बोले। नही उन्होंने इस उत्तर को और समझाना चाहा। इसका अर्थ यह हुआ कि यही उनका पूर्ण उत्तर था। इस धारणा के दो विकल्प हो सकते है –

१. श्रील प्रभुपाद ने जानबुझकर इस प्रश्न का उत्तर दिया।

२. या उन्होंने सतस्वरूप दास गोस्वामी का प्रश्न ठीक से नही सुन और यह समझ बैठे कि वे पूछ रहे है कि अभी जब वे धरती पर है तब क्या करना है।

श्रील प्रभुपाद का कोई भी शिष्य विकल्प १ को नही मानेगा। विकल्प २ अगर ठीक होता तो यह वार्तालाप ६ जुलाई के पत्र को बदल नही सकता;क्योंकि तब इस वार्तालाप में भविष्य की दीक्षाओं के लिए कुछ नही कहा गया होगा।

कई बार तर्क दिया जाता है कि पूर्ण उत्तर अलग-अलग भागों में बाकी के वार्तालाप में उभर कर आयेगा। इस तर्क के साथ मुश्किल यह है कि श्रील प्रभुपाद तब ही ठीक उत्तर दे पायेंगे अगरः

- किसी ने और प्रश्न पुछा।
- भाग्यवश उन्होंने सही प्रश्न पूछ लिए।

इस तरह उत्तर देने का यह एक विलक्षण अंदाज होगा जो श्रील प्रभुपाद का स्वभाव नही था। विशेषतया अपने विश्वव्यापी आंदोलन को निर्देश देते वक्त तो नही। जी.बी.सी. के अनुसार,जो आदेश केवल चार महीने चलना था उसे अपने सम्पूर्ण आन्दोलन को पत्र द्वारा आदेश जारी करने के लिए श्रील प्रभुपाद ने इतनी मुश्किलों से किया वही जो निर्देश दस हजार वर्ष चलना था उसे इस प्रकार अस्पष्ट रूप से एक निजी वार्तालाप में जारी कर दीया।

इस तरह स्पष्ट ही जाता है कि इस वार्तालाप से संशोधन (अ) एवं (ब) नही किये जा सकत। श्रील प्रभुपाद से पूछा गया कि दीक्षा कैसे दी जायेगी,विशेषतया आपके जाने के उपरान्त तो वे उत्तर देते है कि वे ऋत्विक मनोनीत करेंगे। यह उत्तर जी.बी.सी. के प्रस्तावित संशोधनों का खंडन करता है और इस तथ्य को और मजबूती देता है कि ६ जुलाई का आदेश 'इस समय से' लागू होना था।

पंक्ति ६ से १० – यहाँ सत्स्वरूप दास गोस्वामी पूछते है कि दीक्षा देने वाले का क्या संबंध है। सतस्वरूप दास गोस्वामी के प्रश्न को पूरा

करने से पहले ही श्रील प्रभुपाद तत्काल उत्तत देते है,' वह गुरू है'। परिभाषा के अनुसार, क्योंकि ऋत्विक एक गुरू हो ही नही सकते,अतः श्रील प्रभुपाद जो असल में दीक्षा दे रहे है यानी वे खुद को ही दीक्षा पाने वालों का 'गुरू' बता रहे है। यह ६ जुलाई के पत्र से स्पष्ट हो जाता है जहाँ तीन बार कहा गया है कि दीक्षा पाने वाले श्रील प्रभुपाद के शिष्य होंगे।

खई बार यह अद्भुत तर्क दिया जाता है कि श्रील प्रभुपाद कहते है,'वह गुरू है' वे ऋत्विक के बारे में कह रहे है। यह मूक एक तर्क ही है क्योंकि श्रील प्रभुपाद ने कुछ ही समय पहले ऋत्विक की परिभाषा दी है- 'आफिशिएटिंग आचार्य' यानी किसी प्रकार का संस्कार करने वाला पुजारी। ६ जुलाई के पत्र में श्रील प्रभुपाद स्पष्टतया बतलाते है कि दीक्षा संस्कार ये पुजारी करेंगे। द्यो श्रील प्रभुपाद के नए शिष्यों को अध्यात्मिक नाम देंगे और गायत्री दीक्षा में यज्ञोपवीत पर जाप करेंगे। सब श्रील प्रभुपाद की ओर से। बस। यहाँ कही भी दीक्षा गुरू बनकर अपने शिष्य बनाने के बावत नही बोला गया है। पत्र में ऋत्विक
की परभिाषा-'आचार्य के प्रतिनिधि' दे रखी है। उन्हे आचार्य की ओर से कार्य करना था न कि खुद आचार्य बन जाना था। अगर वे गुरू ही थे,तो शुरू से ही श्रील प्रभुपाद ने उन्हे गुरू क्यों नही बोला ? क्यो 'ऋत्विक' बोलकर भ्रम पैदा किया ?

श्रील प्रभुपाद जब भी अपने आचार्य होने संबंधित आध्यात्मिक एवं प्रबंधन विषयों की चर्चा करते थे तब वे तृतीय व्यक्ति के व्यवहार में बोलते थे। यहाँ इसी तरह हुआ; क्योंकि सतस्वरूप दास गोस्वामी ने अपना प्रश्न उसी अंदाज में पूछा था।

अतः इस वार्तालाप से तभी कुछ मतलब निकलता है जब श्रील प्रभुपाद ही 'गुरू' है, जो नये शिष्यों को ऋत्विक की ओर से दीक्षा दे रहे है।

श्रील प्रभुपाद का उत्तर जहाँ पूर्णयता स्पष्ट है वहाँ प्रश्न वाले के दिमाग में लगता है थोड़ा भ्रम था। ग्यारवी पंक्ति में सतस्वरूप दास गोस्वामी 'ऋत्विक' समझ रहे है वहाँ श्रील प्रभुपाद 'वह' मतलब खुद को तृतीय व्यक्ति के रूप में संबोधित कर रहे है। ऐसा इसलिए क्योंकि केवल श्रील प्रभुपाद ही समस्त प्रणाली में दीक्षा देने वाले है। अपने शिष्यों के उपर्युक्त भ्रम के बाद भी अगले उत्तर में सतस्वरूप दास गोस्वामी के अंदाज से श्रील प्रभुपाद मेल खाने लगते है।

पंक्ति १२ से १५- जी.आई.आई. के अनुसार यह संशोधन (अ) का कारण है। यह समझने से पहले कि ये पंक्तियाँ कैसे इस संशोधन का प्रमाण दे सकती है,हमे पंक्ति १ से ८ का विश्लेषण फिर से याद कर लेना चाहिए।

अगर पंक्ति १२ से १५ संशोधन (अ) का प्रमाण है तो ये पंक्ति १ से ८ के विपरित है जहाँ श्रील प्रभुपाद ने पहले ही बता दिया था कि विशेषतया उनके प्रस्थान के उपरान्त ऋत्विक मनोनीत किये जायेंगे। इसलिए अगर पंक्ति १२ से १५ द्वारा संशोधन (अ) प्रामाणिक हो जाता है तो इसका मतलब यह होगा कि श्रील प्रभुपाद

खुद अपने कथन का खंडन कर रहे है। विपरीतात्मक कथनों से यह वार्तालाप एक प्रमाण के रूप में बेकार हो जाता है। अतः केवल ६ जुलाई का पत्र ही भविष्य की दीक्षा प्रणाली लागू करने का प्रमाण रह जाता है।

पर क्या अपने प्रस्थान उपरान्त ऋत्विक प्रणाली को रोकने

का यहाँ प्रमाण मिलता है ?

१२ से १५ पंक्ति को एक बार फिर पढ़ने से इतना तो ज्ञात हो जाता है कि अपनी उपस्थिति में ऋत्विक को कार्य करना ही है;क्योंकि उनकी उपस्थिति में वे कभी गुरू नही बन सकते। यहाँ भी श्रील प्रभुपाद वही नियम दोहरा रहे है जो वे महत्त्वकांक्षी शिष्यों के सम्मुख दोहराते थे कि गुरू की उपस्थिति में उनकी ओर से ही कार्य करना चाहिए। परन्तु श्रील प्रभुपाद ऐसा कुछ नही कहते कि उनके सशरीर प्रस्थान उपरान्त 'उनकी ओर से' कार्य करना रोक देना है। वे यह भी नही कहते कि 'उनकी ओर से' कार्य करना केवल उनकी सशरीर उपस्थिति में ही होगा। वरन उन्होंने अपनी सशरीर उपस्थिति को 'उनकी ओर से' कार्य करने से बिल्कुल नही जोडा है। अपितु यहाँ ऋत्विक को 'गुरू नही बनने' से जोडा गया है।

दूसरे शब्दों में,इस वार्तालाप के समय तक,जिस कारण से वे दीक्षा गुरू नही बन सकते थे,वह था श्रील प्रभुपाद की सशरीर उपस्थिति,परन्तु यह एकमात्र कारण नही था। दूसरे कारण अगली पंक्तियों से स्पष्ट हो जायेंगे।

१३ वी पंक्ति में श्रील प्रभुपाद कहते है – 'मेरे आदेश पर'। १३ वी पंक्ति में फिर इसको दोहराते है – 'परन्तु मेरे आदेश से' और २८ वी पंक्ति में भी – 'जब मै आदेश दूँ'। जैसा हम पहले बतला चुके है,गुरू के विशेष आदेश द्वारा ही खुद गुरू बना जा सकता है;और यह ही आदेश होता तो श्रील प्रभुपाद क्यों कहते – 'जब मै आदेश दूँ ?' जी.बी.सी. के अनुसार यह ही वस्तुतः आदेश है;अगर ऐसा होता तो श्रील प्रभुपाद ने निश्चित ही कुछ ऐसा कहा होता 'अब मै तुम्हे आदेश देता हुँ,जैसे ही मै नही रहुँ,तो तुम ऋत्विक छोड खुद दीक्षा गुरू बन सकते हो'।

परन्तु,जैसा दिखता है,इस तरह का कोई भी कथन २८ मई के वार्तालाप में नही मिलता।

अतः पंक्ति १२ से १५ में ऐसा कुछ नही है जिससे पंक्ति १ से ८ में श्रील प्रभुपाद द्वारा दिये गये स्पष्ट कथन को बदला जाये;पंक्ति १ से ८ का मतलब अब भी स्पष्त दिखता है। और ६ जुलाई का आदेश अब भी बदला नही जा सकता है।

पंक्ति १२ से १५ से जो स्पष्ट होता है वह यह कि ऋत्विक प्रणाली श्रील प्रभुापाद की सशरीर उपस्थिति में चलने थी। पर ऐसा कही नही लिखा कि केवल सशरीर उपस्थित में ही चलनी चाहिए। ६ जुलाई कप पज में 'इस समय से' शब्द सप पूर्णतया स्पष्ट हो जाता है कि ऋत्विक प्रणाली आगे भी चलती रहनी थी। 'इस समय से' का मतलब होता है इस समय से आगे। श्रील प्रभुपाद की सशरीर उपस्थित या अनुपस्थिति से कुछ फर्क नही पड़ता।

हम आगे पढते है -
पंक्ति १६ से १७- आश्चार्यजनक रूप से अब सतस्वरूप दास गोस्वामी का प्रश्न-'तो वे आपके भी शिष्य माने जायेंगे' प्रथम पुरूष में ही है। श्रील प्रभुपाद उत्तर देते है,'हाँ वे शिष्य है....'। इस प्रकार वे एक बार फिर भविष्य के शिष्यों को अपना बताते है। वैसे यह स्पष्ट नही है कि श्रील प्रभुपाद आगे क्या कहने वाले थे, तो भी उत्तर का पहला भाग स्पष्ट है जिसमे उनसे
एक सीधा प्रश्न पूछा गया था और उन्होंने उत्तर दिया, 'हाँ'।

अगर जी.बी.सी. संशोधन (अ)एवं(ब) को प्रमाणित बताना चाहती थी तो श्रील प्रभुपाद को कुछ इस तरह से उत्तर देता था,'नही,वे मेरे शिष्य नही है।' जो श्रील प्रभुपाद आगे कहना चाह रहे थे,वह महत्त्वपूर्ण नही है; क्योंकि अब किसी को मालूम नही चल सकता। हम केवल

इतना जानते है कि जब उनसे पूछा गया कि क्या भविष्य में शिष्य होंगे तो उन्होंने उत्तर दिया,'हाँ'।

पंक्ति १८ से २१- तमाल कृष्ण गोस्वामी को लगा कि कुछ भ्रम हो रहा है अतः उन्होंने श्रील प्रभुपाद को बीच में टोका। वे सत्स्वरूप दास गोस्वामी के प्रश्न को और स्पष्ट करवाना चाह रहे थे। उन्होंने पूछा कि ऋत्विक जब दीक्षा देते है तब शिष्य किनके शिष्य होंगे। पुनः श्रील प्रभुपाद कहते है,' वे उसके शिष्य होंगे'। कृपया ध्यान दीजिए कि प्रश्न तृतिय प्ररूष में था अतः श्रील प्रभुपाद ने भी अपना उत्तर तृतीय पुरूष में ही दिया।अतः यहाँ भी वे अपने आपको है संबोधित कर रहे है क्योंकि ऋत्विक अपनी परिभाषानुसार खुद के शिष्य नही बना सकते। इसका प्रमाण यह है कि श्रील प्रभुपाद ('उसके शिष्य....जो दीक्षा हो रहा है') एकवचन में उत्तर दे रहे है जबकि प्रश्न बहुवचन में था (ये ऋत्विक आचार्य)।

कई बार यह भी तर्क दिया जाता है कि तमाल कृष्ण गोस्वामी ने इस तरह से प्रश्न पूछा जिससे यह स्पष्ट हो गया कि भविष्य मे यह ऋत्विक दीक्षा गुरू बन जायेंगे। परन्तु श्रील प्रभुपाद ने कभी भी ऋत्विक की कार्य पद्धति में बदालाव का जिक ही नही किया है;अतः वे हर समय ऋत्विक का ही कार्य करेंगे और वे कभी अपने शिष्यों के दीक्षा गुरू नही बन सकते।

पंक्ति २२ से २३- तमाल कृष्ण गोस्वामी श्रील प्रभुपाद का उत्तर फिर से दोहराते है और श्रील प्रभुपाद आगे कहते है,'जो दीक्षा दे रहा है उसके परम-शिष्य'।

यह तर्क दिया जाता है कि यहाँ श्रील प्रभुपाद ऋत्विक को संबोधित कर रहे थे।इसलिए हम 'उसके' को 'ऋत्विक' से प्रतिस्थापित करके देखते है ः (केवल पंक्ति २० से २३) ः

तमाल	- वे उनके शिष्य होंगे ?
श्रील प्रभुपाद	- वे (ऋत्विक) के शिष्य होंगे ।
टमाल	- वे (ऋत्विक) के शिष्य होंगे ।
श्रील प्रभुपाद	- (ऋत्विक) दीक्षा दे रहा है...(ऋत्विक) के परम-शिष्य।

ऋत्विक की परिभाषा होती है - 'पुजारी', जो किसी तरह का संस्कार करता है या किसी संस्कार में किसी का प्रतिनिधि होता ही। अतः 'ऋत्विक के शिष्य' एवं 'ऋत्विक के परम शिष्य' असाधारण रूप से गलत उपयोग है।

पंक्ति २८ से २६ – श्रील प्रभुपाद इस वार्तालाप के अंत में फिर कहते है कि उनके आदेश के उपरान्त ही कोई गुरू है। तब नये शिष्य उनके शिष्य ही होंगे।

इस 'शिष्य के शिष्य' को बहुत उछाला गया है। कई लोग इसको प्रमाण मानते है कि यहाँ श्रील प्रभुपाद ने अपने शिष्यों को दीक्षा गुरू बनने का आदेश दे दिया। पर इस शब्द के पहले का भाग स्पष्ट दर्शाता है कि श्रील प्रभुपाद यहाँ सिर्फ एक नियम बता रहे है कि 'जब' मै आदेश दूँ तब कोई सामान्य गुरू बन सकता है। तब उसका शिष्य उनका परम शिष्य हो सकता है।

यह सब स्पष्ट है। <u>पर असल में गुरू बनने का आदेश कहाँ ? निश्चित रूप से २८-२६ पंक्तियों मे नही है और न ही संपूर्ण वार्तालाप में</u>।

असल में २८ मई का वार्तालाप किसी को भी कुछ भी बनने का कोई भी आदेश नही दे रहा है। यहाँ श्रील प्रभुपाद सिर्फ यह बता रहे है कि भविष्य

में वे अपने कुछ शिष्यों को ऋत्विक नियुक्ति करेंगे। गुरू-शिष्य संबंध के जो प्रश्न वार्तालाप के मध्य में पूछे जा रहे थे केवल एक आध्यात्मिक नियम से संबंधित थे न कि व्यावहारिक रूप से क्या होगा। अतः वे बतलाते है कि अगर वे गुरू बनने का आदेश देते है तो क्या होगा। इसके उपरान्त ७ जुलाई को प्रथम बार उन्होंने कोई आदेश जारी किया। वह था 'ऋत्विक' बनने का। जिसे ६ जुलाई के हस्ताक्षरयुक्त पत्र से औपचारिक रूप दिया गया। और जैसा इस पत्र को देखकर साफ समझ आ जाता है,यह ग्यारह ऋत्विक कभी भी दीक्षा गुरू नही बन सकते थे और न ही कि ऋत्विक प्रणाली कभी रोक दी जानी थी।

२८ मई के हमारे विस्तृत विश्लेषण से स्पष्ट हो जाता है कि जी.बी.सी. यहाँ सिर्फ एक टेढा बेहूदा तर्क दे रही है। ६ जुलाई के पत्र के संशोधन (अ) एवं (ब) के प्रमाणस्वरूप २८ मई के वार्तालाप को प्रस्तुत किया जाता है कि 'आदेश' यहाँ है। परन्तु, २८ मई के वार्तालाप को पढने से स्पष्ट हो जाता है कि यहाँ 'आदेश' नही दिया जा रहा,अपितु 'जब आदेश दिया जायेगा तब क्या होगा' का ब्यौरा है। क्या 'आदेश' और 'जब मै आदेश दूँगा' एक ही है। 'जब मै आदेश दूँगा' अगर ६ जुलाई का पत्र है तो उसमें तो ग्यारह शिष्यों को ऋत्विक बनने का आदेश दिया जा रहा है। तो हम जी.बी.सी. से फिर यह प्रश्न पूछ सकते है,दीक्षा गुरू बनने का 'आदेश' कहाँ है ?

२८ मई के वार्तालाप को एक प्रभावशाली प्रमाण मानने में सबसे मुश्किल इस कारण आती है कि यह जानकारी उन भक्तों को मालूम ही नही थी जिन्हें बाद के संशोधनों को स्वीकारने को कहा गया था।

अगर यह सही भी होता कि २८ मई के वार्तालाप में ऐसी कुछ जानकारी होती जो ६ जुलाई के पत्र में कुछ संशोधन कर सकती थी तो उसे इस पत्र में जरूर संबोधित किया गया होता। आश्चर्यजनक तर्क तो यह दिया जाता है कि संपूर्ण जी.बी.सी. के अनुसार उनका कार्य केवल श्रील प्रभुपाद की उपस्थिति तक ही था।

दूसरे शब्दों में,जिस विषय पर श्रील प्रभुपाद से पूछा ही नही गया था,उस विषय पर उन्होंने स्पष्ट निर्देश दिये और फिर उसे संपूर्ण आंदोलन को एक दस्तावेज के रूप में भेजा। और जिस विषय पर पूछा गया था उसे

उन्होंने अस्पष्ट तरीके से २८ मई के वार्तालाप में ओर इस विषय के अंतिम आदेश में यानी कि ६ जुलाई के पत्र में संबंधित ही नही किया।

हम ऐसा कोई भी उदाहरण नही देखते जिसमे श्रील प्रभुपाद ने संपूर्ण संस्था को निम्नलिखित तरीकों से संबोधित किया था ः

(क) महत्त्वपूर्ण निर्देश जारी करना जो विषय को संबोधित ही नही करते।
(ख) जानबूझकर नई प्रणालियों से संबोधित महत्त्वपूर्ण जानकारी को छुपा लेना।

यह तर्क कि श्रील प्रभुपाद को भविष्य की दीक्षा विधि के बारे मे जानकारी देने की जरूरत ही नही थी। क्योंकि इसे वे अपनी पुस्तकों और प्रवचनों में

विस्तृत रूप से समझा चुके थे,इसका प्रतिउत्तर हम आपत्ति ७ में दे चुके है।

२८ मई के वार्तालाप में उपयोग में लिये गये 'अमार आज्ञाया गुरू हाना' श्लोक को जी.आई.आई.मे संशोधन (अ) एवं (ब) का एक कारण बना रखा है। इस धारणा के अनुसार ऋत्विक बनने का आदेश इस श्लोक के उपयोग के कारण दीक्षा गुरू बनने का आदेश हो जाता है। परन्तु श्रील प्रभुपाद ने बस यही कहा है ः

'जो गुरू के आदेश को समझता है, वही परम्परा,वह ही गुरू बन सकता है। इसलिये मै तुममे से कुछ को चुनूँगा।'
(२८ मई का वार्तालाप)

यहाँ निम्नलिखित बाते समझने की है ः

(क) गुरू का कौनसा आदेश था जिसको उन्हें समझना था ? - ऋत्विक बनन (' मै तुममे से कुछ को ऑफिशिएटिंग आचार्य का कार्य करने के लिए नियुक्त करूगाँ ')

(ख) अंत में उन्हें किस कार्य के लिए चुना गया था ? ऋत्विक का कार्य करने के लिए (कृपया परिशिष्ट के ६ जुलाई के पत्र को देखे।)

(ग) और अपने गुरू के आदेशों का पालन करके वे किस तरह के गुरू बनते थे - जैसा हम पहले विश्लेषण कर चुके है। श्री चैतन्य के ' गुरू बनो ' के आदेश का मतलब है जो भी इस आदेश का विश्वस्नीय ढ़ग से पालन करता है वह शिक्षा गुरू है।

<u>जी.आई.आई.मे असामान्य प्रस्तावना है कि गुरू के आदेश पर ऋत्विक बनने से वह अपने आप ही दीक्षा गुरू बन जाता है।</u>

इस तर्क के अनुसार जो भी अपने गुरू के कोई भी आदेश का पालन कर लेता है वह अपने आप ही दीक्षा गुरू बन सकता है। परन्तु जी.आईआई. में इसत र्क का प्रमाण ही बही दे रखा है। जैसा पहले दिखलाया जा चुका है,'अमार आज्ञाया' श्लोक हर एक को केवल शिक्षा गुरू बनने का आदेश दे रहा है। ('बेहतर होगा कि कोई शिष्य न बनाओ')।

<u>निष्कर्ष में –</u>

(क) ६ जुलाई १६७७ को श्रील प्रभुपाद ने ११ ऋत्विक नियुक्त किये,जिनका कार्य था प्रथम और द्वितीय दीक्षा संस्कार 'इस समय से' करना।

(ख) २८ मई के वार्तालाप में ऐसा कोई प्रमाण नही है जिससे ६ जुलाई के आदेश को बदला जाए,जैसे कि ऋत्विक की नियुक्ति श्रील प्रभुपाद

के तिरोभाव के उपरान्त रूक जाएगी।

(ग) २८ मई के वार्तालाप में ऐसा भी प्रमाण नही है जिससे श्रील प्रभुपाद के तिरोभाव उपरान्त यह ऋत्विक अपने आप ही दीक्षा गुरू बन जाते थे। अतः ६ जुलाई के पत्र को उपरोक्त तरीके से भी नही बदला जाना चाहिए था।

(घ) २८ मई के वार्तालाप में जो एक तथ्य स्पष्ट स्थापित होता है वह है ऋत्विक का कार्य श्रील प्रभुपाद के तिरोभाव उपरान्त जारी रहना था।

महत्त्वपूर्ण तथ्य तो यह है कि एक इसी वार्तालाप की चार भिन्न-भिन्न प्रतिलिपियाँ और जी.बी.सी. के चार अलग-अलग 'अधिकारिक' अनुवाद है। कई भक्त मानते है कि केवल इसी कारण से टेप को निर्णायक प्रमाण नही माना चाहिए। अगर पाठक का भी यही दृष्टिकोण है तो उन्हें ६ जुलाई के पत्र तक ही सीमित रहना चाहिए और उसे इस विषय का अन्तिम आदेश मानना चाहिए;क्योंकि वह स्पष्ट लिखा हुआ एक हस्ताक्षरयुक्त पत्र जिसे संपूर्ण आंदोलन को भेजा गया था। एक न्यायालय में तो यह पत्र ही प्रमाणिक माना जायेगा;क्योंकि हस्तारक्षरयुक्त लिखित आदेश एक टेप से ज्यादा प्रमाणिक माना जाता है। तो भी इस टेप का यहाँ हमने इतना विश्लेषण इसलिये किया है क्योंकि जी.बी.सी. ने संशोधन (अ) एवं (ब) के लिए यही एक प्रमाण प्रस्तुत किया है।

उपरोक्त विश्लेषण द्वारा संशोधन (अ) एवं (ब) को नकार जाता है। ये संशोधन ही जी.बी.सी. की वर्तमान पद्धति के आधार है पर हमे इनको प्रमाणित साबित करने का कोई सबूत नही मिला है। अतः ६ जुलाई के पत्र में दिये गए आदेश ही श्रील प्रभुपाद द्वारा दिये गये दीक्षा संबंधित अन्तिम आदेश है। इसलिए इन्ही का पालन करना होगा।

अब हम कुछ संबंधित आपत्तियों को देखेंगे।

संबंधित आपत्तियाँ

१. " श्रील प्रभुपाद ने 'ऋत्विक' शब्द का प्रयोग अपनी पुस्तकों में नही है।"

(क)' ऋत्विक ' (यानी पुजारी) एवं इससे उदभूत शब्द ३२ बार श्रील प्रभुपाद की पुस्तकों में संबंधित है। यहाँ तक कि ' दीक्षा ' और इससे उदभूत ४२ बार ही संबोधित है। इससे जाहिर होता है कि ' ऋत्विक ' पुजारियों का संस्कारों मे उपयोग श्रील प्रभुपाद की पुस्तकों में पूर्णयता अनुमोदित है ः

ऋत्विक ः ४.६.१/४.७.१६/ ५.३.२/ ५.३.३/५.४.१७/७.३.२०/ ८.२०.२२/६.१.१५
ऋत्विक ः ४.५.७/४.५.१८/४.७.२७/ ४.७.४५/४.१३.२६/४.१६.२७/ ४.१६.२६/५.३.४/
५.३.१५/५.३.१८/५.७.५ / ८.१६.५३/ ८.१८.२१ /८.१८.२२/ ६.४.२३/६.६.३
ऋत्विजम् ः ४.६.५२/४.२१.५/ ८.२३.१३/६.१३.१
ऋत्विगभ्य ः ८.१६.५५
ऋत्विग्भी ः ४.७.५६/६.१३.३
(सब श्रीमद - भागवतम् से)

(ख) जहाँ श्रील प्रभुपाद की पुस्तकों में आध्यात्मिक नियम पूर्ण रूप से हुए थे, उनकी व्यावहारिक जानकारी कई बार नही दी गयी थी (उदाहरणतया,अच—विग्रह की पूजा में) यह व्यावहारिक जानकारी ज्यादातर पत्रों द्वारा या निजी उदाहरण द्वारा समझाई जाती थी। अतः हमे दीक्षा के सिद्धांत और उसकी व्यावहारिकता में अंतर समझना चाहिए। श्रील प्रभुपाद ने दीक्षा को एक रूढ़िवादी रीति नही अपितु दिव्य ज्ञान की प्राप्ति बतलाया है जिससे मुक्ति मिल सकती है ः

'दुसरे शब्दों में,गुरू एक सुप्त जीवात्मा को जागृत करता है जिससे वह अपनी मौलिक चेतना मे आकर श्री विष्णु की आराधना कर सके। यही दीक्षा का उद्देश है। दीक्षा का अभिपाय है आध्यात्मिक चेतना से संम्बधित शुद्ध ज्ञान की प्राप्ति ।'
(चैतन्य चरितामृत मध्य,६.६१,भावार्थ)

'दीक्षा का भूल अभिपाय शिष्य को दिव्य ज्ञान देना है जिससे वह <u>समस्त</u> भौतिक कल्मषों से मुक्त हो सके।'
(चैतन्य चरितामृत मध्य,४.१११,भावार्थ)

' दीक्षा एक <u>प्रणाली</u> है जिससे दिव्य ज्ञान प्रकाशित होता है और पाप कर्म के फलों का नाश होता है। एक दक्ष व्यक्ति जिसे शास्त्रों का ज्ञान है इस <u>प्रणाली</u> को दीक्षा कहता है।
(चैतन्य चरितामृत मध्य,१५.१०८,भावार्थ)
दीक्षा संस्कार एक औपचारिकता है,जो दीक्षा पाने के लिए अनिवार्य नही है ः

'सो ऐसा हुआ,१६२२ से १६३३ तक व्यावहारिक रूप से मुझे दीक्षा नही मिली परन्तु मुझे चैतन्य महप्रभु के आंदोलन का प्रचार करने का प्रभाव पडा। ऐसा मै सोच रहा था और वही मेरे गुरू महाराज द्वारा मिली दीक्षा थी।
(श्रील प्रभुपाद प्रवचन,१०/१२/७६,हैदराबाद)

'दीक्षा संस्कार एक औपचारिकता है। अगर तुम गंभिर हो,तो वही असली दीक्षा है। मेरा संपर्क तो एक औपचारिकता माञ है। तुम्हारी दृढता,वही दीक्षा है।'

(बी.टी.जी प्रवचन,'सर्च फॉर द डिवाइन')

'.....गुरू परम्परा का अर्थ माञ यह नही कि सदैव औपचारिक रूप से ही दीक्षा मिले। गुरू परम्परा का अर्थ है गुरू परम्परा के सिद्धांत को स्वीकारना।

(श्रील प्रभुपाद का पञ दिनेश को,३१/१०/६६)

'हरे कृष्ण मन्ञ का जाप करना हमारा मूल कार्य है,वही असली दीक्षा है। और तुम जो मेरे सारे आदेशों का पालन कर रहे हो,तो दीक्षा देने वाला वही उपस्थित है।'

(श्रील प्रभुपाद का पञ तमाल कृष्ण को,१६/८/६८)

'तो दीक्षा मिले या नही,पहली चीज है ज्ञान....ज्ञान। दीक्षा संस्कार एक औपचारिकता है,जैसे – तुम ज्ञान के लिए पाठशाला जाते हो,'प्रवेश पाना' तो एक औपचारिकता है। वह ज्यादा महत्त्वपूर्ण नही है।'

(श्रील प्रभुपाद प्रश्नोत्तर,१६/१०/७६,चंडगिढ)

'अगर कोई (नियमों का) अनुशासन पालन नही करता,वह शिष्य नही है।'

(श्रील प्रभुपाद श्रीमद – भागवतम् प्रवचन,२१/१/७४)

दीक्षा प्रकिया के नियमों का पालन करने की गंभिर प्रतिज्ञाा को शिष्य के दिमाग में बैठाने के लिए दीक्षा संस्कार माञ एक औपचारिकता है। इस प्रकिया में –

- दिव्य ज्ञान मिलता है जिससे वह समस्त कल्मषों से शुद्ध हो जाता है।
- दीक्षा गुरू के आदेशों को पालन करने की दूढता को बनाये रखता है।
- गुरू के आदेशों का उत्सुकतापूर्वक पालन करने की शुरूआत करता है।

श्रील प्रभुपाद ने स्पष्ट रूप से यह बताया है कि दीक्षा संस्कार तो माञ एक औपचारिकता है,आवश्यकता नही। यह औपचारिक दीक्षा संस्कार भी कई प्रकियाओं का मिश्रण है ः

(क) संस्था के एक अधिकारी,सामान्यतः टेंपल प्रेसिडेंट द्वारा सिफारिश।
(ख) ऋत्विक द्वारा सहमति।
(ग) यज्ञ में सम्मिलन ।
(घ) आध्यात्मिक

नाम स्वीकारना।

उपर्युक्त (ख) और (घ) में ही ऋत्विक पुजारी की आवश्यकता आती है। बाकी दो प्रकियाएँ टेंपल प्रेसिडेंट या दूसरा कोई योग्य ब्राह्मण करता है।

जैसा पहले बतलाया जा चुका है,ऐसा नही है कि दीक्षा देने के लिए गुरू को शिष्य के समान ग्रह पर होना आवश्यक है। दीक्षा की प्रकियाएँ यानी दिव्य ज्ञान,पाप कर्म के फलों का नाश,यज्ञ और आध्यात्मिक नाम शारीरिक अनुपस्थिति में भी दिये जा सकते है। यह श्रील प्रभुपाद ने अपने निजी उदाहरण द्वारा प्रदर्शित किया था। वे दिक्षा के समस्त तत्त्व अपने मध्यस्थ यानी अपने शिष्यों और पुस्तकों द्वारा देते थे। इस प्रकार ऋत्विक के उपयोग से कोई भी आध्यात्मिक नियम नही बदला गया। केवल व्यावहारिकता में अंतर है।

इस प्रकार,ऋत्विक का उपयोग दीक्षा की माज औपचारिक विधि में होता है। एक ऐसी औपचारिकता जो दिव्य दीक्षा प्रकिया में अनावश्यक है। (कृपया ' दीक्षा' आकृति पृष्ठ ८५ को देखे)

श्रील प्रभुपाद ने दीक्षा प्रकिया के तत्त्वों को उनकी महत्त्वपूर्णता अनुसार पुस्तकों में समझाया था ः-

तत्त्व	क्या पुस्तकों में समझाया	रीतियों का पालन किया ?	वर्तमान रीति से मुख्य बदलाव ?	रीति बदलाव को पुस्तकों में समझाया ?
दीक्षा	हाँ	नही	ज्ञान को प्राथमिक रूप से वाणी द्वारा दिया न कि शारीरिक संपर्क से। निजी परीक्षा बहुत कम ली। दीक्षा के नए मापदण्ड।	कुछ
दीक्षा संस्कार	नही	नही	प्रतिनिधियों द्वारा माला पर जप। गायत्री मंत्र टेप द्वारा देना।	नही
नामकरण	नही	नही	हरिनाम दीक्षा के समय नाम देना। नाम देने के लिए प्रतिनिधियों का उपयोग	नही

इस प्रकार श्रील प्रभुपाद ने अपनी पुस्तकों में न तो दीक्षा संस्कार संबोधित तत्वों और न ही वर्तमान रीति में बदलाव को बतलाया था। उसी प्रकार ऋत्विक का उपयोग भी पुस्तकों में नही बतलाया। हाँ,दीक्षा यानी दिव्य ज्ञान को देने की विधि जे वर्तमान रीति से थोडी अलग है उसको जरूर बतलाया था। इससे साफ जाहिर होता है कि ज्यादा महत्त्वपूर्ण है उसे ही उन्होंने समझाया था।

२." गुरू और शिष्य की पारस्परिक परीक्षा जो दीक्षा में अति महत्त्वपूर्ण होती है,बिना शारीरिक सम्पर्क के कैसे पूर्ण हो सकेगी।"

यह प्रश्न (भगवद्-गीता,४.३४) श्लोक से उत्पन्न होता है जिसके अनुसार एक शिष्य को गुरू से 'संग' करना होता है,गुरू की 'सेवा करनी होती है,और 'प्रश्न' पूछना होता है। इसी प्रकार गुरू द्वारा शिष्य को परखना होता है (चैतन्य चरितामृत,२४.३३0)। इन श्लोकों को ठीक प्रकार समझने से निम्नलिखित तथ्य उभर कर आते है ः

— यहाँ 'प्रश्न पूछना','सेवा

करना' और परखने के लिए शारीरिक सम्पर्क की आवश्यकता नही लिखी हुई है।

— भगवद्-गीता के ४.३४ के भावार्थ में इन प्रकियाओं को शिष्य के लिए बहुत जरूरी कहा गया है। अतः इन प्रकियाओं को पूर्ण करने के लिए अगर गुरू को शिष्य के समान ग्रह पर होना आवश्यक होता तो १४ नवम्बर १६७७ के बाद कोई भी श्रील प्रभुपाद का शिष्य नही रहता।

— 'प्रश्न' इसलिए किए जाते है जिससे 'गुरू' 'ज्ञान' दे सके। ज्ञान देना यानी शिक्षा देना। यह हमने पहले ही स्वीकार कर लिया है कि ज्ञान देने के लिए या शिक्षा संबंधित प्रश्न स्वीकारने के लिए समान ग्रह पर होना आवश्यक नही है। (कृपया परिशिष्ट देखे) ओर जैसा पहले समझाया गया है,इस तर्क के अनुसार १४ नवम्बर १६७७ के बाद किसी को भी 'शक्षा' नही मिली है।

— 'परीक्षा' संभावित शिष्य द्वारा सारे नियम पालन करने की सहमती की होती है जो गुरू का प्रतिनिधि भी कर सकता है।

'हमारे कुष्ण भावनामृत आन्दोलन में आवश्यकता है कि हर कोई पाप के चार खम्भों को छोडने को राजी हो। खासतौर से पाश्चात्य देशों में हम प्रथम यह परखते है कि क्या एक संभावित शिष्य नियमों का पालन करने के लिए सहमत है।'
(चैतन्य चरितामृत,मध्य,२४.३३० भावार्थ)

दूसरी दीक्षा (गायत्री दीक्षा) के लिए संभावित शिष्यों की परीक्षा के लिए भी प्रतिनिधियों के उपयोग की बात कुछ ही पंक्तियों बाद फिर दोहराई गई है –

'इस प्रकार एक शिष्य,गुरू या उनके प्रतिनिधि के मार्गदर्शन में,छः माह से एक साल तक भक्ति-सेवा करता है।'
(चैतन्य चरितामृत,मध्य,२४.३३० भावार्थ)

प्रतिनिधियों का उपयोग कितना आवश्यक है हम कुछ पंक्तियों उपरान्त ही देखते है।

' गुरू को छः माह से एक वर्ष तक शिष्य की जिज्ञासा की परीक्षा लेनी चाहिए।'
(चैतन्य चरितामृत,२४.३३०, भावार्थ)

यह ध्यान रखना चाहिए कि श्रील प्रभुपाद ने जिस तरह से यह संस्था प्रबंधित की थी उससे इस निर्देश को पालन करना असंभव हो जाता है। वे अपने हजारों शिष्यों को पूरे ६ माह तक निजी तौर पर परख नही सकते थे। इसलिए यह निर्देश पूर्ण करने के लिए शारीरिक सम्पर्क की आवश्यकता होती तो श्रील प्रभुपाद ने एक प्रचारक संस्था की स्थापना क्यों की।ऐसी संस्था में जिसमे मंदिर और शिष्य पूरी धरती पर फैले हुए है,इस तरह की शारीरिक परीक्षा बिल्कुल असंभव हो जाती है। इसी प्रकार का तर्क तो दूसरे ' गौडीय वैष्णव ' समुदाय

के लोग देते है कि श्रील प्रभुपाद को जो फल प्रचार स्वरूप मिला वह शास्त्र के निर्देशों को उलाँघने से मिला।

शबसे प्रभावशाली प्रमाण है स्वयं आचार्य का निजी उदाहरण। श्रील प्रभुपाद ने बहुसंख्या में शिष्यों को निजी परीक्षा के बिना दीक्षा दी। इस प्रकार श्रील प्रभुपाद श्रील प्रभुपाद ने एक ऐसी प्रणाली स्थापित की जिसमें दीक्षा के लिए उनके प्रतिनिधियों का संग लेना उनके संग लेने के समान ही है।

यह भी तर्क दिया जा सकता है कि उस समय निजी परीक्षा के निर्देश को लागू नही करना ठीक था; क्योंकि गुरू स्वयं इसी धरती पर मौजूद थे जिससे कि निजी परीक्षा संभव तो थी,पर इस तर्क का कोई मूल नही है क्योंकि ः

- इस तरह के विशिष्ट निर्देश को शास्त्रों मे कही नही बतलाया गया है।
- जब निजी परीक्षा के लिए प्रतिनिधियों की बात श्रील प्रभुपाद करते है तब यह नही कहते कि यह प्रकिया उनके धरती पर रहने तक ही लागू होगी।
- जैसा बतलाया जा चुका है,शारीरिक परीक्षा एक शास्त्रिक आवश्यकता नही है। परीक्षा के लिए प्रतिनिधि (यानी उनके शिष्य एवं पुस्तक) के उपयोग से खुद श्रील प्रभुपाद सहमत थे। इसलिए यह प्रश्न कि निजी परीक्षा कब हो या कब न हो, उठता ही नही है।
- बिना किसी शारीरिक सम्पर्क के भी दीक्षा दी गयी थी। यह प्रमाणित करता है कि इस प्रकार की परीक्षा दीक्षा कै प्रकिया के लिए आवश्यक नही ही।

श्रील प्रभुपाद ने यह स्पष्ट बतला दिया था कि एक शिष्य को नियमों का पालन करना है। यह टेम्पल प्रेसिडेन्ट और ऋत्विक को देखना है। दीक्षा के नियम अब भी वही है जो श्रील प्रभुपाद के समय थे। जब वे यहाँ सशरीर उपस्थित थे तब अपने अंतिम दिनों मे नही चाहते थे कि उनसे कुछ सलाह ली जाये। तो वे अब क्यों दखलंदाजी करना चाहेंगे। अब हमारा एकमाज कर्तव्य है कि सारे नियम दृढतापूर्वक कायम रखे।

३."हम श्रील प्रभुपाद को गुरू रूप में स्वीकार कर सकते है,परन्तु हमें यह कैसे मालूम चलेगा कि श्रील प्रभुापद ने अपनी शारीरिक अनुपस्थिति में भी हमें स्वीकार लिया है।"

७ जुलाई को ऋत्विक प्रणाली स्थापित करते हुए श्रील प्रभुपाद ने कहा था कि उनकी सहमति के बिना अब से ऋत्विक शिष्य स्वीकार सकते है। अतः उस समय से श्रील प्रभुपाद शिष्यों को परखने और हामी देने में लिप्त नही थे। ऋत्विक के पास पूर्ण अधिकार और आजादी थी। श्रील प्रभुपाद का शारीरिक कार्य कुछ नही रहा था।

श्रील प्रभुपाद ः तो मेरे लिए रूके बिना,जिसे ठीक समझो। वह तुम्हारे ऊपर निर्भर करेगा।

तमाल कृष्ण गोस्वामी ः हमारे ऊपर।

श्रील प्रभुपाद ः हाँ।
(श्रील प्रभुपाद वार्तालाप,७/७/७७,वृन्दावन)

ऋत्विक द्वारा दिये गये नाम को तमाल कृष्ण गोस्वामी द्वारा 'इनिशिएटेड डिसाइपल्स' पुस्तक में लिखा जाता था। श्रील प्रभुपाद को व्यवहारिक तौर पर शिष्य की अनुभूति भी नही होती थी। इस तरह आज भी वैसे ही कार्य चल सकता है।

४.” गुरू का संग लेना,’प्रश्न पूछना’ और ‘सेवा करना’ तब ही संभव है जब अपने गुरू के धरती छोड़ने से पहले दीक्षा मिली हो।”

उपर्युक्त तर्क यह तो मानता है कि गुरू की शारीरिक अनुपस्थिति में भी गुरू से ‘संग लेना’,’प्रश्न पूछना’ और ‘सेवा करना’ सभव है। यह निर्देश कि यह तभी संभव है जब ‘गुरू के धरती छोडने से पहले दीक्षा मिली हो’ एक शुद्ध आविष्कार है। यह श्रील प्रभुपाद की पुस्तकों मे कही नही मिलता। अतः हम इसकी आराम से अनदेखी कर सकते है। दीक्षा पाने के लिए औपचारिक दीक्षा संस्कार की भी जरूरत नही होती। यह तो गुरू द्वारा शिष्य को दिव्य ज्ञान प्रदान करना होता है। साथ में कर्म फलों का नाश भी होता है।

‘गुरू परम्परा का अर्थ यह नही कि औपचारिक दीक्षा मिले। गुरू परम्परा का अर्थ है गुरू परम्परा के सिद्धांन्त को स्वीकारना।’
(श्रील प्रभुपाद का पत्र दिनेश को,३१/१०/६६)

‘तो,दीक्षा मिले या नही,पहली चीज है ज्ञान .... ज्ञान। दीक्षा संस्कार एक औपचारिकता है,जैसे-तुम ज्ञान के लिए पाठशाला जाते हो,’प्रवेश पाना’ तो एक औपचारिकता है। वह ज्यादा महत्त्वपूर्ण नही है।’
(श्रील प्रभुपाद साक्षात्कार,१६/१०/७६,चंडीगढ)

यह एक विवेकहीन तर्क है कि दीक्षा की दिव्य प्रकिया इसलिए ठीक से कार्य नही कर सकती;क्योंकि एक औपचारिक यज्ञ में गुरू शारीरिक रूप से मौजूद नही थे। यहाँ तक कि -

- श्रील प्रभुपाद खुद दीक्षा संस्कारों मे उपस्थित नही होते थे। यह ज्यादातर उनके प्रतिनिधियों यानी टेंम्पल प्रसिडेंट,वरिष्ठ संन्यासी एवं ऋत्विक द्वारा किये जाते थे।
- यह भी एक तथ्य है कि श्रील प्रभुपाद की पिछले २० वर्षों की शारीरिक अनुपस्थिति में भी उनके हजारों शिष्य दीक्षा प्रकिया से लाभ उठा रहे है।

यह तर्क दिया जा सकता है कि श्रील प्रभुपाद उन दीक्षा संस्कारों में अनुपस्थित जरूर थे परन्तु थे तो वे इस धरती पर। तो गुरू की इसी धरती पर उपस्थिति क्या आवश्यक होती है ? इस तर्क को ठिक साबित करने के लिए हमें निम्नलिखित निर्देश जैसा कोई निर्देश श्रील प्रभुपाद की पुस्तकों में ढूँढना होगा ः

‘ दीक्षा तभी पूर्ण हो सकती है जब दीक्षा संस्कार के दौरान गुरू एवं शिष्य में दूरी धरती के व्यास के समान या कम हो।’

आज तक किसी को ऐसा निर्देश नही मिला है। वस्तुतः निम्नलिखित श्लोक (भगवद्-गिता,४.२१)हमारी परम्परा का दीक्षा संबोधित प्रसिद्ध उदाहरण है जो उपर्युक्त धारणा को खारिज करता है।

‘ तो मनु या मनु के पुत्र इक्ष्वाकु से बातचीत करने में कोई मुश्किल नही थी। तब संचार माध्यम था या दूरसंचार प्रणाली इतनी विकसित थी कि संदेश को एक ग्रह से दूसरे ग्रह तक स्थानान्तरित किया जा सकता था।’
(श्रील प्रभुपाद भगवद्-गिता,२४/८/६८)

उपर्युक्त से प्रतीत होता है कि गुरू और शिष्य के बिच दूरी से दीक्षा में कोई बाधा नही आ सकती।

५। "आपका प्रस्ताव बहुत कुछ ईसाई धर्म दिखता है।"

(क) ऋत्विक प्रणाली का प्रस्ताव हम नही दे रहे है। अपितू श्रील प्रभुपाद दे रहे है,अपने अंतिम आदेश द्वारा। अतः अगर यह प्रणाली ईसाई धर्म जैसी भी है तो भी हमें इसका पालन करना होगा; क्योंकि यह हमारे गुरू का आदेश है।

(ख) ईसाई अब भी ईसा मसीह को गुरू मान सकते है। इस तथ्य को श्रील प्रभुपाद ने सहमति दी थी। उन्होंने सिखाया था कि जो भी ईसा मसीह के आदेशों का पालन करेगा वह उनका शिष्य होगा और उनके द्वारा प्रतिपादित मुक्ति पायेगा ः

मधुद्विसा ः क्या एक ईसाई बिना किसी गुरू का मार्गदर्शन लिये, और केवल ईसा मसीह के उपदेशों को सच मानकर और उनका पालन करके आध्यात्मिक जगत जा सकता है ?

श्रील प्रभुपाद ः मुझे समझ आया।

तमाल कृष्ण गोस्वामी ः क्या आज कोई ईसाई बिना गुरू के,परन्तु बाइबिल पढ़कर और ईसा मसीह के शब्दों को पालन कर,पहुँच .....

श्रील प्रभुपाद ः जब तुम बाइबिल पढ़ते हो,तब तुम गुरू मानते हो। तुम कैसे बोल सकते हो बिना गुरू के ? जैसे ही तुम बाइबिल पढ़ते हो,वैसे ही तुम ईसा मसीह के आदेशों का पालन करते हो और इसका मतलब कि तुमने गुरू के बना लिया। तो बिना गुरू के बात ही नही हुई।

मधुद्विसा ः मै एक जीवित गुरू की बात कर रहा था।

श्रील प्रभुपाद ः गुरू नही....शाश्वत है। गुरू शाश्वत है....तो तुम्हारा प्रश्न है 'बिना गुरू के'। बिना गुरू के तुम जीवन के किसी स्तर पर नही हो सकते। तुम यह गुरू अपनाओ या वह गुरू वह दूसरी बात है। परन्तु तुम्हें स्वीकारना होगा। जैसा तुम बोले रहे हो,'बाइबिल पढ़ने से',तो जब तुम बाइबिल पढते हो तो इसका मतलब है तुम ईसा मसीह को गुरू मान रहे हो, जिनके प्रतिनिधि कोई 'प्रीस्ट' या कलर्जी होते है।

(श्रील प्रभुपाद प्रातः भ्रमण,२/१०/६८,सीएटल)

'जहाँ तक ईसा मसीह के भक्तों के लक्ष्य का सवाल है,वे स्वर्ग जा सकता है,बस। यह इस भौतिक संसार में एक ग्रह है। ईसा मसीह के भक्त होने का मतलब है जो दृढतापूर्वक दस 'कमान्डमेन्टस' का पालन करे.....अतः यह निष्कर्ष निकलता है कि ईसा मसीह के भक्त स्वर्ग लोकों में स्थानान्तरित होंगे जो इस भौतिक जगत में ही है।

(श्रील प्रभुपाद का पत्र भगवान को,२/३/७०,सीएटल)

'सच तो यह है कि जो ईसा मसीह द्वारा मार्गदर्शित है उसे मुक्ति अवश्य मिलेगी।'

(परिपूर्ण प्रश्न परिपूर्ण उत्तर,अध्याय६)

'....या ईसाई ईसा मसीह के अनुयायी है,एक महापुरूष। महाजनों येन गतः स पंथ। तुम किसी महाजन,महापुरूष के मार्गदर्शन से चलो....तुम एक आचार्य के अनुयायी बनो,जैसे ईसाई,वे ईसा मसीह,आचार्य के अनुयायी है। मोहम्डन्स वे आचार्य के अनुयायी है।मुहम्मद।यह अच्छा है।तुम्हें किसी एक आचार्य का पालन करना होगा....एवं परम्परा प्राप्तम।

(श्रील प्रभुपाद वार्तालाप,२०/५/७५,मेलबोर्न)

ग) 'ईसाई बनने की यह आपत्ति व्यंगोक्ति है क्योंकि वर्तमान की गुरू प्रणाली में इस्कॉन ने खुद कुछ ईसाई प्रथाओं को अपना लिया है।

जी.बी.सी. द्वारा मतदान के बहुमत से गुरू का चयन उसी समान है जिस तरह कैथोलिक चर्च में पोप का चयन 'कॉलेज ऑफ कार्डीनल' करते है ः

' मतदान की प्रणाली .... गुरू के वचन के लिए ....मतदान देने याग्य सदस्यों द्वारा किया जायेगा..
..गुरू प्रणाली के लिए मतदान....जी•बी•सी• के दो-तिहाई बहुमत से .... समस्त जी•बी•सी• का गुरू के लिए चयन हो सकता है।
(जी•बी•सी• प्रस्ताव)

उसी तरह ईसाई प्रथाएँ ईसा मसीह ने कभी नही बताई थी और श्रील प्रभुपाद ने पूरी तरह से इनकी आलोचना की है।

' सामाजिक मतदान से वैष्णव आचार्य को कभी नही चुना जा सकता। वैष्णव आचार्य स्वतः ही तेजस्वी होते है,और उन्हें किसी न्यायालय के निर्णय की आवश्यकता नही ।'

(चैतन्य चरितामृत मध्य,१.२२०, भावार्थ)

'श्रील जीव गोस्वामी समझाते है कि गुरू के चयन के लिये उनके वंश,सामाजिक प्रथा या इक्लिजिआस्टीकलिक सभा की सम्मती को नही देखना चाहिए।'

(चैतन्य चरितामृत आदी,१.३५, भावार्थ)

६. " ऋत्विक एक तरह की दीक्षा ही देते है। श्रील प्रभुपाद तो हमारे शिक्षा गुरू ही है।"

(क) ऋत्विक का कर्तव्य दीक्षा गुरू से अलग होता है। उसका एकमाज कर्तव्य है शिष्यों को दीक्षा देने में दीक्षा गुरू की साहायता करना,न कि उनको अपना बताना।

(ख) ऋत्विक केवल दीक्षा प्रणाली का निरिक्षण करता है,आध्यात्मिक नाम देता है आदि। उदाहरण के लिए टेम्पल प्रेसिडेन्ट ही कई बार दीक्षा संस्कार यज्ञ करते थे पर कोई नही कहता था कि वह दीक्षा गुरू थे।

(ग) श्रील प्रभुपाद जो बनन चाहते है उन्हे वह बनने क्यों नही दिया जाये ? निश्चित ही ये हमारे शिक्षा गुरू है पर जैसा उन्होंने ६ जुलाई को इंगित किया था,वे हमारे दीक्षा गुरू भी है।

(घ) श्रील प्रभुपाद हमारे प्राथमिक शिक्षा गुरू तो है ही वे वस्तृतः हमारे दीक्षा गुरू भी है क्योंकि ः

- वे दिव्य ज्ञान देते है - दीक्षा की परिभाषा
- वे भक्ति लता बीज बोते है – दीक्षा की परिभाषा।

दूसरे भक्त उपर्युक्त दो कार्यो में पुस्तक वितरण,प्रचार आदि से साहायता कर सकते है, पर वे वर्तमा-प्रदर्शक गुरू होंगे, दीक्षा गुरू नही। इस सेवा द्वारा वे खुद भी शुद्ध भक्त बन सकते है।

(ड) सामान्यतः प्राथमिक शिक्षा गुरू ही बाद में दीक्षा गुरू बनता है ः

'श्रील प्रभुपाद इस्कॉन के समस्त भक्तों के मूल शिक्षा गुरू है....श्रील प्रभुपाद के उपदेश इस्कॉन समस्त भक्तों के लिए सबसे महत्त्वपूर्ण उपदेश है।' (जी.बी.सी. प्रस्ताव संख्या ३५,१६६४)

'सामान्यतः वह गुरू जो एक शिष्य को निरन्तर आध्यात्मिक विज्ञान सिखाता है वही बाद में उसका दीक्षा गुरू बनता है।'
(चैतन्य चरितामृत आदि,१.३५,भावार्थ)

'एक शिक्षा या दीक्षा गुरू का कर्तव्य होता है कि वह शिष्य को उचित शिक्षा दे। इस प्रणाली का ठीक से पालन करना शिष्य का कर्त व्य है। शास्त्रिक निर्देशों के अनुसार शिक्षा और दिक्षा गुरू में कोई अंतर नही है, और सामान्यतः शिक्षा गुरू ही बाद में दीक्षा गुरू बनता है।'
(श्रीमद-भागवतम्,४.१२.३२,भावार्थ)

७. "अगर श्रील प्रभुपाद सबके शिक्षा गुरू है,तो वे दीक्षा गुरू भी कैसे हो सकते है ?"

प्रायः नाम के कारण दीक्षा और शिक्षा गुरू के कार्य में भ्रम पैदा होता है। अतः माना जाता है कि शिक्षा गुरू ही शिक्षा दे सकते है,दीक्षा गुरू नही। परन्तु पिछले कथन के अनुसार दीक्षा गुरू भी उपदेश देते है। नही तो वह किस तरह ज्ञान का प्रेषण करेंगे ?

प्रघुम्न ः गुरू पदाश्रयः। 'पहले गुरू के कमल पद की शरण लेनी चाहिए।' तस्मात कृष्ण-दीक्षादी-शिणाम्। तस्मात्। 'उनसे, कृष्ण-दीक्षादी-शिणाम, सभी को कृष्ण दीक्षा एव शिक्षा लेनी चाहिए।'

श्रील प्रभुपाद ः दीक्षा का अभिप्राय है दिव्य -ज्ञानम् इती दीक्षा। यह समझता है कि दिव्य ज्ञान,दिव्य,यह दीक्षा है। दि,दिव्य,दीक्षाणम्।दीक्षा।तो दिव्य ज्ञान,अगर तुम गुरू नही स्वीकारते,तो तुम्हें कैसे आध्या...तुम इधर-उधर,इधर-उधर समझोगे और समय बर्बाद करोगे और साथ में अपना कीमती समय भी।

इसलिए तुम्हें एक दक्ष गुरू द्वारा मार्गदर्शन मिलना चाहिए। आगे पढो।

प्रघुम्न ः कृष्ण-दीक्षादी-शिणाम्।

श्रील प्रभुपद ः शिक्षाणाम्। हमे सीखनी चाहिए। अगर तुम सीखते नही तो तुम आगे कैसे बढ़ोगे ? इसके बाद ?
(श्रील प्रभुपाद वार्तालाप्,२७/१/७७,भुवनेश्वर)

गुरू-शिष्य संबंद्ध के सुप्रसिद्ध श्लोक (भगवद-गीता,४.३४) से सिद्ध होता है कि दिव्य शिक्षा ही दीक्षा का सार है। इस श्लोक में ' उपदेक्षयांती ' का शब्द से शब्द अनुवाद ' दीक्षा ' लिखा गया है। परन्तु इस श्लोक के पूर्ण अनुवाद में ' दीक्षा ' की बजाय ' शिक्षा

देना ' बताया गया है। यह " शिक्षा पाने के लिए शिष्य को ' प्रश्न ' पूछने चाहिए।" इस प्रकार यहाँ ' दीक्षा की प्रणाली ' ओर ' शिक्षा देने ' को पर्यायवाची बताया गया है।

इस प्रकार ' प्रभुपाद शिक्षा गुरू है दीक्षा गुरू नही ' के तर्कवादी अपने ही जाल में फँस जाते है। इस ग्रह पर नही होने के उपरान्त भी अगर श्रील प्रभुपाद ' शिक्षा देने ' मे समर्थ है तो स्वतः ही वे दिव्य ज्ञान भी दे रहे होंगे। अतः श्रील प्रभुपाद बिना शारीरिक सम्पर्क के अगर शिक्षा गुरू बन सकते है तो दीक्षा गुरू क्यों नही ? यह एक हास्यास्पद तर्क है कि वर्तमान में श्रील प्रभुपाद शिक्षा गुरू होने के नाते शिक्षा तो दे सकते है परन्तु अगर उनका नाम बदल कर दीक्षा गुरू कर दिया जाए तो शिक्षा नही दे पायेंगे। यह तथ्य कि इस ग्रह पर नही होकर भी श्रील प्रभुपाद शिक्षा गुरू हो सकते है, प्रमाणित करता है कि वे साथ में दीक्षा भी दे सकते है।

कुछ व्यक्तिगण तो यह भी नकार देते है कि श्रील प्रभुपाद एक भौतिक शरीर की अनुपस्थिति में दिव्य शिक्षा दे सकते है। अगर यह सत्य होता तो क्यों श्रील प्रभुपाद कई किताबे लिखने के लिए इतना कष्ट उठाते और उनको दस हजार साल तक वितरित करने के लिए एक विशिष्ट ' भक्तिवेदान्त बुक ट्रस्ट ' बताते। अगर अब श्रील प्रभुपाद की प्रस्तकों से दिव्य उपदेश मिलना संभव नही होता तो हम उन्हे वितरित क्यों कर रहे है ? क्यों आज भी लोग केवल इनको पढ़कर ही श्री चैतन्य महाप्रभु की शरण में आ रहे है।

८. " तुम क्या यह कहना चाहते हो कि श्रील प्रभुपाद ने एक भी शुद्ध भक्त नही बतलाया ?"

नही, हम केवल यह कह रहे है कि श्रील प्रभुपाद ने दीक्षा के लिए ऋत्विक प्रणाली स्थापित की है। इस स्पष्ट अन्तिम आदेश में यह मायने नही रखता कि श्रील प्रभुपाद ने शुद्ध भक्त बनाये अथवा नही। शिष्य होने के नाते हमारा एकमात्र कर्तव्य है गुरू के आदेश का पालन करना। यह उचित नही है कि गुरू के निर्देशों को छोड दे और इसकी बजाय यह सोचने लगे कि कितने शुद्ध भक्त अभी है या भविष्य में होंगे।

श्रेसा भी हो सकता है कि वर्तमान में कोई शुद्ध भक्त नही है। श्रील भक्तिसिद्धान्त सरस्वती के शारीरिक प्रस्थान उपरान्त भी कुछ ऐसी ही स्थिति थी। करीब ४० वर्ष के उपरान्त ने इंगित किया था कि गौडिया मठ से सिर्फ एक प्रमाणिक दीक्षा आचार्य उत्पन्न हुए।

' वस्तुस्थिति में मेरे गुरू भाइयों में कोई भी आचार्य बनके योग्य नही है।....हमारे शिष्यों को उत्साहित करने के स्थान पर वे उन्हें कभी-कभी दूषित कर सकते है।....वे हमारी सुलभ प्रगति में क्षति पहुँचाने के लिए अति योग्य है।'

(श्रील प्रभुपाद का पत्र रूपानुगा को,२८/४/७४)

श्रील प्रभुपाद ने 'आचार्य' और 'गुरू' शब्द का परस्पर बदलकर उपयोग किया था ः

"मै किसी को गुरू बनाऊँगा। मै कहूँगा कौन गुरू है ? 'अब तुम आचार्य बनो'....तुम धोखा दे सकते हो,लेकिन वह प्रभावशाली नही रहेगा। जैसे हमारे गौडीय मठ को देखो। सभी लोग गुरू बनना चाहते थे। एक छोटा मंदिर और 'गुरू'। किस प्रकार का गुरू ?"

(श्रील प्रभुपाद वार्तालाप,२२/४/७७)

यह श्रील भक्तिसिद्धान्त सरस्वती के प्रचार कार्य का निंदन लगता है। अपितु,श्रील भक्तिसिद्धान्त सरस्वती ठाकुर को 'असफल' समझना बहुत बडी गलती होगी। उन्होंने कहा था कि उनका आन्दोलन सिर्फ एक शुद्ध भक्त ही बना पाया तो वह उनकी सफलता होगी।

इसके आलावा ऋत्विल प्रणाली को लागू करने से शुद्ध भक्तों के अस्तित्त्व को नकारा नही जा सकता। कई तरह से ऋत्विक और शुद्ध भक्त साथ में निर्वाह और प्रचार कर सकते है,जैसे ः

- श्रील प्रभुपाद ने ऐसे कई शुद्ध भक्त बनाए हो सकते है जिनको दीक्षा गुरू बनने की लेश माज भी इच्छा नही हो। इसका कोई प्रमाण नही कि इस्कॅन के सारे शुद्ध भक्त हर साल मतदान के लिए खडे होते है। हो सकता है कि ये शुद्ध भक्त श्रील प्रभुपाद और उनके आन्दोलन की नम्रतापूर्वक सहायता ही करना चाहे। ऐसा कही निर्देश नही है कि हर शुद्ध भक्त इस पद्धिति अनुरूप संस्था में कार्य करने में आनन्द महसूस करेंगे।

- श्रील प्रभुपाद की यह इच्छा भी हो सकती है कि बहुसंख्या में शिक्षा गुरू हों। परन्तु दीक्षा गुरू और कोई नही। यह धारणा श्रील प्रभुपाद के पूर्व कथन से मेल खाती है जिसमे वे सबको शिक्षा गुरू बनने को कह रहे थे और सावधान कर रहे थे कि शिष्य नही बनाओ। श्रील प्रभुपाद ने अपने आन्दोलन की सफलता के लिए खुद ही उपाय कर लिये थे। इस तथ्य से भी उपर्युक्त धारणा मेल खाती है ः

अतिथि ः क्या आप अपना उत्तराधिकारी चुनने वाले है ?
श्रील प्रभुपाद ः यह पहले से ही सफल है।
अतिथि ः पर ऐसा तो कोई होना चाहिए, जो सब कार्यो का प्रबन्ध कर सके।
श्रील प्रभुपाद ः हाँ,यह हम कर रहे है। हम इन भक्तों को बना रहे है जो इसका प्रबन्ध करेंगे।
हनुमान ः यह एक चीज बोल रहे है, यह अतिथि,और मै भि जानना चाहूँगा क्या आपका उत्तराधिकारी नियुक्त हो चुका है या आपका उत्तराधिकारी....
श्रील प्रभुपाद ः मेरी सफलता कर समय है।
(श्रील प्रभुपाद वार्तालाप,१२/२/७५.मैक्सिको)

'अस्सी की उम्र के बाद कोई भी और ज्यादा दिन जीवित रहने की अपेक्षा नही कर सकता। मेरी जिन्दगी अब करीब-करीब खत्म हो चुकी है। तो तुम्हे यह आगे बढाना है और ये पुस्तकें सब कुछ करेगी।
(श्रील प्रभुपाद वार्तालाप,१८/२/७६)

' तो अब नया कहने को कुछ नही है। जो भी मुझे कहना था वह मैने अपनी पुस्तकों मे कह दिया है। अब तुम इसे समझने का प्रयास करते रहो और अपनी चेष्टा में लगे रहो। मै उपस्थित रहूँ या उपस्थित न रहूँ, इससे कोई फर्क नही पडता।
(श्रील प्रभुपाद सम्बोधन,१७/५/७७, वृन्दावन)

संवाददाता ः आपकी मृत्यु के उपरान्त अमेरिका में आपके आन्दोलन का क्या होगा ?
श्रील प्रभुपाद ः मै कभी नही मरूँगा।
भक्तगण ः जय ! हरी बोल ! (हँसी)

श्रील प्रभुपाद ः मै अपनी पुस्तकों से जीवित रहूँगा और तुम इनका उपयोग करोगे।
(श्रील प्रभुपाद संवाददाता सम्मेलन,१६/७/७५, सेन फ्रांसिस्को)

संवाददाता ः क्या आप अपने उत्तराधिकारी को प्रशिक्षण दे रहे है।
श्रील प्रभुपाद ः हाँ,मेरे गुरू महाराज है।
(श्रील प्रभुपाद संवाददाता सम्मेलन,१६/७/७५, सेन फ्रांसिस्को)

केवल भगवान श्री चैतन्य मेरा स्थान ले सकते है। वे इस आंदोलन को संभालेंगे।
(श्रील प्रभुपाद वार्तालाप,२/११/७७)

साक्षात्कारी ः ऐसा अवश्यंभावी समय जरूर आयेगा जब आपके उत्तराधिकारी की जरूरत होगी तब क्या होगा ?
रामेश्वर ः यह भविष्य के बारे में पूछा रहा है, भविष्य में आन्दोलन का कौन मार्गदर्शन करेगा।
श्रील प्रभुपाद्र ः ये मार्गदर्शन करेंगे,मै इन्हें प्रशिक्षण दे रहा हूँ।
साक्षात्कारी ः परन्तु क्या एक आध्यात्मिक नायक होगा ?
श्रील प्रभुपाद ः नही। मै जी •बी •सी • को प्रशिक्षण दे रहा हूँ,अठराह समस्त धरती पर।
(श्रील प्रभुपाद साक्षात्कार,१0/६/७६,लॉस एंजिल्स)

संवाददाता ः क्या आप अपने उत्तराधिकारी के लिए एक व्यक्ति नियुक्त करेंगे या आप पहले से कर चुके है ?
श्रील प्रभुपाद ः ऐसा मै अभी सोच नही रहा। परन्तु एक व्यक्ति की जरूरत नही है।
(श्रील प्रभुपाद साक्षात्कार,४/६/७६,लॉस एंजिल्स)

साक्षात्कारी ः में सोच रहा था कि क्या आपका कोई उत्तराधिकारी.... आपके मरणोपरान्त आपका स्थान लेने के लिए क्या कोई उत्तराधिकारी है ?
श्रील प्रभुपाद ः अभी तक निश्चित नही है। अभी तक निश्चित नही है।
साक्षात्कारी ः तो क्या प्रणाली होगी ? क्या हरे कृष्ण....
श्रील प्रभुपाद ः हमारे सचिव है। वे प्रबन्धन कर रहै है।
(श्रील प्रभुपाद साक्षात्कार,१४/७/७६,न्युर्याक)

यह तथ्य कि श्रील प्रभुपाद ने अपने किसी शिष्य को दीक्षा गुरू बनने का अधिकार नही दिया,का मतलब यह नही होता कि उनमें से कोई भी शुद्ध भक्त नही है। एक शिक्षा गुरू भी मुक्त आत्मा हो सकता है। ऐसा भी हो सकता है कि श्रीकृष्ण की योजना अनुसार किसी को भी यह कार्य नही करना है। अपितु श्रील प्रभुपाद के अनुयायियों को एक दूसरा बहुत महत्त्वपूर्ण कार्य अदा करना है उसी तरह जैसा श्रील प्रभुपाद की शारीरिक उपस्थिति में करते थे। वह है उनके सहायक के रूप में, उनके उत्तराधिकारी आचार्य के रूप नें नही ः

'समस्त जी.बी.सी. को शिक्षा गुरू बनना चाहिए। मै दीक्षा गुरू हूँ। और जैसा मै सिखा रहा हूँ वैसा सिखाकर और जैसा मै कर रहा हूँ वैसा करके तुम्हें शिक्षा गुरू बनन चाहिए।
(श्रील प्रभुपाद का पत्र मधुद्विसा को,४/८/७५)

'कभी-कभी दीक्षा गुरू हर समय उपस्थित नही होता। इसलिए शिक्षा,उपदेश एक वरिष्ठ भक्त से ले सकते है। उसको कहते है – शिक्षा गुरू।

(श्रील प्रभुपाद भगवद्-गीता प्रवचन,४/७/७४,होनोलूलू)

अतः विषय यह नही कि क्या श्रील प्रभुपाद ने एक भी शुद्ध भक्त बनाया या नही। विषय तो यह है कि क्या उन्होंने ऋत्विक प्रणाली स्थापित की है। दीक्षा गुरू श्रील प्रभुपाद अभी सशरीर उपस्थित नही है,इसका यह अर्थ नही कि वे दीक्षा गुरू नही रहे। उनकी सशरीर अनुपस्थिति में प्रामाणिक शिक्षा गुरूओं से हमे उपदेश लेने चाहिए। उनकी संख्या लाखों में हो सकती है।

६."जब तक गुरू अनुशासन और दृढता से सारे नियमों का पालन कर रहा हो,तब तक इसका फर्क नही पडता कि वह कितना शुद्ध है। इस तरह सेवा करते हुए वह अंत में योग्य हो जायेगा और अपने शिष्यों को भगवद्-धाम वापस ले जायेगा।"

जैसा पहले विश्लेषण किया गया था,दिक्षा गुरू बनने के लिये एक भक्त के सबसे उच्च स्तर पर स्थित होना चाहिए यानी कि महाभागवत। और उनके पिछले आचार्य द्वारा आदेश मिलना चाहिए। उपर्युक्त 'पोस्ट डेटेड' दर्शन एक अपराधिक मनोधारणा है जो निम्नलिखित उदाहरण द्वारा स्पष्ट है ः

'यदयापी पृथु महाराज वस्तुतः परम पुरूषोत्तम भगवान के अवतार थे तो भी उन्होंने अपनी प्रशंसा नकार दी क्योंकि परम पुरूष के गुण उनमें उजागर नही हुए थे। इससे वह यह समझाना चाहते थे कि अपने गुणों की आनुपस्थिति में किसी व्यक्ति को अपने अनुयाययों को अपनी प्रशंसा में नही लगाना चाहिए। हो सकता है कि वे गुण भविष्य में उत्पन्न हो जाये। अगर किसी व्यक्ति में महापुरूषों के गुण नही हो और इसका उपरान्त भी वह अपने अनुयायियों को अपनी प्रशंसा में यह सोचकर लगाता है कि भविष्य में तो वे गुण उजागर हो ही जायेंगे,तो इस तरह की प्रशंसा वस्तुतः एक अपमान है।'

(श्रीमद्-भगवतम्,४.१५.२३,भावार्थ)

जिस तरह एक अंधे व्यक्ति को ' कमल नयनों वाले ' से सम्बोधित करना एक अपमान है, उसी प्रकार एक शुद्ध आत्मा को भगवान के बराबर (जी•आई•आई•,पृष्ठ १५ विषय ८) समझना एक अपमान है। वह व्यक्ति का ही नही जिसकी प्रशंसा हो रही है अपितु भगवान कृष्ण तक शुद्ध भक्तों की गुरू परम्परा के लिए भी। दृढता और अनुशासन से नियमों का पालन करने के लिए एक शिष्य आगे बढ़ता है। प्रायःपचार भी करने लग जाते है कि दोनो समान है। केवल इसलिए कि कोई दृढ़तापूर्वक नियमों का पालन कर रहा

है, महाभागवत नही बन जाता। न ही कि उसके गुरू ने अब उसे गुरू बनने की आज्ञा दे दी। और अगर एक शिष्य बिना योग्य हुए और आज्ञा पाये दीक्षा देना चालू करता है तो वह नियमों का पालन ठीक से नही कर रहा है।

कई बार भक्त उपदेशामृत के श्लोक ५ के भावार्थ के एक कथन 'एक कनिष्ठ वैष्णव या मध्यम अधिकारी भी शिष्य स्वीकार सकता है' का उपयोग कर इस प्रकार के सिद्धान्त को प्रमाणिक बताना चाहते है। किसी कारणवश वे आगे की पंक्ति नही पढ़ते जिसमे शिष्यों का ऐसे गुरूओं से बचने की चेतावनी दी गयी है कि 'उनक अपर्याप्त मार्गदर्शन में जीवन के परम लक्ष्य तक पहुँचने में मुश्किल पायेंगे'। आगे कहा गया है कि 'अतः शिष्य को सावधानीपूर्वक एक उत्तम अधिकारी को ही गुरू बनाना चाहिए।'

आयोग्य गुरूओं को भी चेतावनी दी गयी है –

'उत्तम अधिकारी स्थिति तक पहुँचे बिना किसी को गुरू नही बनन चाहिए।'

अगर कोई गुरू 'अपर्याप्त मार्गदर्शन' ही दे रहा है तो परिभाषा अनुसार वह दीक्षा गुरू नही बन सकता क्योंकि दीक्षा के लिए पूर्ण दिव्य ज्ञान देना होता है। 'पर्याप्त' मतलब पूर्ण नही। यह स्पष्ट हो जाता है कि ऐसे दीक्षा गुरू,जो कि हमे आगे बढने के लिए पूर्ण मार्गदर्शन न दे पाये उनकी अनदेखी ही कर देनी चाहिए।

१०. "ऋत्विक प्रणाली का अर्थ हुआ गुरू परम्परा का अंत।"

गुरू परम्परा शाश्वत है। यह कभी रूक सकती। श्रील प्रभुपाद के अनुसार संकिर्तन आन्दोलन और उसके कारणवश इस्कॉन भविष्य के सिर्फ ६५00 वर्ष तक चलेगा। शाश्वत समय की तुलना में ६५00 वर्ष कुछ भी नही होते। ऐसा लगता है कि इस समय अवधि में श्रील प्रभुपाद इस्कॉन में 'करेंट लिंक' या 'वर्तमान गुरू' बने रहेंगे। जब तक वे या श्रीकृष्ण ६ जुलाई के आदेश को रोक नही देते या कोई आकस्मिक घटना (जैसे-सम्पूर्ण विश्व का अणुविक विनाश) होने से इस आदेश का पालन नही किया जा सकता। पिछले आचार्य कई वर्षो तक 'वर्तमान गुरू' बने रहे, जैसे-हजारों वर्ष (श्रील व्यासदेव) या लाखो वर्ष (निम्नलिखित कथन देखे),हम नही समझते कि संकिर्तन आन्दोलन के अंत तक अगर श्रील प्रभुपाद 'वर्तमान गुरू' बने रहे तो कुछ मुश्किल आयेगी।

'जहाँ तक परम्परा प्रणाली का सवाल है ः (समय में) लंबी दूरी से आश्चर्य नही होना चाहिए....हम भगवत्-गिता में पढते है कि सूर्य भगवान को कई लाखों वर्ष पूर्व गीता सिखायी गई थी, पर श्रीकृष्ण ने इस

परम्परा में सिर्फ ३ नाम ही बताये है यानी विवस्वान,मनु एवं इक्ष्वाकु। इसलिए इस दूरी से परम्परा को समझने में कोई मुश्किल नही आती। हमें प्रधान आचार्य लेने चाहिए और उनका अनुयायी बनना चाहिए।हमारे सम्प्रदाय के आचार्य के आधार पर इन आचार्यो को लेना चाहिए।'
(श्रील प्रभुपादका पत्र दयानन्द को,१२/४/६८)

६ जुलाई का आदेश इसलिए महत्त्वपूर्ण है क्योंकि वह यह बतलाता है कि जब तक इस्कॉन रहेगा तब तक इस संस्था के सदस्यों के तो प्रमुख आचार्य श्रील प्रभुपाद ही रहेंगे। केवल श्रील प्रभुपद या श्रीकृष्ण की साक्षात् मध्यस्थता से ही यह आदेश रोका जा सकता है (वह भी इस अन्तिम आदेश,जो सम्पूर्ण आंदोलन को भेजा गया था,की तरह ही स्पष्ट होना चाहिए)।

अतः जब तक कोई विपरीत आदेश नही दिया जाता,तब तक भविष्य की सभी पीढी के शिष्यों को श्रील प्रभुपाद द्वारा ही आध्यात्मिक विज्ञान का प्रतिपादन होगा;क्योंकि हमारी परम्परा में यह एक साधारण घटना है,अतः भय की आवश्यकता नही। परम्परा तभी रूक सकती है जब यह आध्यात्मिक विज्ञान ही लुप्त हो जाये। साधारणतया ऐसे अवसर पर धर्म को फिर से स्थापित करने के हेतु श्रीकृष्ण खुद ही अवतरित होते है। जब तक श्रील प्रभुपाद की पुस्तके वितरित होती रहेंगी,तब तक यह विज्ञान रहेगा और हर कोई इसका लाभ उठा पायेगा।

११.” हजारों से चला आ रहा गुरू-शिष्य का संबंध इस ऋत्विक प्रणाली से रूक जायेगा।”

असल में ऋत्विक प्रणाली असंख्य शिष्यों को धरती के इतिहास के सबसे महान आचार्य श्रील प्रभुपाद से जेडती है। इन शिष्यों का श्रील प्रभुपाद से घनिष्ठ संबंध होगा जो कि मूल रूप से उनकी पुस्तकें पढने और उनकी संस्था में सेवा करने पर आधारित होगा। साथ में बहुल 'शिक्षा गुरू' शिष्य संबंध विदयमान हो सकते है। तो यह प्रणाली गुरू-शिष्य पारम्परिक संबंध को किस तरह रोक देगी ?

दीक्षा गुरू और शिष्य के संबंध को औपचारिक रूप से जोडने कि रीति को दीक्षा संस्कार कहा जाता है। एक आचार्य दीक्षा संस्कार की प्रकियाओं को समय एवं स्थिति के अनुसार बदल सकते है,परन्तु नियम तो वही रहता है –

'श्रीमद वीरराघव आचार्य,रामानुज सम्प्रदाय की परम्परा में एक आचार्य,ने अपनी टीका में कहा है कि चांडालों को भी विशेष स्थिति में दीक्षा दी जा सकती है। उन्हें वैष्णव बनाने के लिए औपचारिक प्रकियाओं में थोडा-बहुत फेर-बदल किया जा सकता है।'

(श्रीमद्-भगवतम्,४.८.५,भावार्थ)

इसी प्रकार ऋत्विक प्रणाली स्वीकारने से एक प्रामाणिक गुरू से दीक्षा लेने के नियम का उल्लंघन नही होता।

कुछ लोग सुझाते है कि इस्कॉन की गुरू प्रणाली भी भारत के गावों में रहने वाले पारम्परिक गुरूओं जैसी होनी चाहिए। यु गुरू एक ही गाँव में रहते थे और कुछ ही शिष्य लेते थे जिन्हें निजी रूप शिक्षा देते थे। चाहे।

सोचने में यह कितना ही अच्छा लगे, इस प्रणाली को विश्व भर में फैले और फैलने वाले श्री चैतन्य महाप्रभु के संकिर्तन आन्दोलन में अपनाया में नही जा सकता। इस आन्दोलन में श्रील प्रभुपाद एक जगद्गुरू है और होंगे। उनके हजारों और लाखों शिष्य और होंगे।

श्रील प्रभुपाद ने एक विश्व्यापी आंदोलन स्थापित किया है जिससे विश्व में कोई भी उनका 'संग' ले सकता,'सेवा कर सकता है,'और 'प्रश्न' कर सकता है। हम क्यों गाँव की गुरू प्रणाली को इस्कॉन में थोपना चाहे जब श्रील प्रभुपाद ने कभी ऐसा आदेश दिया ही नही ?

अगर सब भक्त अपने-अपने गुरू,जिनकी अलग-अलग विचारधारा होती है,अलग-अलग आध्यात्मिक स्तर होता है,के आदेशों का पालन करना चाहेंगे तो एकता कैसे रहेगी ? ऐसी भी क्या प्रणाली कि संपूर्ण आध्यात्मिक जीवन ही दाँव पर लग जाये। श्रील प्रभूपाद नें हमें एक पृष्ट और सरल दीक्षा प्रणाली दी है जिससे सीधे एक शुद्ध भक्त की शरण ली जा सकती है। हमें मालूम है कि वे हमें कभी मझदार में नही छोड सकते है। इस्कॉन की एकता बनाये रखने का यही एकमाज मार्ग है।

कुछ भक्तों को लगता है कि एक जीवित एवं सशरीर उपस्थित दीक्षा गुरू की अनुपस्थिति में आध्यात्मिक विज्ञाय लुप्त हो जायेगा। परन्तु इस तरह का नियम एक बार भी श्रील प्रभुपाद ने अपनी पुस्तकों में नही बतलाया। इस कारण यह हमारा दर्शन नही है। जब तक ऋत्विक प्रणाली कार्य करती रहेगी,तब तका कई जीवित शिक्षा गुरू सशरीर उपस्थित रहेंगे जो एक जीवित परन्तु

सशरीर अनुपस्थित महाभागवत का सहयोग करेंगे और उनकी ओर से कार्य करेंगे। जब तक यह शिक्षा गुरू कुछ बदलते नही,आविष्कार नही करते,महत्त्वपूर्ण आदेशों की अवहेलना नही करते और कृत्रिम रूप से दीक्षा गुरू नही बनते,तब तक यह आध्यात्मिक विज्ञान लुप्त नहीं होगा। अगर इस तरह के दुराचार के फलस्वरूप यह विज्ञान लुप्त हो जाता है तो श्रीकृष्ण निश्चित रूप

से इसे ठिक करने के लिये खुद कुछ करेंगे। हो सकता है कि वे गोलोकधाम के एक निवासी को फिर से एक नई संस्था बनाने के लिए भेजें। हम सबको मिलकर ऐसा करना है जिससे ऐसी नौबत नहीं आये।

१२. " गुरू परम्परा चलाने के लिए यह ऋत्विक प्रणाली एक सामान्य विधि नहीं है। उचित विधि तो यह होती है कि गुरू अपनी सशरीर उपस्थिति में ही शिष्यों का सब कुछ सीखा देते है। जैसे ही गुरू यह ग्रह छोड़ देते है तो उनके वरिष्ठ शिष्यों का कर्तव्य होता है कि वे खुद गुरू बनें और इस तरह गुरू परम्परा कायम रखे। यह 'सामान्य' विधि है।"

दीक्षा गुरू बनने के लिये 'योग्यता' और अपने 'गुरू के आदेश' को छोड़ भी दें तो भी यह स्पष्ट हो जाता है कि हमारी परम्परा में कई विविधिताएँ है। ये विविधताएँ मुख्यतः पाँच श्रेणियों में आती है ः

(क) अंतर ः यह तब होता है जब परम्परा के एक आचार्य प्रस्थान करते है और तदुपरान्त कोई शिष्य उसी समय से दीक्षा देना चालू नही करता। षा दिर जिन्हे भविष्य में आचार्य बनन है उनको अपने गुरू द्वारा कुछ समय तक आज्ञा नही मिलती। उदाहरणतया,श्रील भक्तिसिद्धांत स्वरस्वती ठाकूर के सशरीर प्रस्थान उपरान्त हमारे सम्प्रदाय में दूसरी प्रमाणिक दीक्षा बीस वर्ष तक नही मिली थी। सौ साल तक के अंतर अपने सम्प्रदाय में असामान्य नही है।

(ख) विपरीत अंतर ः यह तब होता है जब गुरू की शारीरिक उपस्थिति में ही उनके शिष्य दीक्षा देना प्रारंभ कर देते है। उदाहरणतया,ब्रह्माजी अब भी सशरीर उपस्थित है तो भी उनके शिष्य को दीक्षा दे चुके है।

श्रील भक्तीसिद्धांत सरस्वती ठाकुर दोनों श्रील भक्तिविनोद ठाकुर एवं श्रील गौर किशोर दास बाबाजी की सशरीर उपस्थिति में दीक्षा देने लगे थे। जी.आई.आई. (पृष्ठ २३) के अनुसार हमारे सम्प्रदाय में यह एक सामान्य घटना है।

(ग) शिक्षा/दीक्षा कड़ी ः ये वे उदाहरण है जब एक आचार्य के प्रस्थान उपरान्त कोई शिष्य उन्हें अपना प्राथमिक गुरू स्वीकारता है। यह मालूम करना मुश्किल है कि वह आचार्य शिष्य के दीक्षा गुरू होते है या शिक्षा गुरू। श्रील प्रभुपाद ने इनका विश्लेषण नही किया है। उदाहरणतया श्रील विश्वनाथ चकवर्ती ठाकूर शिक्षा गुरू थे या दीक्षा गुरू ? हम उन्हें शिक्षा गुरू बोलना चाहेंगे तो वह एक शुद्ध कल्पना है;क्योंकि श्रील प्रभुपाद ने सिर्फ इतना ही कहा है ः

'श्रील नरोत्तम दास ठाकूर जिन्होंने श्रील विश्वनाथ चकवर्ती ठाकुर को अपना दास स्वीकारा।'
(चैतन्य चरितामृत आदि,१)

'विश्वनाथ चकवर्ती ठाकुर उन्होंने अपना गुरू अपनाया, नरोत्तम दास ठाकुर'।
(श्रील प्रभुपाद श्रीमद-भागवतम् प्रवचन,१७/४/७६,बम्बई)

ज्यादातर ऐसे शिष्यों का एक सशरीर उपस्थित भक्त के द्वारा दीक्षा संस्कार भी होता है। तो भी सशरीर अनुपस्थित आचार्य उनके दीक्षा गुरू हो सकते है। इसी प्रकार ऋत्विक संस्कार के उपरान्त ऋत्विक या टेंपल प्रेसिडेंट एक शिष्य के शाश्वत दीक्षा गुरू नही बन जाते। उपर्युक्त भक्त द्वारा एक सशरीर अनुपस्थित शुद्ध भक्त को अपना सद-गुरू बनाने की आज्ञा लेते थे। उसी प्रकार,श्रील प्रभुपाद के नये संभावित शिष्य दीक्षा गुरू लेने के लिए ऋत्विक एवं टेंपल प्रेसिडेंट से आज्ञा लेंगे।

(घ) दीक्षा की प्रकिया ः ये दीक्षा देने की असामान्य विधियाँ है। उदाहरण के लिए – श्रीकृष्ण द्वारा ब्रह्माजी को,श्री चैतन्य द्वारा एक बौद्ध के कान में उपदेश आदि। एक ग्रह से दूसरे ग्रह पर दीक्षा स्थानान्तरित करना भी इसी श्रेणी में आ सकता है। उदाहरणतया मनु द्वारा इक्ष्वाकू को (भगवद्-गिता,४.१)।

(ड) उत्तराधिकारी प्रणाली ः अपने सम्प्रदाय में कई उत्तराधिकारी आचार्य प्रणालियाँ है। उदाहरण के लिये – श्रील भक्तिविनोद ने 'प्रभावशाली वैष्णव सन्तान' प्रणाली अपनायी। श्रील भक्तिसिद्धांत सरस्वती ठाकुर ने 'स्वतः तेजस्वी आचार्य' प्रणाली अपनायी। श्रील प्रभुपाद ने 'ऋत्विक – दीक्षा संस्कार के लिए आचार्य के प्रतिनिधि प्रणाली' अपनायी जिसमें ए.सी. भक्तीवेदांत स्वामी प्रभुपाद के शिष्य होंगे'। जी.बी.सी. द्वारा वर्तमान में 'बहुल आचार्य परम्परा प्रणाली' लागू की हुई है।

यह स्पष्ट हो जाता है कि सभी आचार्य दीक्षा देने के लिए अपनी अलग प्रकिया अपना सकते है और अपनाते है। इसलिए किसी एक प्रणाली को 'सामान्य' बताना असामान्य बात होगी।

१३." अगर हम ऋत्विक प्रणाली अपना लेते है तो हम किसी भी पिछले आचार्य से दीक्षा ले सकते है।"

इसके विरोध में दो तर्क दिये जा सकते है –

(क) श्रील भक्तिसिद्धांत सरस्वती ठाकुर या पिछले किसी आचार्य ने ऋत्विक प्रणाली 'इस समय से' लागू नही की थी।

(ख) हमें 'वर्तमान गुरू' को ही अपनाना होगा।

'श्रीमद-भागवतम् के मूल उपदेशों को समझने के लिए गुरू परम्परा के वर्तमान गुरू को ही अपनाना चाहिए।'
(श्रीमद-भागवतम्,२.६.७.,भावार्थ)

यह स्वतः ही स्पष्ट है कि श्रील प्रभुपाद हमारे सम्प्रदाय आचार्य है। उनकी पुस्तकें,उनके बनाये हुये नियम,उनके आश्वासनों को ही सही एवं पूर्ण मानकर हमने अपना आध्यात्मिक जीवन संपूर्ण रूप से उनके उपदेशों पर निर्भित किया हुआ है। आध्यात्मिक जीवन के प्रारंभ से ही हर भक्त का उनसे संबंध स्थापित हो जाता है। उनके निदेशों को हम थोड़ा सा भी नही बदल सकते। वे श्रील भक्तिसिद्धांत सरस्वती ठाकुर के सशरीर प्रस्थान उपरान्त उनके आदेश पर ही आचार्य बने है। अतः श्रील प्रभुपाद ही हमारे वर्तमान गुरू है। वे ही दीक्षा लेने के लिए उपयुक्त भक्त है।

१४." 'वर्तमान गुरू' होने के लिए सशरीर उपस्थिति अनिवार्य है।"

श्रील प्रभुपाद ने ऐसा निर्देश काभी नही दिया।

विश्लेषण ः क्या गुरू सशरीर अनुपस्थिति हुए भी वर्तमान हो सकते है ?

(क) 'वर्तमान गुरू' शब्द केवल एक बार ही श्रील प्रभुपाद की पुस्तकों में गया है। इसके साथ 'सशरीर उपस्थिति' का उपयोग नही किया गया है। अगर सशरीर उपस्थिति अनिवार्य होती तो उसको जरूर सम्बोधित किया होता।

(ख) शब्दकोश में 'वर्तमान' के अर्थ में सशरीर उपस्थिति सम्मिलित नही है।

(ग) शब्दकोश के इस अर्थ के अनुसार सशरीर अनुपस्थित गुरू और उनकी पुस्तकों को भी 'वर्तमान' से संबोधित किया जा सकता है।

(घ) श्रील प्रभुपाद की पुस्तके पढने ओर उनके वर्तमान 'इस्कॉन' में सेवा करने से ही वर्तमान गुरू की संगत पाने का कार्य परिपूर्ण हो सकता है।

'श्रीमद-भागवतम् के मूल उपदेश समझने के लिए गुरू परम्परा के वर्तमान गुरू को ही अपनाना चाहिए।'
(श्रीमद-भागवतम्,२.६.७,भावार्थ)

(ड) श्रील प्रभुपाद 'इमिडिएट आचार्य','वर्तमान आचार्य' और 'करंट लिंक' (वर्तमान गुरू) को पर्यायवाची की तरह इस्तेमाल करते है। 'इमिडिएट' शब्द का मतलब होता है –

'विदाउट इंटरवैनिंग मीडियम' – अति सन्निहित,'क्लोसेस्ट ऑर मोस्ट डाइरेक्ट इन रिलेशनसिप'– अनन्तरित या अति समीप का। यह प्रतीत होता है कि बिना किसी की मध्यस्थता के श्रील प्रभुपाद से सीधा संबंध स्थापित किया जा सकता है। (जैसा इस्कॉन के हर भक्त को व्यवहारिक ज्ञान है) शारीरिक उपस्थिति या अनुपस्थिति से इस संबंध को कोई फर्क नही पडता।

(च) 'वर्तमान गुरू' एवं शारीरिक उपस्थिति /अनुपस्थिति में कोई सीधा संबंध इसलिए नही लगता क्योंकि ऐसे भी कई

उदाहरण है जब गुरू की शारीरिक उपस्थिति में भी कुछ शिष्यों ने दीक्षा दी है। दूसरे शब्दों में,अगर अपने गुरू की सशरीर उपस्थिति में भी 'वर्तमान गुरू' बना जा सकता है तो एक आचार्य अपनी सशरीर अनुपस्थिति में भी वर्तमान गुरू हो सकता है ?

सारांश में,हमें ऐसा कोई प्रमाण नही मिला कि 'वर्तमान गुरू' का शारीरिक उपस्थिति या अनुपस्थिति से कोई संबंध हो।

१५. " श्रील भक्तिसिद्धांत सरस्वती ठाकुर के शारीरिक प्रस्थान उपरान्त श्रील प्रभुपाद के कोई भाई स्वयं गुरू बन गये थे। तो श्रील प्रभुपाद के शिष्य भी ऐसा करे तो क्या गलत है ? "

दीक्षा गुरू बनने का ढोंग करने से श्रील भक्तिसिद्धांत सरस्वती ठाकुर के शिष्य उनके गुरू के आदेश के बिल्कुल खिलाफ गये थे। श्रील भक्तिसिद्धांत सरस्वती ठाकुर का अंतिम आदेश था जी.बी.सी. बनन और स्वतः तेजस्वी आचार्य की प्रतिज्ञा करना। श्रील

प्रभुपाद ने इस विषय पर अपने गुरू भाईयों की कडी निन्दा की थी,और कहा था कि वे प्रचार कार्य और दीक्षा देने के लिए बेअसर हो गये है।

'मेरे गुरू भाइयों में कोई भी आचार्य बनने के योग्य नही है।'

(श्रील प्रभुपाद का पत्र रूपानुगा को,२८/४/७४)

'तुम जान लो कि वह (बॉन महाराज) एक मुक्त आत्मा नही है। अतः वह किसी को कृष्ण भावनामृत की दीक्षा नही दे सकता। इसके लिये उच्च अधिकारियों द्वारा विशेष आशीर्वाद मिलना आवश्यक है।'

(श्रील प्रभुपाद का पत्र जनार्दन को,२६/४/६८)

'अगर हर कोई दीक्षा देता रहेगा तो प्रतिकूल फल मिलेगा। जब तक ऐसा चलेगा,तब तक निराशा ही मिलेगी।'

(श्रील प्रभुपाद,फाल्गुन कृष्ण पंचमी,श्लोक २३)

हाल ही के अनुभव से दिख जाता है कि इनमें से एक व्यक्ति श्रील प्रभुपाद के प्रिय आंदोलन को कितनी क्षति पहुँचा सकता है। दूर से आदर देना ही उच्चित व्यवहार है। निश्चित रूप से उनको अपने गुरू की आज्ञा का पालन करने के उदाहरणस्वरूप नही लिया जा सकता। उन्होंने अपने गुरू के आंदोलन का नाश कर दिया और उन्हें इज़ाजत दी तो इस्कॉन के साथ भी वही करेंगे।

गौडीय मठ की गुरू प्रणाली ही म •आ •स •सि • (बहुल आचार्य उत्तराधिकारी प्रणाली) के लिये पूर्व उदाहरण है यानी कि वह भी अपने संस्थापकाचार्य की सीधी प्रकट इच्छा के विपरीत लागू की गई है।

१६."जब श्रील प्रभुपाद कहते है कि वे आचार्य न बनें तो उनका अभ्रिपाय बड़े 'आ' के आचार्य से था। यह आचार्य पूरी संस्था के निर्देशक होते है।"

श्रील प्रभुपाद कहाँ बड़े 'आ' और छोटे 'आ' के दिक्षा आचार्य में अंतर बतलाते है ? वे यह कहाँ बतलाते है कि एक किस्म के दीक्षा

गुरू किसी अपंगता के नाते यह नही कर पाते ?

१७." षह एक सामान्य धारणा है कि तीन प्रकार के आचार्य होतो है। इस्कॉन में सब यह मानते है।"

परन्तु श्रील प्रभुपाद ने यह धारणा कभी नही सिखलाई। यह मनोधारणा प्रघुम्न दास ने सत्स्वरूप दास गोस्वामी को ७ अगस्त १६७८ को लिखे पत्र द्वारा इस्कॉन में फैलाई थी। यह पत्र 'अण्डर माय ऑर्डर' (मेरे आदेश से) लेख में फिर प्रकाशित किया गया था और यह पत्र ही लेख का सबसे महत्त्वपूर्ण आधार है। यही लेख जी •आई•आई• सिद्धांत का मूल स्त्रोत है। इस लेख के कारण इस्कॉन की 'जोनल आचार्य सिस्टम' (क्षेत्रीय आचार्य प्रणाली) रूपान्तरित होकर वर्तमान की 'मल्टीपल आचार्य सक्सैसर सिस्टम' (बहुल आचार्य उत्तराधिकारी प्रणाली) बनी थी।

'मैंने आचार्य की यह परिभाषा ७ अगस्त १६७८ को प्रघुम्न द्वारा सत्स्वरूप दास गोस्वामी को लिखे पत्र से ली है। इस पत्र के सावधानीपूर्ण परीक्षण के लिये अब पाठक परिशिष्ट देखे।'

(अण्डर माय ऑर्डर,रविन्द्र दास, अगस्त १६८५)

प्रघुम्न,इस पज में आचार्य की परिभाषा तीन प्रकार की बतलाते है –

(१) जो आचार कर प्रचार करते है।
(२) जो एक शिष्य को दीक्षा देते है।
(३) संस्था के आध्यात्मिक नायक जिनकी नियुक्ति पिछले आचार्य द्वारा की गयी हो।

पहली परिभाषा हम स्वीकारते है,क्योंकि श्रील प्रभुपाद ने भी इसका प्रयोग कया था। यह परिभाषा कोई भी प्रचारक पर लागू होती है चाहे वह शिक्षा गुरू हो या दीक्षा गुरू।

दूसरी परिभाषा में प्रघुम्न बताते है कि इस तरह के आचार्य शिष्यों को दीक्षा दे सकते है और इन्हें आचार्यदेव से संबोधित किया जा सकता है,परन्तु स्वयं के शिष्यों द्वारा ही ः

'जो भी दीक्षा दे या गुरू बने वह 'आचार्यदेव' आदि से संबोधित किया जा सकता है - उनके शिष्यों द्वारा ही। ीजसने भी उन्हें गुरू स्वीकारा है उसे गुरू को पूरा सम्मान देना चाहिए। पर यह नियम उन पर लागू नही होता जो उनके शिष्य नही है।'
(प्रघुम्न,७/८/७८)

यह सब मनगढंत है। कही भी श्रील प्रभुपाद ऐसे दीक्षा गुरू का वर्णन नही करते जिनकी शुद्ध स्थिति केवल उनके शिष्यों द्वारा ही स्वीकारी जाए। (समस्त विश्व द्वारा या हमारे सम्प्रदाय के दूसरे वैष्णवें द्वारा भी नही) हमें यह देखना चाहिए कि खुद श्रील प्रभुपाद ने 'आचार्यदेव' का वर्णन किस तरह किया है। निम्नलिखित कथन आत्मसाक्षात्कार का विज्ञान (अध्याय दो) में प्रकाशित श्रील प्रभुपाद के व्यासपूजा अभिभाषण से है जो वे अपने गुरू श्रील भक्तिसिद्धांत सरस्वती ठाकुर के लिए पढ़ रहे है –

"जैसा कि हमें प्रामाणिक शास्त्रों से ज्ञात होता है,गुरू अथवा आचार्यदेव वैकुण्ठ जगत (परम-जगत) के सन्देश को प्रस्तुत करते है....

'....क्योंकि जब हम गुरूदेव अथवा आचार्यदेव के मूल सिद्धांतों की चर्चा करते है तो इन सिद्धांतों का विश्वव्यापी प्रयोग होना चाहिए।'

'श्रील आचार्यदेव,जिनको हम अपनी विनम्र श्रद्धांजलि अर्पित करने के लिए आज रात यहाँ एकत्र हुए है,वे किसी साम्प्रदायिक संस्था के गुरू नही है। दूसरे शब्दों मे,वे सत्य को भिन्न-भिन्न मतों से प्रस्तुत करने वालों में से नही है। इसके विपरीत वे तो जगद्गुरू है,अर्थात हम सबके गुरू है।'

'आचार्यदेव' शब्द की श्रील प्रभुपाद द्वारा परिभाषा तथा उपयोग,प्रघुम्न की परिभाषा से बिल्कुल उल्टा है। प्रघुम्न की परिभाषा से समझ पडता है कि 'आचार्यदेव' शब्द से उन व्यक्तियों को भी संबोधित किया जा सकता है जो ऊस स्तर पर है ही नही। इस प्रकार वह दीक्षा गुरू के स्तर को नीचा करते है।

आचार्यदेव से उन्ही को संबोधित करना चाहिये जो वास्तविक रूप में 'हम सबके गुरू' हो,जो समस्त संसार द्वारा पूजे जाने चाहिए।

'....वह साक्षात् भगवान और श्री नित्यानन्द प्रभु के प्रामाणिक प्रतिनिधि की तरह जाने जाते है। ये गुरू आचार्यदेव कहलाते है।
(चैतन्य चरितामृत आदि,१.४६)

तीसरी परिभाषा में प्रघुम्न समझाते है कि आचार्य शब्द आध्यात्मिक संस्था के निर्देशक के लिए इस्तेमाल होता हे।

'यह हर कोई नही हो सकता। यह केवल वह है जो पिछले आचार्य द्वारा आध्यात्मिक संस्था के निर्देशक के लिए दूसरों के ऊपर उत्तराधिकारी घोषित हुआ हो....समस्त गौड़ीय वैष्णव सम्प्रदाय में यह एक कठोर परम्परा है।'

(प्रघुम्न का पत्र सतस्वरूप दास गोस्वामी को,७/८/७८)

हम निश्चित ही इस तथ्य से सहमत है कि दीक्षा देने के लिये पिछले आचार्य द्वारा आदेश मिलना चाहिए।
(यह तथ्य दूसरी परिभाषा में बतलाया ही नही गया है।)

'गुरू परम्परा में आ रहे एक प्रामाणिक गुरू से ही,जिन्हें अपने पूर्व आचार्य द्वारा गुरू बनने का आदेश मिला हो,दीक्षा लेनी चाहिए।'
(श्रीमद-भागवत्,४.८.५४ भावार्थ)

परन्तु,यह 'आध्यात्मिक संस्था' की गद्दी लेने से कैसे संबोधित है। श्रील प्रभुपाद अपने गुरू महाराज की संस्था से बिल्कुल अलग एक दूसरी संस्था के आचार्य है। प्रघुम्न के तर्क के अनुसार श्रील प्रभुपाद पर परिभाषा दो ही लागू होनी चाहिए। जो भी 'कठोर परम्परा' प्रघुम्न बता रहे है वह श्रील प्रभुपाद ने कभी भी समझायी नही अतः हम उसको आराम से नकार सकाते है। पत्र में थोड़ा और नीचे चलने से हमे समझ आता है कि प्रघुम्न दास के धूर्त तकों की उत्पत्ति कहाँ से है –

'इसके बजाय दूसरे गौडीय मठों में,अगर कोई गुरू भाई आचार्य की पदवी पर भी है,तब भी वह ज्यादातर नम्रता के कारण एक पतले कपड़े का आसन ही इस्तेमाल करता है, और कुछ नही।'

श्रील प्रभुपाद के कोई भी गुरू भाई प्रामाणिक आचार्य नही है। यथार्थ की नम्रता होती तो श्रील भक्ति सिद्धांत सरस्वती ठाकुर के आदेश का पालन करते,अपनी अप्राकृतिक पदवियों का छोड़,श्रील प्रभुपाद की उच्चतम स्थिति को समझ कर असली जगद्गुरू की शरण में चल आते। दुर्भाग्यवश,गौडीय मठ के कुछ ही सदस्यों ने ऐसा किया है। यह तथ्य कि प्रघुम्न इन व्यक्तियों का उदाहरण तौर पर प्रस्तुत करते है वास्तव में हमारे सच्चे आचार्य की स्थिति को निचा दिखाना है।

'जहाँ तक भक्ति पुरी,तीर्थ महाराज आदि का सवाल है, वे मेरे गुरू भाई है अतः उन्हें आदर देना चाहिए। परन्तु इनसे किसी तरह का घनिष्ठ संबंध नही रखो;क्योंकि यह मेरे गुरू-महाराज के आदेशों के विपरीत गये है।
(श्रील प्रभुपाद का पत्र प्रघुम्न को,१७/२/६८)

यह एक शर्मनाक बात है कि प्रघुम्न प्रभु ने अपने गुरू महाराज के स्पष्ट निजी आदेश की अवहेलना की। यह और भी ज्यादा शर्मनाक तथ्य है कि उनकी पथभ्रष्ट धारणाओं ने इस्कॉन की वर्तमान गुरू प्रणाली के सिद्धांत को प्रतिरूप दिया है।

इस प्रकार,जब श्रील प्रभुपाद कहते है कि उनके कोइे भी गुरू आचार्य बनने के योग्य नही है तब यह मायने नही रखता कि पहली परिभाषा ठीक है या तिसरी। अगर वे पहली परिभाषा अनुसार योग्य नही थे यानी उनका आचार उचित नही था तो वे स्वतः ही तिसरी परिभाषा के अनुसार अयोग्य हो जाते है। अतः वे दीक्षा नही दे सकते। और अगर वे तिसरी परिभाषा अनुरूप योग्य नही थे तो उनको आदेश नही मिला यानी वे दीक्षा गुरू नही दे सकते।

सारांश में ः

(क) सारे प्रचारकों को परिभाषा एक के आचार्य यानी शिक्षा गुरू बनने का प्रयास करना चाहिए।

(ख) परिभाषा दो का विश्लेषण पूर्ण रूप से बनावटी है। किसी को भी चाहे वह शिष्य हो या नही,आचर्यदेव को एक सामान्य व्यक्ति समझना निषिद्ध है। अगर वे वास्तव में सामान्य व्यक्ति है तो वे किसी को भी दीक्षा नही दे सकते और आचार्यदेव नही कहलाये जा सकते। इसके अलावा इस परिभाषा में अपने गुरू से विशेष आज्ञा लेने की बात नही कही गई है। बिना ऐसी आज्ञा के कोई भी दीक्षा नही दे सकता।

(ग) परिभाषा तीन के आचार्य ही दीक्षा दे सकते है यानी जिन्हें अपने सम्प्रदाय के आचार्य द्वारा आज्ञा मिली है। दीक्षा मिलने की आज्ञा उपरान्त वह एक संस्था के निर्देशक बनते है या नही इससे फर्क नही पडता।

इस्कॉन में समस्त भक्तों को परिभाषा एक के आचार्य बनने को कहा जाता है जिससे वे आचार्य द्वारा प्रचार करते है यानी शिक्षा गुरू बनते है। इस तरह के आचार्य बनने के लिए एक अच्छी शरूआत यह होगी कि हम अपने गुरू की हर आज्ञा का पालन करना आरम्भ करे।

१८. " आचार्य की परिभाषा तय करने का विवाद ज्यादा महत्त्वपूर्ण नही लगता। केवल इसके कारण इस्कॉन को कोई हानि थोडे ही हुई होगी।"

असल में, दीक्षा गुरू की इस मनगढत प्रणाली ने इस्कॉन में बहुत भ्रम उत्पन्न किया है। कुछ इस्कॉन गुरू कहते है कि श्रील प्रभुपाद के बजाय अब वे ही दीक्षा गुरू है और नये शिष्यों को वे ही भगवद्धाम वापस ले जा रहे है। कुछ कहते है कि वे शिष्यों को केवल श्रील प्रभुपाद के निकट ले जा रहा है जो इन्हें भगवद्धाम ले जायेंगे (करीब-करीब ऋत्विक प्रणाली जैसे ही) कुछ कहते है कि श्रील प्रभुपाद ने ग्यारह ऋत्विक नियुक्त किये थे जो उनके उपरान्त छोटे 'आ' आचार्य में रूपान्तरित हो जाने थे। और दूसरे कहते है कि ये ग्यारह ही छोटे 'आ' के आचार्य नही बन जाने थे परन्तु श्रील प्रभुपाद के सब शिष्य (महिलाओं को छोड) आचार्य बनने चाहिए थे।

जी.आई.आई. ख्रे अनुसार खुद जी•बी•सी• भी स्पष्ट नही है कि वे किस तरह के गुरू 'अनमोदित' कर रही है।

जी•बी•सी• मानती है कि सम्प्रदाय के आचार्य एक मुहर द्वारा प्रामाणित नही हो जाते (जी.आई.आई.,विषय ६) पर तो भी हर साल गौर पूर्णिमा को मायापुर में वह बिल्कुल ऐसा ही कार्य करती है। अब तक करीब सौ दीक्षा गुरू है जिनको 'नो ऑब्जेक्शन' (कोई आपत्ति नही) प्रमाण-पत्र मिला हुआ है। ये सब गुरू साक्षात् हरि जैसे ही पूजे जाते है। सब शिष्यों के लिए जी•बी•सी• का यही निर्देश है (जी.आई.आई.,विषय १८,पृष्ठ १५) हमारी गुरू परम्परा केवल महाभागवतों से बनी है और हजारों वर्ष पूर्व परूषोत्तम भगवान द्वारा शुरू की गयी थी। इन दीक्षा गुरूओं को ऐसी परम्परा का वर्तमान गुरू कहा जाता है।

'भक्त को चाहिए कि वह श्रील प्रभुपाद के प्रतिनिधि की शरण में जाये। ये प्रतिनिधि गुरू परम्परा के 'वर्तमान' आचार्य है।
(जी.आई.आई.,पृष्ठ ३४)

उसी समय संभावित शिष्यों को चेतावनी दी जाती है कि इस्कॉन की सहमती....

'.....को अनुमोदित गुरू आध्यात्मिक प्रगति का मापदण्ड नही मानना चाहिए।'
(जी.आई.आई.,पृष्ठ १५,सेक्शन २.२)

एक और जगह हमें फिर चेतावनी दी जाती है ः

" श्रील प्रभुपाद का 'आदेश' था गुरू परम्परा को बढ़ाने के लिए नये शिष्यों को दीक्षा देना। अगर किसी भक्त को इस आदेश का पालन करने की अनुमति दी जाती है तो इसका यह प्रमाण नही कि यह भक्त 'उत्तम अधिकारी ','शुद्ध भक्त' बन गया है या उसने आध्यात्मिक का एक विशिष्ट स्तर पा लिया है।"
(जी.आई.आई.,पृष्ठ १५)

मंदिर के सब भक्तों द्वारा उनकी पूजा नही होगी सिर्फ उनके शिष्यों द्वारा एक निजी स्थान पर।
(जी.आई.आई.,पृष्ठ ७)-(प्रद्युम्न की आचार्यदेव की परिभाषा)

हमने पहले ही सिद्ध कर दिया है कि एक आज्ञा प्राप्त महाभागवत ही प्रामाणिक गुरू बन सकते है (हमने यह भी दिखा दिया है कि स्पष्ट 'आदेश' तो ऋत्विक बनने या शिक्षा गुरू बनने के लिए ही था) अतः किन्ही को 'दीक्षा गुरू' या 'वर्तमान गुरू' कहने का अर्थ है कि वे 'उत्तम अधिकारी','शुद्ध भक्त',बडे 'आ' परिभाषा तीन के आचार्य है।

यह एक शोचनीय तथ्य है कि जी•बी•सी• दीक्षा गुरू को पहले 'अनमोदन' करती है या 'कोई आपत्ति नही' करती और तदुपरान्त अगर पथभ्रष्ट हो जाये तो कोई उत्तरदायित्व या दोष नही लेती। हम निश्चित रूप से कह सकते है कि श्रील प्रभुपाद ने इस्कॅन को एक जूए की तरह नही बनाया है,जिसमे अपनी आध्यात्मिक जिदंगी

ही दाँव पर लग जाये। जी.बी.सी. इतना तो कर सकती है कि जब तक वह किसी गुरू के पीछे सौ प्रतिशत न खडी हो,तब ऊस पर मोहर नही लगाए। यह इच्छा उचित है क्योंकि हम श्रील प्रभुपाद के पिछे सौ प्र तिशत खडे है।

हाल ही में जयअद्वैत स्वामी ने उपर्युक्त विषय पर जी.बी.सी. की अनिश्चित धारणाओं पर टिप्पणी की –

'नियुक्त शब्द कही भी इस्तेमाल नही हुआ है। परन्तु 'दीक्षा गुरू के उम्मीदवार होते है',मतदान किया जाता है,और जो भक्त इस प्रकिया को पार कर लेते है वे 'इस्कॉन अनुमोदित' या 'इस्कॉन प्रमाणित' गुरू बन जाते है। आपका विश्वास बढाने के लिए एक तरफ जी.बी.सी. आपको इस्कॉन के एक प्रमाणीत गुरू से दीक्षा लेने और भगवान समान पूजा करने के लिये उत्साहित करती है दूसरी ओर जब इस्कॉन प्रमाणित गुरू गिर जाते है तो सम्बधित कानूनों की विस्तृत प्रणाली को लागु किया जाता है। परन्तु इन सब कानूनों और

प्रस्तावनाओं के बावजूद अगर हमें यह विचार करने पर मजबूर होना पडे कि इस्कॉन में गुरू का कार्य क्या होना चाहिए तो हमें गलत मत समझिए।

('ऋत्विक लोग कहाँ सहै है', जयअद्वैत स्वामी,१६६६)

जब हम इस्कॉन के गुरूओं के निन्दनीय कार्य देखते है तो आश्चर्य नही होता कि इस विषय पर इतना भ्रम है। जयअद्वैत स्वामी के है लेख से एक बार फिर ः

तथ्य ः इस्कॉन के गुरूओं ने कई गुरू भाईयों और गुरू बहनों को संस्था से खदेडा है।

तथ्य ः इस्कॉन के गुरूओं ने इस्कॉन की कुछ संपत्ति का अपने यश और ऐशो-आराम के लिये गबन और कुप्रयोग किया है।

तथ्य ः इस्कॉन गुरूओं ने पुरूष, महिलाओं और शायद बच्चों के साथ अवैध मैथुन किया है।

तथ्य ः (....आदि,आदि)

('ऋत्विक लोग कहाँ सहै है', जयअद्वैत स्वामी,१६६६)

इस्कॉन में नये भक्तों को बतलाया जाता है कि श्रील प्रभुपाद की पुस्तकों और उपदेशों के अनुसार अपने दीक्षा गुरू को इस्कॉन के योग्य गुरूओं में से ढूँढना खुद का कार्य है। परन्तु अगर कोई भक्त इस निष्कर्ष पर पहुँचता है कि 'सशरीर उपस्थित' कोई भी गुरू योग्य नही है अतः वह श्रील प्रभुपाद को ही दीक्षा गुरू बनन चाहता है तो उसे संस्था से क्रूरता से निकाल दिया जाता है। क्या यह उचित है ? आखिर वह जी.बी.सी. के ही आदेश का पालन कर रह है। क्या उसे उचित निष्कर्ष पर आने के लिये दंडित किया जाए जब इतने प्रमाण मिलते है कि श्रील प्रभुपाद भी यही चाहते है।

जब जी.बी.सी. ने गुरूओं को लाइन में रखने के लिए खुद एक विस्तुत दण्ड विधान बनाया है तब कैसे किसी शिष्य को वर्तमान गुरूओं में पूर्ण श्रद्धा हो पायेगी ? और तो और इस दण्ड विधान को उने कतावों में कही नही बतलाया गया है जिनको पढकर इस निष्कर्ष पर पहुँचना है ? दूसरे को भ्रमित करने का इससे अच्छा उदाहरण कहाँ मिलेगा ?

श्रील प्रभुपाद के स्पष्ट अन्तिम आदेश का पालन करना ही सबसे सुरक्षित मार्ग होगा। कौन आपत्ति करेगा कि पहले जैसे ही इस्कॉन के एकमाज दीक्षा गुरू श्रील प्रभुपाद ही हों ?

१६."इस्कॉन जर्नल १६६0 के अनुसार श्रील प्रभुपाद के कुछ गुरू भाई वास्तव में आचार्य थे।"

यह किसने कहा ?

- उस व्यक्ति ने जिसने कहा था कि वैष्णव शब्दकोश में ऋत्विक शब्द का अस्तित्त्व ही नही है। (इस्कॉन जर्नल,पृष्ठ २३)। जबकी श्रीमद्-भागवतम् में इस शब्द का कोई बार प्रयोग हुआ है। स्वयं श्रील प्रभुपाद ने भी ६ जुलाई के पत्र में इस शब्द का उपयोग किया है।

- उस व्यक्ति ने जिसने यह संकेत दिया था कि श्रील प्रभुपाद को भी दीक्षा देने की आज्ञा नही मिली थी ः

'भक्तसिद्धांत सरस्वती ने न तो कभी ऐसा कहा न कोई दस्तावेज छोडा जिसमे उन्होंने कहा कि स्वामीजी श्रील प्रभुपाद) गुरू होंगे।'
(इस्कॉन जर्नल,१६६0,पृष्ठ २३)

- उस व्यक्ति ने जिसने कहा था कि तिर्थ,माधव एवं श्रीधर महाराज प्रमाणिक आचार्य थे,जब श्रील प्रभुपाद ने कहा था कि उनमें से कोई भी योग्य नही था ः

'पर हमारे सम्प्रदाय में एक प्रणाली है। इसके कारण तीर्थ महाराज,माधव महाराज,श्रीधर महाराज,हमारे गुरूदेव,स्वामीजी-स्वामीजी भक्तिवेदांत स्वामी-सभी आचार्य बने।' (इस्कॉन जर्नल,१६६0,पृष्ठ २३)

उपर्युक्त कथन और श्रील प्रभुपाद के निम्नलिखित कथन में अन्तर देखिए ः

'भक्त विलास तीर्थ हमारी संस्था के बहुत विरूद्ध है और भक्ति के बारे में उसे कोई ठीक जानकारी नही है। वह दूषित है।
(श्रील प्रभुपाद का पत्र सुखदेव को,१४/११/७३)

और उन्होंने दूसरे 'आचार्यों' के लिए कहा था –

'मेरे समस्त गुरू भाइयों में कोई भी आचार्य बनने के योग्य नही है।'
(श्रील प्रभुपाद का पत्र रूपानुगा को,२८/४/७४)

- वही व्यक्ति जिसने हाल में नई जानकारी उपलब्ध कराई है कि श्रील प्रभुपाद ने सब कुछ नही दिया। उसके अनुसार पूर्ण जानकारी के लिये एक रसिक गुरू की शरण में जाना चाहिए।

२0."श्रील प्रभुपद ने कभी-कभी अपने गुरू भाइयों को अच्छा बताया था।"

यह सबको ज्ञात है कि श्रील प्रभुपाद अपने गुरू भाइयों से नम्रतापूर्वक व्यवहार करते थे। यहाँ तक कि एक बार तो उन्होंने श्रीधर महाराज को अपने शिक्षा गुरू भी कहा था। श्रील प्रभुपाद एक स्नेहशील व्यक्ति थे। वे हर समय अलग-अलग विधियों से अपने गुरू-भाईयों को संकिर्तन आन्दोलन में सम्मिलित करना चाहते थे। परन्तु हमें जानना चाहिए कि अगर वे प्रामाणिक आचार्य होते तो श्रील प्रभुपाद कभी भी उनके लिए गलत नही बोलते। प्रामाणिक दीक्षा गुरूओं को आज्ञा का उल्लंघन करने वाला,ईर्षालु साँप,कुत्ता,सूअर,कीडा आदि बोलना एक महाअपराध होता है और श्रील प्रभुपाद ने ऐसा कभी नही किया होता। निम्नलिखित वार्ता लाप श्रील प्रभुपाद और भावानंदा के बिच हुआ था, जिसमें वे तिर्थ महाराज द्वारा निकाली गई एक पुस्तिका का विश्लेषण कर रहे है

भावनन्दा ः अब बडे अक्षरों में 'आचार्यदेव गिडंडी स्वामी श्रील भक्तिविलास तीर्थ महाराज। सभी विद्वान लोग भारत के शोचनिय समय के बारे में जानते थे जब हिन्दू धर्म खतरे में था....'

श्रील प्रभुपाद ः (हँसते हुए)....यह पागलपन है।

भावनन्दा ः '....सही समय पर, उन्हें (श्रील भक्तिसिद्धांत को) एक महापुरूष मिले,जिन्होंने उत्साहपूर्वक कष्ट उठाते....'

श्रील प्रभुपाद ः 'जरा देखे तो ! 'उन्हें एक महापुरूष मिले 'वह' यह महापुरूष है। वह इसका प्रमाण भी देगा। (बाद में) कोई इसे स्वीकारता नही है....उसकी महानता कहाँ है ? कौन इसे जानता है ? देखे तो। तो अपने आपको महापुरूष घोषित करने का वह यह उपाय बना रहा है।.... (तिथे महाराज) बहुत ईर्षालु है। ये दृष्ट लोग कुछ गडबड कर सकते है।'

(श्रील प्रभुपाद वार्तालाप,१६/१/७६,मायापुर)

प्रामाणिक आचार्य कभी भी ईर्षालु एवं दृष्ट आदि नही बतलाये जा सकते। दुःखुद तो यह है कि गौडीय मठ के कुछ लोग अब भी कुछ न कुछ गडबड करते रहते है। दूर से आदर देना ही सबसे सुरक्षित पद्धति है।

२१."प्रमाणिक आचार्य का आध्यात्मिक स्तर ज्यादा ऊँचा होने की जरूरत नही है क्योंकि वे कई बार गिर भी जाते है।"

श्रील प्रभुपाद बिल्कुल विपरित कहते है ः

'एक प्रमाणिक गुरू,आदिकाल से गुरू परम्परा में स्थित है,और वह भगवान के कथनों से कभी भी पथभ्रष्ट नही हो सकते ।'
(भगवद्-गीता,४.४२,भावार्थ)

२२."पिछले आचार्य तो वह भी बतलाते है कि अगर गुरू पथभ्रष्ट हो जाये तो क्या करना चाहिए।"

ऐसे पथभ्रष्ट गुरू,परिभाषा अनुसार,आदिकाल से गुरू परम्परा के सदस्य नही हो सकते। बल्कि,वे बद्ध और स्वयं अधिकार प्राप्त कुल गुरू हो सकते है जो दीक्षा गुरू बनने का स्वांग रच रहे हों। गुरू परम्परा के प्रामाणिक सदस्य कभी भी पथभ्रष्ट नही हो सकते।

'भगवान हर समय भगवान है,गुरू हर समय गुरू।'
(आत्मसाक्षात्कार का वज्ञान,अध्याय २)

'अगर वो ढोंगी है,तो वह गुरू कैसे हो सकते है।'

(आत्मसाक्षात्कार का विज्ञान,अध्याय २)

'शुद्ध भक्त माया के चंगुल से हर समय मुक्त रहते है।'
(श्रीमद-भागवतम्,५.३.१४)

'एक उत्तम अधिकारी कभी भी गिर नही सकता।'
(चैतन्य चरितामृत,मध्य,२२.७१)

'गुरू हर समय मुक्त आत्मा होते है।'
(श्रील प्रभुपाद का पत्र तमाल कृष्ण को, २१/६/७0)

श्रील प्रभुपाद की पुस्तकों में एक भी ऐसा उदाहरण नही है कि औपचारिक रूप से प्रमाणिक कोई गुरू पथभ्रष्ट हो गया हो। शुक्राचार्य का उदाहरण प्रमाणस्वरूप दिया जाता है। परन्तु यह उदाहरण उचित नही है क्योंकि वह प्रमाणिक गुरू परम्परा के सदस्य थे ही नही। ब्रह्मा जी का अपनी पुत्री के साथ लीला का भी उदाहरण दिया जाता है। परन्तु श्रीमद-भागवतम् में यह लीला उनके सम्प्रदाय के प्रधान बनने से पहले की है। यहाँ तक कि श्रील प्रभुपाद से जब उनके शिष्य निताई ने आचार्य के गिरने का यह उदाहरण प्रस्तुत किया था तो श्रील प्रभुपाद बहुत अप्रसन्न हो गये थे। उनके अनुसार केवल अप्रमाणिक गुरू ही भव्यता और सुन्दरियों द्वारा लोभित हो सकते है।

इन सब निर्देशों के उपरान्त भी जी•बी•सी• की पुस्तक जी•आई.आई.में एक पूर्ण भाग यही बतलाता है कि अपने गुरू के पथभ्रष्ट होने शिष्य को क्या करना चाहिए। उस अध्याय की शुरूआत में लिखा हुआ है कि वर्तमान गुरू से ही शिक्षा लेनी चाहिये न कि उन्हें लाँघकर पिछले आचायों से शिक्षा ली जाती है। परन्तु पिछले आचायों के लिए जो श्रील प्रभुपाद ने कभी बतलाये ही नही।

पिछले आचायों द्वारा बताये गये पथभ्रष्ट गुरू कभी भी प्रमाणिक गुरू परम्परा के सदस्य नही हो सकते ः

'नारद मुनि,हरिदास ठाकुर और ऐसे आचायों को,जिन्हें भगवान के गुणों के प्रचार के लिए विशिष्ट रूप से अधिकार दिया गया है,कभी भी भौतिक स्तर तक निचे नही लाया जा सकता।
(श्रीमद-भागवतम्,७.७.१४,भावार्थ)

अपने आचार्य को लाँघ पिछले आचार्यो से शिक्षा लेना 'री-इनिशिएशन' यानी पुनः दीक्षा के अध्याय से स्पष्ट हो जाता है। 'पुनः दीक्षा' शब्द का न तो श्रील प्रभुपाद ने और न पिछले किसी आचार्य ने कभी प्रयोग किया है।

प्रश्नोत्तर सेक्शन (जी.आई.आई.,पृष्ठ ३५,प्रश्न ४) मे 'गुरू को तिरस्कृत कब किया जाये' और 'पुनः दीक्षा कब ली जाये' के बारे मे विस्तृत जानकारी उपलब्ध है। अपने विश्लेषण में लेखक कहते है ः

'भाग्यवश,इस विषय का मूल श्रील भक्तिविनोद ठाकुर ने अपने जैव-धर्म में और श्रील जीव गोस्वामी ने अपने भक्ति संदर्भ में समझा दिया है।'
(जी.आई.आई.,पृष्ठ ३५)

'भाग्यवश' शब्द,अभाग्य से यह बतलाता है कि श्रील प्रभुपाद यह जानकारी देना भूल गये थे। इसलिए अच्छा हुआ यह जानकारी हमें पिछले आचार्यो से मिल गयी।

परन्तु श्रील प्रभुपाद ने हर समय कहा था कि आध्यात्मिक प्रगति के लिए जो भी जानकारी चाहिए वह सब उनकी पुस्तकों में उपलब्ध है। हम क्यों ऐसे नियम ला रहे है जो हमारे आचार्य ने कभी नही बतलाए ?

२३. " परन्तु पिछले आचार्यो से पूछने में नुकसान क्या है ?"

कुछ नही। परन्तु इस प्रकार पाई गई जानकारी से हम श्रील प्रभुपाद द्वारा दिये गये नियम नही बदल सकते। श्रील प्रभुपाद ने कभी नही बतलाया कि एक प्रामाणिक गुरू कभी प्रथभ्रष्ट हो सकते है। 'जिव का स्त्रोत्र' का विवाद इसी कारण हुआ था।

'हमे पिछले आचार्य प्रभुपाद के माध्यम से देखना चाहिए। हम प्रभुपाद को लाँघकर पिछले आचार्यो के पास नही जा सकते और न ही उनके पास जाकर पीछे मुडकर श्रील प्रभुपाद को देख सकते है।

(अवर ओरिजिनल पोसिशन,पृष्ठ १६३,जी.बी.सी. प्रेस)

नये आध्यात्मिक नियम बनाना किस तरह से पिछले आचार्यो को प्रभुपाद के माध्यम से देखना होता है ?

अगर जी.बी.सी. ने पिछले आचार्यो के कथनों के अर्थ ठीक भी निकाले हुए है,तो भी उनके उपयोग से श्रील प्रभुपाद के उपदेशों को बदला नही जा सकता। श्रील नरहरि ठाकुर की पुस्तक श्रीकृष्ण भजनामृत में दो श्लोक इसी नियम को स्पष्ट करते है। जी.बी.सी. को इन श्लोंको का वर्णन करना चाहिए था;क्योकि इसी पुस्तक से उन्होंने अपने दर्शन का प्रमाण लिया था।

श्लोक ४८ ः 'एक शिष्य दूसरे वरिष्ठ से कोई उपदेश ले सकता है,किन्तु इन उपदेशों कों अपने गुरू के पास लाकर प्रस्तुत करना चाहिए। अपने गुरू को प्रस्तुत करने बाद उनसे फिर से यही उपदेश संलग्न निर्देशों के साथ सुनने चाहिए।'

श्लोक ४६ ः '....एक शिष्य जिसने दूसरे वैष्णवों से कुछ उपदेश सुने हों वे उपदेश उचित भी हो सकते है,तो भी अगर वो इन उपदशों को अपने गुरू से फिर से पृष्टि नही कराता और खुद अपना लेता है तो वह एक खराब शिष्य और पापी माना जायेगा।'

हम यह नम्र निवेदन करेंगे कि इस्कॉन के सदस्यों के आध्यात्मिक जीवन की प्रगती के लिये जी.आई.आई. पुस्तक में संशोधन किया जाए।

२४. "श्रील प्रभुपाद ने ऐसा कभी क्यों नही बतलाया कि गुरू के पथभ्रष्ट होने पर क्या करना चाहिये ?"

श्रील प्रभुपाद के अंतिम आदेश के अनुसार वे ही भविष्य के लिए भी दीक्षा गुरू रहेंगे। और गुरू परम्परा के प्रमाणिक गुरू होने के

नाते कोई शंका नही कि वे एक क्षण के लिए भी पथभ्रष्ट हो सकते हों –

'एक प्रामाणिक गुरू हर समय परम पुरूषोत्तम भगवान की अहैतुकी भक्ति सेवा में लगे रहते है।
(चैतन्य चरितामृत,आदि,१.४६)

श्रील प्रभुपाद ने बतलाया था कि एक गुरू तब ही गिर सकता है जब उसे दीक्षा देने की आज्ञा नही मिली हो ः

'अगर किसी गुरू जे आज्ञा न मिली हो और स्वतः ही गुरू बन गया हो तो वह धन और अनुयायियों के लाभ में आ सकता है।'
(भक्तिरसामृत-सिंधु,पृष्ठ ११६)

अगर कोई गुरू गिर जाता है तो असल में यह प्रमाण है कि अपने गुरू द्वारा उसे आज्ञा नही मिली थी। अगर एक भी इस्कॉनर गुरू पथभ्रष्ट नही हुआ होता तो भी हम प्रश्न पूछ सकते थे कि दीक्षा देने की आज्ञा कहाँ से मिली।

जी•बी•सी• के साथ मुश्किल यह है कि इन स्पष्ट कथनों को वे स्वीकार नही कर सकते क्योंकि इसके कई खटटे परिणाम होंगे;क्योंकि सब इस्कॉन गुरू अपने आप को श्रील प्रभुपाद के द्वारा अधिकारिकत्व प्राप्त गुरू कहते है,उनमें से कुछ के पथभ्रष्ट हो जाने से यह प्रश्न उठने लगता है कि क्या श्रील प्रभुपाद का आदेश ठीक से समझा गया था ? अगर उन्हें सही में आज्ञा मिली थी तो वे कभी पथभ्रष्ट नही हो सकते थे। बल्कि वे महाभागवत होते।

'गुरू हर समय मुक्त आत्मा होते है।'
(श्रील प्रभुपाद का पत्र तमाल कृष्ण गोस्वामी को,२१/६/७0)

२५."जैसे ही श्रील प्रभुपाद के शिष्य आध्यात्मिक सिद्धि पा लेंगे,ऋत्विक प्रणाली बेकार हो जायेगी।"

कभी-कभी इस तरह की सोच को 'स्फॉफ्ट ऋत्विक' कहा जाता है। इसका मूल तर्क है कि ऋत्विक प्रणाली को लागू करने का एकमात्र कारण था कि श्रील प्रभुपाद को सशरीर प्रस्थान करने से पहले अपने शिष्यों में कोई भी शुद्ध भक्त नही मिला था।

यह मनगढत तर्क है क्योंकि श्रील प्रभुपाद ने ऐसा कभी नही कहा। इसका कोई प्रमाण नही है कि कोई योग्य भक्त नही मिलने के कारण ऋत्विक प्रणाली लागू की गई थी। असल में ऋत्विक प्रणाली श्रीकृष्ण की निपुण योजना है। इस प्रकार का तर्क देकर भविष्य में कोई भी प्रभावशाली महत्त्वकांक्षी भक्त,भक्ति के लक्षणों का ढोंग कर, ऋत्विक प्रणाली को रोक सकता था।

अगर इस्कॉन में कोई शुद्ध भक्त हो भी तो उन्हें भी ऋत्विक प्रणाली का अनुगमन करना चाहिए। असली योग्य भक्त तो श्रील प्रभुपाद के आदेशों का पालन करके प्रसन्न होगा।

इस भ्रम का एक कारण है श्रील भक्तिसिद्धांत सरस्वती ठाकुर के गौडीय मठ को छोडे हुए निर्देश। श्रील प्रभुपाद ने हमें बतलाया था कि उनके गुरू-महाराज का आदेश था कि एक जी.बी.सी. बनाओ और थोडे समय उपरान्त उनमें से एक स्वतः तेजस्वी आचार्य प्रकट होगा। जैसा हमें मालूम है,गौडीय मठ ने कभी इस निर्देश का पालन नही किया और इसका परिणाम हम देख सकते है। कुछ भक्त

सोचते है कि हमें भी एक स्वतः तेजस्वी आचार्य की खोज करनी चाहिये। और जब तक यह आचार्य प्रकट नही होता तब तक ऋत्विक प्रणाली कार्य कर सकती है।

इसमें मुश्किल यह है कि श्रील भक्तिसिद्धांत सरस्वती द्वारा छोडे हुए निर्देश और श्रील प्रभुपाद द्वारा छोडे गये निर्देशों में फर्क है। श्रील प्रभुपाद ने कहा था कि संस्था के संचालन के लिए एक जी.बी.सी. का गठन करना चाहिए, पर उन्होंने यह कभी नही कहा कि एक स्वतः तेजस्वी आचार्य प्रकट होगा। उसकी जगह उन्होंने एक ऋत्विक प्रणाली कायम की है जो 'इस समय से' लागू है। श्रील प्रभुपाद के शिष्य होकर हम उनको लाँघकर श्रील भक्तिसिद्धांत के निर्देशों का पालन करना शुरू नही कर सकते।

अगर श्रील प्रभुपाद को कृष्ण ने यह निर्देश दिया होता कि इस संस्था का नया आचार्य आने वाला है, तो श्रील प्रभुपाद ने ऐसा कुछ अंतिम आदेश में लिखा होता। इसकी बजाय उन्होंने कहा कि उनकी किताबें ही विस्तृत होगी और यह कि उनकी किताबे दस हजार वर्ष के लिए कानून की किताबे होगी। भविष्य के आचार्य क्या करेंगे ? श्रील प्रभुपाद ने एक ऐसा आंदोलन बनाया है जो समस्त पिछले आचार्यो की इच्छाओं की पूर्ति करता है।

इस्कॉन में नये स्वतः तेजस्वी आचार्य कैसे उभरेंगे अगर दीक्षा देना केवल श्रील प्रभुपाद का अधिकार है ?

कइयों ने तर्क किया है कि आचार्य का अधिकार होता है कि स्थिति अनुसार प्रणाली बदल दी जाये। अतः नये आचार्य इस्कॉन की ऋत्विक प्रणाली बदल सकते है। परन्तु क्या एक प्रमाणिक आचार्य संस्थापकाचार्य के

स्पष्ट निर्देशों के विरूद्ध जायेंगे। ऐसा करने से संस्थापकाचार्य के अधिपत्य पर गहरी चोट लगती है। इससे भ्रम और शंका का वातावरण छा जायेगा,क्योंकि शिष्यों को चुनना पड़ेगा कि किसके निर्देश का पालन करे।

अन्तिम आदेश को पढ़ने से सारी शंकाएँ मिट जाती है। कही भी 'सॉफ्ट ऋत्विक' नही बतलाया गया है। पत्र सिर्फ कहता है 'इस समय स'। अतः यह कहना कि यह प्रणाली नए आचार्य के उभरने से खत्म हो जायेगी अपनी मनोधारणा को एक स्पष्ट निर्देश के ऊपर थोपना है। यह पत्र सिर्फ यही कहता है कि ः

'जब तक संस्था रहेगी तब तक श्रील प्रभुपाद इस्कॉन के एकमात्र दीक्षा गुरू होंगे।'

यह धारणा श्रील प्रभुपाद की सोच से मेल खाती है जिसके अनुसार उन्होंने अपनी आंदोलन की सफलता के लिए खुद ही कदम उठा रखे थे। (कृपाया संबंधित आपत्ति ८ देखे ः 'क्या तुम कह रहे हो कि श्रील प्रभुपाद ने कोई शुद्ध भक्त नही बनाया ?')

कभी-कभी यह भी तर्क दिया जाता है कि ६ जुलाई का पत्र प्राथमिक रूप से ग्यारह ऋत्विक ही मनोनीत करता है। अतः उनके मरने या पथभ्रष्ट रूक जायेगी।

यह बहुत हल्का तर्क है। ६ जुलाई का पत्र यह नही कहता कि श्रील प्रभुपाद ही ऋत्विक को चुन सकते है या और ऋत्विक जोड़े नही जा सकते। श्रील प्रभुपाद ने इस्कॉन के प्रबंधन के लिए और भी कई प्रणालियाँ स्थापित की थी जिनके सदस्य बढ़ाये जा सकता है,उदाहरणतया जी•बी•सी•। यह न्याय विरूद्ध तर्क है कि प्रबंधन की प्रणाली को अलग करके दूसरी प्रणालियों से भिन्न बरताव किया जाये। खुद श्रील प्रभुपाद ने कभी यह नही बतलाया था कि ऋत्विक प्रणाली को चलाने का तरिका दूसरी प्रणालियों से भिन्न होगा।

तो भी यह तर्क प्रसिद्ध हो गया है,इसलिए हम इसके विरोध में निम्नलिखित तर्क प्रस्तुत करेंगे।

(क) टोपानागा केनयल में गवाही देते वक्त तमाल कृष्ण गोस्वामी ने श्रील प्रभुपाद से अपने पूछे प्रश्न के बारे में बतलाया था –

तमाल कृष्ण ः 'श्रील प्रभुपाद यह बस हुआ या आप किसी ओर को जोडना चाहते है ?'

श्रील प्रभुपाद ः "जैसी जरूरत हो,वैसे दूसरों को जोड सकते हो।'
(पिरामिड हाऊस गवाही,३/१२/८०)

निश्चित रूप से अगर किन्हिं ऋत्विक का देहान्त हो गया हो या पथ-भ्रष्ट हो गये हो तो नये ऋत्विक को जोडने की जरूरत पड़ेगी।

(ख) ६ जुलाई के पत्र के अनुसार ऋत्विक की परिभाषा है ः 'आचार्य के प्रतिनिधि'। यह जी•बी•सी• का अधिकार है कि वे किसी को भी चाहे वह संन्यासी हो, टेंपल प्रेसिडेंट हो या जी•बी•सी• सदस्य ही हो,श्रील प्रभुपाद के

प्रतिनिधि के रूप में चुन सकते है या हटा सकते है। वर्तमान में वे दीक्षा गुरूओं को चुन रहे है जो साक्षात् भगवान के प्रतिनिधि होते है। अतः श्रील प्रभुपाद के कुछ प्रतिनिधियों को चुनना जिन्हें केवल नाम देना है, ज्यादा मुश्किल नही होना चाहिए।

(ग) ६ जुलाई का पत्र यह प्रदर्शित करता है कि श्रील प्रभुपाद की इच्छा थी कि 'इस समय से' ऋत्विक प्रणाली लागू हो जाये। उन्होंने जी.बी.सी. को प्रधान प्रबन्धन अधिकारी बनाया था जिससे जी.बी.सी. उनके द्वारा स्थापित समस्त प्रणालियों को व्यवस्थित कर सके। भविष्य में दीक्षा देने के लिए उन्होंने ऋत्विक प्रणाली की स्थापना की थी।यहँ
कर्तव्य है कि इस प्रणाली को व्यवस्थित करे।इसके लिये अगर उन्हें किसी को निकालना या नियुक्त करना पडे तो यह उनका कर्तव्य है। उसी प्रकार जिस प्रकार वे दूसरी प्रणालियों को व्यवस्थित करते है।

(घ) जुलाई ६,११ एवं २१ के पत्र में 'दस फार' (अब तक), सो फार (अब तक), 'इनिशिअल लिस्त' (प्रथम सुची) इत्यादी का उपयोग यह दर्शाता है कि इस सूची में परिवर्तन किया जा सकता है। परिवर्तन करने के लिए कुछ प्रकिया जरूर बनाई गई होगी, जिसे अब तक लागू नही किया गया है।

(ङ) किसी भी निर्देश को समझने के लिए उसका उद्देश समझना अनिवार्य है। इस पत्र में निम्नलिखित कथन आते है – "कुछ वरिष्ठ भक्तों को 'ऋत्विक आचार्य के प्रतिनिधि का कार्य दीक्षा देने के उद्देश से....'एवं श्रील प्रभुपाद ने अब तक ग्यारह नाम दिये है।" एक आज्ञाकारी शिष्य का कर्तव्य है कि इस प्रणाली का उद्देश समझ कर कार्य करे। इस आदेश का निश्चित रूप से यह उद्देश नही था

कि केवल कुछ चुने हुए वरिष्ठ शिष्य ही आदिकाल तक दीक्षा देंगे। समय के अनुसार जब सब देह त्यागेंगे तो ऋत्विक प्रणाली खत्म हो जानी चाहिए क्योंकि पत्र का प्राथमिक उद्देश दीक्षा देना नही अपितु कुछ चुने हुए भक्तों को ऋत्विक नियुक्त करना था। एक परिपक्व नजर से देखने से साफ जाहिर हो जाता है कि इस पत्र का उद्देश है भविष्य में दिक्षा देने के लिए एक व्यवहारिक प्रणाली

लागू करना। अतः यह प्रणाली तब तक चलनी चाहिए जब तक दीक्षा देने की आवश्यकता हो। अतः आवश्यकतानुसार दूसरे वरिष्ठ भक्तों को 'आचार्य का प्रतिनिधि' नियुक्त करने से इस निर्दश के उद्देश की पूर्ति होगी।

(च) श्रील प्रभुपद की वसीयात में साफ लिखा हुआ है कि भारत की स्थायी भूसंपत्तियों के निदेशक उनके दीक्षित शिष्य में से ही होंगे। इस तथ्य को ६ जुलाई के पत्र मिलाने से साफ जाहिर हो जाता है कि श्रील प्रभुपाद चाहते थे कि ऋत्विक प्रणाली चलती रहे। जी.बी.सी. का कार्य इस प्रणाली का निर्देशन करना था।

श्रील प्रभुपाद जब चाहें तब ६ जुलाई के निर्देश को भंग कर सकते है। परन्तु जैसा पूर्व में बतलाया गया था, भंग करने का निदेश श्रील प्रभुपाद के इस हस्ताक्षर युक्त पत्र के समान होना चाहिए। वैसे श्रीकृष्ण और उनके शुद्ध भक्त के लिये कुछ संभव होता है।

न्यूसडे पत्रकार ः वर्तमान में आप नायक एवं गुरू है। आपकी जगह कौन लेगा ?

श्रील प्रभुपाद ः वह कृष्ण आदेश देंगे, मेरी जगह कौन लेगा।
(श्रील प्रभुपाद साक्षात्कार,१४/७/७६.न्यूयॉर्क)

तो भी,हम अपने आचार्य के उन निर्देशों का पालन करना चाहेंगे जो हमे वास्तविकता मे मिले थे,न कि भविष्य में आने वाले आदेशों की कल्पना करना या खुद अपने ही बना लेना।

२६."ऋत्विक प्रणाली के समर्थक गुरू की शरण में नही जाना चाहते।"

कई भक्तों की यह धारणा है कि शरण में जाने के लिए गुरू को सशरीर उपस्थित होना होता है। उपर्युक्त आपत्ति ऐसी ही गलत धारणा पर आधारित है। अगर यह धारणा उचित होती तो वर्तमान में श्रील प्रभुपाद के मूल शिष्य उनकी शरण में नही जा रहे होते। गुरू की शरण में जाने का अर्थ होता है कि उनके आदेशों का पालन करना। यह प्रकिया उनके सशरीर उपस्थित होने पर निर्भर नहै करती। इस्कॉन का उद्देश है भविष्य में आने वाले अनगिनत संभावित भक्तों को मार्गदर्शन और शिक्षा देना।यह प्रकिया अनगिनत शिक्षा संबंधों द्वारा जारी रह सकती है। वर्तमान जी•बी•सी• श्रील प्रभुपाद के आदेश का पालन करके दूसरों के लिये एक अच्छी मिसाल कायम कर सकती है।तब ढीठ ऋत्विक समर्थक भी उनकी देखा-देखी नम्र हो जायेंगे और गुरू की शरण लेने और सेवा करने के लिए प्रोत्साहित होंगे।

अगर मान भी ले कि समस्त ऋत्विक समर्थक किसी गुरू की शरण में जाने के लिए आनाकानी कर रहे है तो भी ६ जुलाई का आदेश निरस्त नही हो जाता। जी•बी•सी• को तो चाहिये कि श्रील प्रभुपाद के इतने महत्त्वपूर्ण निर्देश का पालन करके अच्छि मिसाल स्थापित करना। और किसी कारण से नही तो इसलिए कि ऋत्विक समर्थकों को सबक मिलेगा।

२७."अगर कोई दीक्षा गुरू नही होगा तो भक्तों का मार्गदर्शन कौन करेगा और उनको सेवा कौन देगा ?"

अब भी दीक्षा गुरू रहेंगे श्रील प्रभुपाद। मार्गदर्शन और सेवा अब भी उसी प्रकार मिलेगी जिस प्रकार श्रील प्रभुपाद की सशरीर उपस्थिति में मिलती थी यानी कि उनकी पुस्तकें पढ़कर एवं शिक्षा गुरू संबंधो द्वारा। १६७७ के पहले अगर कोई मंदिर में रहने आता था तो उसे भक्त लीडर,संकीर्तन लीडर,संन्यासी,रसोइये,पुजारी,टेंपल प्रेसिडेंट इत्यादि द्वारा मार्गदर्शन मिलता था। श्रील प्रभुपाद से निजी मार्गदर्शन मिलना तो बहुत दुर्लभ होता था। बल्कि वे इस तरह का मार्गदर्शन देने से अलग होना चाहते थे जिससे वे अपनी पुस्तकें लिख सके। हम निवेदन करते है कि अब भी वैसा ही होना चाहिए जैसा श्रील प्रभुपाद के समय हो रहा था।

२८."श्रील प्रभुपाद तीन बार निर्देश देते है कि एक शारीरिक गुरू की आवश्यकता अनिवार्य है। परन्तु आपका संपूर्ण तर्क इस तथ्य पर निर्भर है कि शारीरिक गुरू की आवश्यकता नही होती।"

'इसलिए,जैसे ही हमारा कृष्ण के प्रति थोड़ा रूझान होने लगता है,वैसे ही कृष्ण हमारे हृदय से हमे अनुकूल उपदेश देने लगते है,जिससे हम धीरे-धीरे प्रगति कर सकें, धीरे-धीरे।कृष्ण प्रथम गुरू है,और जब हमें ज्यादा रूचि होने लगे तो हमे एक शारीरिक गुरू की शरण लेनी चाहिए।'

(श्रील प्रभुपाद प्रवचन,१४/८/६६,न्यूयॉर्क)

'क्योंकि कृष्ण सबके हृदय में स्थित है। असल में, वो ही गुरू है, चैत्य-गुरू। तो हमारी सहायता के लिये, वे बाहर निकलकर एक शारीरिक रूप में आते है।

(श्रील प्रभुपाद श्रीमद-भागवतम् प्रवचन,२८/५/७४,रोम)

'अतः भगवान को चैत्य गुरू कहा जाता है,हृदय में विराजमान गुरू। और शारीरिक गुरू भगवान की कृपा है.... भगवान तुम्हारी आन्तरिक एवं बाहय सहायता करेंगे, गुरू के शारीरिक रूप में बाहर से, और हृदय में बैठे गुरू द्वारा आन्तरिक रूप से।

(श्रील प्रभुपाद वार्तालाप,२३/५/७४)

श्रील प्रबुपाद ने शारीरिक गुरू का उपयोग यह समझाने के लिये किया कि बद्ध स्थिति में हम केवल चैत्य गुरू या परमात्मा के मार्गदर्शन पर नही निर्भर रह सकते। यह आवश्यक है कि परमात्मा के बाहय रूप की हम शरण लें। उन्हें दीक्षा गुरू कहते है। इस तरह के गुरू आध्यात्मिक जगत के निवासी और श्रीकृष्ण के अन्तरंग सहयोगी होते है। वे बद्ध दलित आत्माओं के उत्थान के लिए कभी-कभी सशरीर प्रकट होते है। वे कई बार आध्यात्मिक पुस्तके लिखते है जो शारीरिक आँखो द्वारा पढी जा सकती है। वे प्रवचन देते है जो शारीरिक कानों द्वारा सुने जा सकते है और भौतिक टेप में रिकॉर्ड किये जा सकते है। वे अपनी शारीरिक मूर्ति छोडते है और हो

सकता है कि वे एक शारीरिक जी.बी.सी. को भी छोडे जो उनकी सशरीर अनुपस्थिति में संस्था का प्रबंधन देखे। परन्तु श्रील प्रभुपाद ने कभी भी ऐसा नही बतलाया कि गुरू का कार्य करने के लिए शारीरिक गुरू को सशरीर उपस्थित भी रहना आवश्यक है।

जैसा हमने पहले इंगित किया था, अगर ऐसा होता तो वर्तमान में कोई भी उनका शिष्य नही कहलाता। अगर दिव्य ज्ञान की प्राप्ति के लिए सशरीर गुरू की वर्तमान में उपस्थिति अनिवार्य होती तो श्रील प्रभुपाद के समस्त शिष्यों को किसी गुरू द्वारा पुनः दीक्षा लेनी चाहिए।

इसके अलावा कई हजार शिष्य ऐसे भी थे जो श्रील प्रभुपाद के शरीर के निकट आये बगैर भी दीक्षित हुए थे। तो भी सब यह स्वीकारते है कि इन शिष्यों ने गुरू का संग लिया,प्रश्न पूछे,शरण ली,सेवा की और दीक्षा ली। उपर्युक्त तीनों कथनों का प्रमाण देकर कोई इन शिष्यों की दीक्षा को नही नकारता।

२६." क्या दीक्षा गुरू बद्ध आत्मा हो सकते है ?"

जैसा हम पहले बतला चुके है, श्रील प्रभुपाद के सम्स्त उपदेशों मे सिर्फ एक जगह पर दीक्षा गुरू की योग्यता बतलायी गयी है। (चैतन्य चरितामृत मध्य,२४.३३०) चैतन्य चरितामृत का यह भाग केवल दीक्षा संबंधित ही है। यह कथन स्पष्ट रूप से स्थापित करता है कि दीक्षा गुरू महाभागवत ही होना चाहिए। यहाँ महत्त्वपूर्ण तथ्य यह है कि श्रील प्रभुपाद 'मस्ट' (जरूरी), 'मस्ट' (जरूरी) एवं 'ओनली' (केवल) शब्द का उपयोग करते है।

इससे ज्यादा और जोर नही दिया जा सकता। ऐसा कही कथन नही है कि दीक्षा गुरू एक बद्ध आत्मा हो सकते है। यह आश्चर्यजनक नही है क्योंकि श्रील प्रभुपाद को गुरू तत्त्व की सटीक जानकारी है।कुछ ऐसे कथन जरूर आते है जो कभी-कभी यह आभास कराते है कि गुरू एक बद्ध आत्मा हो सकता है। ये दो श्रेणियापं में आते है ः

(क) शिक्षा गुरू की योग्यता का वर्णन करने वाले ः

ये कथन ज्यादातर यह बतलाते है कि गुरू बनन बहुत सरल है;कि कैसे बच्चे भी बन सकते है। ये ज्यादातर श्री चैतन्य के 'अमार आज्ञाय' श्लोक से संबंधित होते है।

(ख) गुरू बनने की विधी करने वाले ः

इन कथनों में ज्यादातर 'बनना' शब्द आता है। ये बताते है कि नियमों का दृढ़तापूर्वक पालन करने से आध्यात्मिक प्रगति होती है व गुरू बनने के लिए योग्यता मिल सकती है। परन्तु यह कथन कभी नही कहते कि अंत में गुरू की योग्यता महाभागवत से कम भी हो सकती है। यह केवल विधि का वर्णन करते है।

हमने यह उत्तर संक्षिप्त रखा है क्योंकि इसके ऊपर एक दूसरा ही लेख लिखा जा सकता है। यहाँ यह महत्त्वपूर्ण नही है कि गुरू की योग्यता क्या होनी चाहिए। महत्त्वपूर्ण यह समझना है कि श्रील प्रभुपाद ने क्या आदेश दिये थे। ऋत्विक प्रणाली केवल इसलिए लागू नही करनी चाहिए क्योंकि दीक्षा गुरू महाभागवत होना चाहिए। परन्तु इसलिए कि श्रील प्रभुपाद ने यह आदेश दिया है। हमें केवल यह देखना है कि श्रील प्रभुपाद ने क्या आदेश दिया व उस आदेश का पालन करना चाहिए। यह लेख श्रील प्रभुपाद के अंतिम आदेशों को प्रमाण मान रहा है। वैसे इस विषय को हमने पृष्ठ १६ एवं ५८ में भी छुआ है।

३०." श्रील प्रभुपाद ने जी•बी•सी• को संस्था का निर्देशक बनाया है और जी•बी•सी• ने संस्था में इसी तरह से दीक्षा देने का फैसला किया है।"

'श्रील प्रभुपाद ने प्रबंधन प्रणालियों को बदलने का अधिकार जी•बी•सी• को कभी नही दिया था ः

'प्रस्तावित – श्री श्रीमद ए•सी• भक्तिवेदांत स्वामी प्रभुपाद अन्तर्राष्ट्रीय कृष्ण भावनामृत संघ के संस्थापकाचार्य एवं प्रमुख है। उन्होंने संघ के प्रबंधन के लिए अपने प्रतिनिधि के रूप में जी•बी•सी• की स्थापना की है। उनके दिव्य उपदेशों को जी•बी•सी• अपना प्राण धन मानती है और स्वीकारती है कि उनकी कृपा पर ही वे संपूर्णतया निर्भर है। जी•बी•सी• का एकमाज उद्देश है –श्री श्रीमद् द्वारा प्रेमपूर्वक दिये हुए निर्देशों का पालन करना, उनके उपदेशों की रक्षा करना और उनको शुद्ध रूप में संपूर्ण दुनिया में फैलाना। निर्देशों का पालन करना, उनके उपदेशों की रक्षा करना और उनको शुद्ध रूप में संपूर्ण दुनिया में फैलाना।

(जी•बी•सी• की परिभाषा,प्रस्तावित, जी•बी•सी• मिनटस्,१६७५)

'प्रबंधन की प्रणली इसी तरह चलेगी और इसमें परिवर्तन करने की कोई आवश्यकता नही है।'

(श्रील प्रभुपाद की वसीयत,४/६/७७)

इस्कॉन में दीक्षा का प्रबंध करने के लिए उन्होंने ऋत्विक प्रणाली चुनी थी। जी•बी•सी• का एकमाज कार्य है इस प्रणाली को ठीक से चलना न कि उसे बंद कर देना और उसकी जगह दूसरी प्रणाली एवं नियम लागू करना-

'अब तक जो मैने तुम्हें दिये है,उनको नियमितता से पालन करने की कोशिश करते रहो। कोई नया आविष्कार मत करना अथवा सब बर्बाद हो जायेगा।

(श्रील प्रभुपाद का पज पुष्ट कृष्ण एवं बली मर्दन को,१८/६/७२)

'अब मैने हमारी कृष्ण भावनामृत संस्था के नियमों के निरिक्षण और पालन के लिये जी.बी.सी. को अधिकार दिया है। अतः जी.बी.सी. को बहुत सतर्क रहना होगा। समस्त निर्देश मैने पहले ही अपनी पुस्तकों मे दे लिये है।'

(श्रील प्रभुपाद को पज सत्स्वरूप को,१३/६/७0)

'मूल रूप से मैने १२ जी.बी.सी. सदस्य नियुक्त किये है और उनको १२ क्षेज दिये है जिनका वे प्रबंधन कर सके। परन्तु सामूहिक सहमति द्वारा तुमने सब कुछ बदल दिया,तो यह क्या है, मुझे नही मालूम।'

(श्रील प्रभुपाद का पज रूपानगा को,११/४/७२)

'जब मै यहाँ नही रहूँगा तब क्या होगा ? क्या सब कुछ जी.बी.सी. द्वारा नष्ट कर दिया जायेगा ?'

(श्रील प्रभुपाद का पज हंसदूत को,११/४/७२)

श्रील प्रभुपाद द्वारा दिये गये निर्देशो के अधीन ही जी.बी.सी. को कार्य करना चाहिए। हमे यह देख कर दुःख होता है कि श्रील प्रभुपाद ले प्रतिनिधि संस्था अपना कार्य नही कर पा रही; क्योंकि श्रील प्रभुपाद को आशा थी कि समस्त भक्तगण जी.बी.सी. के निर्देशन में ही सहयोग से कार्य करेंगे।

हम सबको श्रील प्रभुपाद के अंतिम आदेश के संरक्षण में सहयोग से कार्य करना चाहिए।

निष्कर्ष

हमे आशा है कि इस लेख को पढ़कर पाठकों को इस्कॉन में दीक्षा संबंधी श्रील प्रभुपाद का अन्तिम आदेश और गहराई से समझ आया होगा। इस प्रकिया में अगर हमने किसी को रोष पहुँचाया हो तो हमे क्षमा कर दीजिएगा। यह हमारा आशय नही था।

इस लेख के शुरू में हमने जोर देकर कहा था कि अगर दीक्षा संबंधी आदेशों का उचित ढ़ंग से पालन नही हो रहा है तो इसका कारण किसी की जानबूझकर गलती नही ही। अतः किसी को दोष देने में व्यर्थ ही समय नही गँवाना चाहिए। कोई भी आचार्य जब प्रस्थान करते है तो उस समय कुछ भ्रम फैलता ही है। उन्नीस साल का भ्रम इस आंदोलन के ६,५00 वर्ष के इतिहास का एक बहुत छोटा अंश है। अब समय आ चुका है कि अपनी गलती समझकर,उनसे सीखकर और इस समय को अपने पीछे छोड़कर इस्कॉन का फिर से सुदृढ एवं मजबूत बनाया जाये।

हो सकता है कि ऋत्विक प्रणाली को धिरे-धिरे लागू करना आवश्यक पड़े। ऐसा भी हो सकता है कि शुरू के कुछ समय के लिये इस प्रणाली को म.आ.स.सि. प्रणाली के समानांतर चलाया जाये जिससे ज्यादा तनाव एवं अशांति न फैले। इन सब विषयों को बहुत गंभिरता और सहजता से सोचना पड़ेगा। जब तक सबका लक्ष्य श्रील प्रभुपाद के अंतिम आदेश को लागू करना है,तब तक दूसरों की भावना को ठोस पहुँचाने की आवश्यकता नही है। समस्त भक्तों को प्यार और समझदारी से नई प्रणाली से सरोकार होने का समय देना चाहिए। गुरू और दीक्षा संबंधित श्रील प्रभुपाद के उपदेशों को अगर कमबद्ध तरीके से समस्त भक्तगण को सिखाया जाये तो बहुत जल्द और बिना ज्यादा समस्या के ठिक किया जा सकता है।

इस विषय ने कई लोगों को शत्रु बना दिया है। ऋत्विक प्रणाली की सत्यता एवं व्यावहारिकता पर जब सहमति हो जाए तब दोनों पक्षों को ठंडा होने के लिए थोड़ा वक्त जरूर लगेगा। थोडा समय अवकाश लेकर दोनों पक्षों को घुल-मिलकर एक दूसरे को फिर से जानने,समझने और मित्रता संबंध स्थापित करने पडेंगे। अभाग्य से इस समय भी बहुत उत्तेजना है,ज्यादा ऋत्विक समर्थकों की तरफ से। हम अपने लिए तो कह सकते है कि श्रील प्रभुपाद के सशरीर प्रस्थान उपरान्त अगर हम खुद वरिष्ठ भक्त होते तो सम्भवतया हम भी वही गलती करते जो अभी तक हुई है। हो सकता है ज्यादा गलतियाँ करते।

यह हमारा अनुभव है कि इस्कॉन के वरिष्ठ भक्तों ने ऋत्विक विषय का उचित परीक्षण नही किया है। अभाग्य से ज्यादातर ऋत्विक लेख निजी आक्रमण और उत्तेजक कथनों से भरे होते है,जिससे हर कोई प्रणाली को गलत मानने लगता है। सबसे उत्तम व्यवस्था यही होगी कि स्वयं जी.बी.सी. इस विषय को सुलझा ले।

हम मानते है कि हम भी मनुष्य के चार विकारों से भरे है। अतः हम तरह की टिप्पणी व आलोचना स्वीकारने को तैयार है। हमारी दिली मनोकामना है कि इस लेख से श्री श्रीमद् प्रभुपाद के इस्कॉन मे उनके प्रस्थान उपरान्त फैले भ्रम और विवादास्पद स्थिति को खत्म करने में सहायता मिले। अतः हमारे अपराधों को क्षमा कीजिएगा।

श्रील प्रभुपाद की जय हो।
खेवल श्रील प्रभुपाद ही हमके एक कर सकते है।

ऋत्विक क्या है ?

सामान्यतः ऋत्विक को निम्नलिखित दो में से एक गलत तरीके से समझा जाता है ः

(क) एक तुच्छा पुजारी,केवल संस्कार करने वाला, जो एक तंज की तरह आध्यात्मिक नाम देता रहता है।

(ख) दीक्षा गुरू के उत्तराधिकारी जो पूर्ण योग्यता प्राप्त करने पर ऋत्विक की तरह कार्य करना छोडकर खुद दीक्षा देने लगेंगे।

उपरोक्त परिभाषाओं को श्रील प्रभुपाद द्वारा दी हुई परिभाषा से मिलाने से ः

परिभाषा (क)- ऋत्विक एक बेहद उत्तरदायित्त्व का कार्य है। यह इससे स्पष्ट होता है कि श्रील प्रभुपद ने केवल ऐसे ११ भक्तों को ही चुना जो पहले से उनके आंदोलन में कई महत्त्वपूर्ण उत्तरदायित्त्व ले चुके थे। इस प्रकार, ज्यादातर तो इनका कार्य रोजमर्रा का रहेगा, तो भी ये ही सबसे पहले दीक्षा प्रप्ति करने के कठिन स्तर तक नही पहुँचने वालों को अलग कर सकेंगे। इनका कार्य कुछ-कुछ एक सिपाही जैसा होगा जो गलतियाँ पकड सके। श्रील प्रभुपाद ने कई बार यह इच्छा दर्शाई थी कि दीक्षा तभी मिलनी चाहिए जब एक भक्त, कम से कम छः माह तक तो, १६ माला जाप कर रहा हो, उनकी पुस्तके पढ रहा हो, इत्यादी।

अगर कोई भक्त इन नियमों से किसी का पालन नही कर पा रहे हो तो टेंपल प्रेसिडेंट द्वारा ऋत्विक को कहने पर भक्त को दीक्षा देने की मनाही हो सकी है। इस तरह से ऋत्विक का कार्य है कि श्रील प्रभुपाद के इस धरती से प्रस्थान करने के उपरान्त इस्कॉन का आध्यात्मिक स्तर वैसा ही रहे।

वैसे खुद ऋत्विक को भी इन नियमों का दृढतापूर्वक पालन करना होगा और उस तरह वह एक योग्य शिक्षा गुरू भी होगा। परन्तु यह जरूरी नही कि ऋत्विक का दीक्षित भक्त के साथ शिक्षा का संबंध होगा ही। ऋत्विक उस भक्त का शिक्षा गुरू हो सकता है या नही भी। अगर कोई ऋत्विक शिक्षा गुरू भी बनता है तो यह कार्य उसके ऋत्विक कार्य से बिल्कुल अलग होगा। श्रील प्रभुपाद की सशरीर मौजूदगी में भी नये दीक्षित शिष्य अपने ऋत्विक से कई बार नही मिलते थे। ऋत्विक उनका नया आध्यात्मिक नाम पत्र द्वारा भेज देते थे और टेंपल प्रेसिडेंट दीक्षा यज्ञ करते थे। मगर इसमें कोई हर्ज नही कि ऋत्विक कूद भी दीक्षा यज्ञ सम्पादित करे, अगर टेंपल प्रेसिडेंट सहमत हो तो।

परिभाषा (ख)- जैसा हम पहले कई बार कह चुके है, दीक्षा गुरू बनकर शिष्य अपनाने के लिए उस भक्त को एक आदेश प्राप्त महाभागवत होना जरूरी है। श्रील प्रभुपाद अपना शरीर छोडने से पहले इस्कॉन में ऐसी प्रणाली लागू करके गए जिससे किसी और के द्वारा दीक्षा देने अवैध हो जाता है। इस प्रकार श्रील प्रभुपाद के आलावा आगे चलकर किसी के पास दीक्षा देने का अधिकार नही है। अतः अगर कोई ऋत्विक या कोई और महाभागवत बन भी जाता है तो भी वह दीक्षा गुरू बन सकता। अगर उसे इस्कॉन में रहना है तो उसे इसी

ऋत्विक प्रणाली का पालन करना होगा। हमें ६ जुलाई १९७७ को आदेश दिया गया था जिसमे उन ऋत्विक के आगे चलकर दीक्षा गुरू बनने की बात नही लिखी गई थी।

वे क्या करते है एवं उनका चयन किस प्रकार होता है ः

क. ऋत्विक,श्रील प्रभुपाद की ओर से,शिष्य अपनाते है,उन्हें नया आध्यात्मिक नाम देते है,उनकी माला पर जप करते है एवं दूसरी दीक्षा में गायत्री मंत्र देते है। यह कार्य उन्हें ६ जुलाई के पत्र के द्वारा श्रील प्रभुपाद ने सौंपा था। (कृपया परिशिष्ट देखे।)
यह ऋत्विक टेंपल प्रेसिडेंट द्वारा अनुमोदन के लिए भेजी गई सभी सिफारिशों का परिक्षण करते थे कि क्या यह शिष्य उपयुक्त नियमों का पालन कर रहा है।

ख. ऋत्विक एक पुजारी भी है अतः वह एक योग्य ब्राह्मण होना चाहिए। ऋत्विक का चयन करते वक्त श्रील प्रभुपाद ने पहले 'वरिष्ठ संन्यासीयों' को नियुक्त करने को कहा था परन्तु उन्होंने अन्त में कुछ ऐसे भक्त भी नियुक्त किए जो संन्यासी नही थे। (कृपया परिशिष्ट में ७ जुलाई का वार्तालाप देखे।) वस्तुतः सारे ऋत्विक चाहे संन्यासी थे या नही,वे श्रील प्रभुपाद के आन्दोलन का प्रबन्धन करने वाले वरिष्ठ भक्त थे जो ऋत्विक के कार्य के लिए योग्य थे।

ग. भविष्य में जी.बी.सी. दूसरे ऋत्विकों का चयन कर सकती है। वस्तुतः उनका चयन करने और हटाये जाने की कार्य शाली उसी तरह होगी जिस तरह वर्तमान की दीक्षा गुरू प्रणाली की है। श्रील प्रभुपाद ने जी.बी.सी. को इस तरह के अधिकार दे रखे है। वे वर्तमान में भी ऋत्विक से भी ज्यादा वरिष्ठ भक्त थे प्रबन्धकों यानी ऋत्विक संन्यासी,ट्रस्टी एवं दूसरे जी.बी.सी. इत्यादी का चयन एवं निवृत्ति कर सकते है।

अतः, सारांश में यह प्रणाली उसी तरह कार्य करेगी जिस तरह श्रील प्रभुपाद के इस धरती पर सशरीर उपस्थित होने पर चलती थी। सब भक्तों का आपसी संबंध,आचरण इत्यादी उसी तरह होगा जिस प्रकार १९७७ में श्रील प्रभुपाद की सशरीर उपस्थिति के अंतिम चार माह में थे और जिस प्रकार श्रील प्रभुपाद अपनी वसीयत में जोर देकर कहते है –

"प्रबन्धन प्रणाली उसी तरह कार्य करनी चाहिए जिस प्रकार अब चल रही है और किसी प्रकार का बदलाव लाने की जरूरत नही है।"

दीक्षा

दी

दिव्य ज्ञान

दिव्य ज्ञान मतलब परम पुरूषोत्तम
भगवान के मूल रूप का
ज्ञान जो (गुरू द्वारा दिये गये)
दिव्य मंत्र में विदयमान होता है
और (एक व्यक्ति का) भगवान से
संबंध का ज्ञान होता है।
(भक्ति संदर्भ २४३)

क्षा

क्षप्यती

क्षप्यती मतलब नाश करना
(श्रीमद्-भागवतम्,४.२६.६१)
यही अर्थ इस श्लोक के शब्द से शब्द
अनुवाद में दिया गया है।
यह पाप कर्मों के नाश करने से संबधित है
जो दीक्षा की परिभाषा में दर्शाया गया है।

दृढताा

परिशिष्ट

इस्कॉन
अंतर्राष्ट्रीय कृष्ण भावनामृत संघ
संस्थापक आचार्य ः श्री श्रीमद ए•सी• भक्तिवेदान्त स्वामी प्रभुपाद

६ जुलाई,१६७७

समस्त जी•बी•सी• एवं टेम्पल प्रेसिडेन्ट्स के लिए

प्रिय महाराज एवं प्रभुगण,

आपके चरणों में मेरा दण्डवत प्रमाण स्वीकारे। हाल ही में जी•बी•सी• श्री श्रीमद् के साथ वृंदावन में थे,तब श्रील प्रभुपाद ने सुचित किया था कि जल्द ही वे पहली दीक्षा (हरि नाम) और दूसरी दीक्षा (गायत्री) देने के लिए अपने वरिष्ठ शिष्यों में से कुछ को 'ऋत्विक' आचार्य के प्रतिनिधि के रूप में कार्य करने के लिए मनोनीत करेंगे अब तक श्रील प्रभुपाद ने ग्यारह शिष्यों की सूची दी है जो उपर्युक्त स्थिति में कार्य करेंगे ः

श्रीपद् कीर्तनानंद स्वामी
श्रीपद् सतस्वरूप् दास गोस्वामी
श्रीपद् जयपताका स्वामी
श्रीपद् तमाल कृष्ण गोस्वामी
श्रीपद् हृदयानन्द गोस्वामी
श्रीपद् भावानंद गोस्वामी
श्रीपद् हंसदूता स्वामी
श्रीपद् रामेश्वर स्वामी
श्रीपद् हरिकेश स्वामी
श्रीमद् भगवान दास अधिकारी
श्रीमद् जयतीर्थ दास अधिकारी

पूर्व में किसी भक्त की सिफारिश करने के लिए टेम्पल प्रेसिडेंट श्रील प्रभुपाद को पत्र लिखते थे। अब चूंकि श्रील प्रभुपाद ने इन प्रतिनिधियों को मनोनीत कर दीया है,अतः इस समय से टेम्पल प्रेसिडेंट पहली और दूसरी दीक्षा के लिए अपने सिफारिशी पत्र इन प्रतिनिधियों में से निकटतम प्रतिनिधि को भेजे। सिफारिश को परखने के पश्चात ये प्रतिनिधि उस भक्त को श्रील प्रभुपाद के शिष्य के रूप में स्वीकार कर उसे आध्यात्मिक नाम दे सकते है या दूसरी दीक्षा के लिए यज्ञोपवीत पर गायत्री जाप कर सकते है, ठीक उसी तरह जिस तरह श्रील प्रभुपाद किया करते थे। नए दीक्षित भक्त श्री श्रीमद् ए.सी. भक्तिवेदान्त स्वामी प्रभुपाद के शिष्य है और ये ग्यारह भक्त उनके प्रतिनिधि है। इन प्रतिनिधियों के पत्र द्वारा भेजे गए आध्यात्मिक नाम और यज्ञोपवीत मिलने के उपरान्त टेम्पल प्रेसिडेंट अपने मंदिर में उसी प्रकार यज्ञ कर सकते है जिस प्रकार हुआ करते थे। जो प्रतिनिधि नए दीक्षित शिष्यों को श्रील प्रभुपाद की ओर से स्वीकार करेंगे, उन्हें इन नए दीक्षित शिष्यों के नाम श्रील प्रभुपाद की 'इनशिएटेड डिसाइपल्स' (दीक्षित शिष्य) नामक पुस्तिका में सम्मिलित करने के लिए भेज देना चाहिए।

आपकी सकुशलता की कामना करते हुए,

आपका सेवक

(मूल दस्तावेज पर हस्ताक्षर अंकित)

श्रील प्रभुपाद द्वारा अनुमोदित
(मूल दस्तावेज पर श्रील प्रभुपाद के हस्ताक्षर अंकित है।)

तमाल कृष्ण गोस्वामी

सचिव – श्रील प्रभुपाद

इस्कॉन
अंतर्राष्ट्रीय कृष्ण भावनामृत संघ
संस्थापक आचार्य ः श्री श्रीमद ए•सी• भक्तिवेदान्त स्वामी प्रभुपाद

६ जुलाई,१६७७

समस्त जी•बी•सी• एवं टेम्पल प्रेसिडेन्ट्स के लिए

प्रिय कीर्तनानंद महाराज,

आपके चरणों मे मेरा दण्डवत प्रमाण स्वीकारे। श्री श्रीमद् श्रील प्रभुपाद को कुछ समय पूर्व 'ब्रजवासी स्पिरिट',भाग-४, अंक-४ की प्रति प्राप्त हुई, जिससे वे बहुत प्रफुल्लित हुए। मुखपृष्ठ, जिसमे कालाद्री को अग्नी यज्ञ करते हुए दिखाया गया है, को देखते हुए उन्होंने कहा कि 'जरा देखो तो,ये कितना अच्छा भक्त है,सब कुछ करने में इतना निपुण है।' फिर जब श्रील प्रभुपाद ने प्रथम पृष्ठ देखा तो उनकी आँखे राधा-वृन्दावनचन्द्र पर गढी रह गई और वे बोले,'वृन्दावन बिहारी कितने सुन्दर है। जहाँ वृन्दावनचन्द्र है वहाँ कोई विपत्ति नही आ सकती।' पूरी पत्रिका का पूर्ण आनन्द लेने के बाद उन्होंने कहा,'यह उनके अपने प्रेस में छापा है। यह बहुत अच्छी प्रगती है।' श्री श्रीमद् प्रभुपाद ने 'हाउ आई वास डीप्रोग्राम्ड' लेख की बहुत सराहना की। जब प्रभुपाद ने उस जवान लडके की कहानी सुनी तो उनका हृदय भावना से भर उठा और वे बोले,'यदि एक व्यक्ति भी इस लडके की तरह बदल जाए तब यह आन्दोलन सफल है। आगे बहुत आशा है। तुम सब मिलकर एकजुट हो जाओ और इस आन्दोलन को आगे बढाओ। अब मुझे विश्वास है कि यह आन्दोलन चलता रहेगा। पत्रिका को देखते हुए प्रभुपाद ने 'ईष्ठगोष्ठी' पृष्ठ पर तुम्हारी अच्छी तस्वीर भी देखी और उस पर उन्होंने एक लम्बी प्यार भरी नजर डाली। तुमने किस प्रकार इस कृष्ण भावनामृत को समझा है इस बात पर उन्होंने अपनी गहरी प्रशंसा व्यक्त की।

सभी जी•बी•सी• और टेम्पल प्रेसिडेन्टस् को एक पत्र भेजा गया है जो शीघ्र ही तुम्हें भी मिल जाएगा। यह पत्र भविष्य में लागू होने वाली दीक्षा की प्रकिया का वर्णन करता है। श्रील प्रभुपाद ने अब तक ग्यारह प्रतिनिधियों को चुना है जो उनकी ओर से नए भक्तों को दीक्षा देंगे। तुम इस पत्र के आगमन की प्रतिक्षा कर सकते हो (मूल प्रति रामेश्वर महाराज को भेजी गई है, ताकि वे उसकी अनेक प्रतियाँ बना सके।) और फिर उन सभी भक्तों को दीक्षा दी जा सकती है, जिनकी सिफारिश तुमने अपने पहले पत्र में की थी।

श्री श्रीमद् की बतीयात में स्थिरता बनी हुई है और पुस्तक वितरण के दुगुने होने के साथ तालमेल रखते हुए उन्होंने आश्चर्य जनक रूप में से अपने अनुवाद कार्य को भी दुगुना कर दिया है।

आपकी सकुशलता की कामना करते हुए,

आपका सेवक

(मूल प्रति पर हस्ताक्षर अंकित है)

तमाल कृष्ण गोस्वामी
सचिव – श्रील प्रभुपाद

श्रीपद् कीर्तनानंद स्वामी
द्वारा इस्कॉन,न्यू वृन्दावन

बी•बी•टी•
भक्तिवेदांत बुक ट्रस्ट
संस्थापक आचार्य ः श्री श्रीमद् ए•सी• भक्तिवेदान्त स्वामी प्रभुपाद

२१ जुलाई,१६७७

गुरू और गोरांगा की जय।

प्रिय जी•बी•सी• गुरूभाइयो,

आपकी चरणधूलि में मेरा दण्डवत प्रमाण स्वीकारे। श्रील प्रभुपाद की जय हो। मुझे कुछ समय पहले ही तमाल कृष्ण गोस्वामी द्वारा भेजे हुए कुछ पत्र प्राप्त हुए है, जिनमें से दो दस्तावेजों को सम्मिलित कर रहा हूँ –

१. श्रील प्रभुपाद द्वारा अपनी वसीयात की अंतिम रूप की प्रति।

२. श्रील प्रभुपाद द्वारा उनकी ओर से दीक्षा देने वाले मनोनीत शिष्यों की आरम्भिक सूची सारे केन्दों में भी भेजी जा रही है।

तमाल के पत्र से यह लगता है कि अपनी लम्बी बीमारी के बावजूद श्रील प्रभुपाद काफी उत्साहित है और पूरे जोर से अनुवाद कर रहे है। जब विभिन्न जी•बी•सी• अपने प्रचार कार्य के फल, या कोई खुशखबरी आदि उन्हें सुनाते है तो वे विशेष रूप से उत्साहित हो उठते है। तमाल कृष्ण महाराज ने बल देते हुए कहा कि हम सबको इस प्रकार के समाचार भेजते रहने चाहिए; क्योंकि श्रील प्रभुपाद प्रायः यह पूछते है,'क्या समाचार है ?' प्रभुपाद के भाव का एक ज्वलंत उदाहरण, हंसदूत स्वामी के प्रोत्साहन भरे 'सीलोन' (श्रीलंका) में प्रचार के समाचार सुनने पर उनकी प्रतिकिया को देखकर मिलता है। प्रभुपाद बोले,'मै सीलोन जाना चाहता हूँ। मै जा सकता हूँ। मै कुर्सी पर कही भी जा सकता हूँ। यह सूजन केवल मेरी त्वचा को छू रही है,आत्मा को नही।'

अन्य चीजों के आलावा तमाल ने इस जरूरत पर बल दिया है कि प्रतिमाह एक जी•बी•सी• को श्रील प्रभुपाद की व्यक्तिगत सेवा के लिए जाना चाहिए। श्रील प्रभुपाद ने जैसा हाल ही में कहा है,अब इस प्रकार का दर्शन बहुत महत्त्वपूर्ण है। सभी जी•बी•सी• सदस्य इसके लिए उत्सुक होने चाहिए; क्योंकि इससे प्रभुपाद को प्रबंधन से छुटकारा मिलेगा और सभी को व्यक्तिगत रूप से उनकी देख-देख करने का सुनहरा अवसर मिलेगा जैसे उन्हें मालिश देना एवं अन्य अमृतमय सेवाएँ। इस सेवा में श्रील प्रभुपाद का व्यक्तिगत संग पहले से भी अधिक मिल सकता है। २३ जी•बी•सी• सदस्यों को मिलाकर एक माह भी ऐसा नही होना चाहिए जो भरा ना हो।

एक अंतिम समाचार यह है कि श्रील प्रभुपाद ने उत्तरी भारत (दिल्ली सहित लेकिन वृंदावन को छोडकर) के नए जी•बी•सी• श्रीपद् भक्ति चैतन्य स्वामी को मनोनीत किया है। तमाल कृष्ण महाराज ने कहा कि उनके पंजाब में प्रशंसनीय प्रचार कार्य को प्रोत्साहन देने के लिए ऐसा किया है।

जय, आशा करता हूँ कि आप सकुशल होंगे और प्रचार में पूरी तरह से डूबे हुए होंगे, जिससे श्रील प्रभुपाद को पूर्णतया तृप्ति मिलती रहे।

अन्य दस्तावेज सम्मिलित

आपका पतित सेवक

(मूल प्रति पर हस्ताक्षर अंकित है)
रामेश्वर दास स्वामी

वार्तालाप,१६ जुलाई,१६७७,वृन्दावन

तमाल कृष्ण गोस्वामी ः उपेन्द्र और मै देख रहे थे कि यह काफी दूर.....
श्रील प्रभुपाद ः और तुम्हें वहाँ कोई बाधा नही पहुँचाएगा। अपना खुद का प्रचार क्षेत्र बनाओ एवं ऋत्विक बनते रहो और मेरे आदेश पर कार्य करते रहो। लोग वहाँ सहानुभूतिपूर्ण रह रहे है। वह जगह बहुत अच्छी है।
तमाल कृष्ण गोस्वामी ः हाँ, वह कहता है,'भगवद्-गीता की भूमिका का तमिल में अनुवाद हो चुका है और मै दूसरा अध्याय इसके उपरान्त करवा लूँगा। फिर तुरन्त वितरण के लिए एक छाटिी पुस्तिका का प्रकाशन करूँगा।

हंसदूत को तमाल कृष्ण गोस्वामी द्वारा पत्र (श्रील प्रभुपाद की ओर से)

३१ जुलाई,१६७७

प्रिय हंसदूत महाराज,

आपके चरण-कमलों मे मेरा दण्डवत प्रणाम स्वीकारे। मुझे श्री श्रीमद् श्रील प्रभुपाद द्वारा यह निर्देश दिया गया है कि तुम्हारे २५ जुलाई,१६७७ के पत्र के लिए तुम्हें धन्यवाद दूँ।

तुमने लिखा था कि तुम्हें यह समझ नही आ रहा कि श्रील प्रभुपाद ने तुम्हें अपनी कृपा का पत्र क्यों बनाया। श्रील प्रभुपाद ने तुरन्त उत्तर दिया ः 'क्योंकि तुम निष्कपट सेवक हो। तुमने अपनी सुन्दर एवं योग्य पत्नी से अपनी आसक्ति को त्याग दिया, यह बहुत बडा वरदान है। तुम एक असली प्रचारक हो इसलिए मै तुम्हें चाहता हूँ। (फिर हँसते हुए) कभी-कभी तुम हठी हो जाते हो, पर यह हर बुद्धिमान व्यक्ति के बारे में सत्य है। अब तुम्हारें पास प्रचार का अच्छा अवसर है। इसका संगठन करो और यह तुम्हारा बडा योगदान रहेगा। वहाँ तुम्हें कोई बाधा नही पहुँचायेगा। तुम प्रचार के लिए अवसर बनाओ, ऋत्विक बने रहो और मेरी ओर से कार्य करो।'

जब मैने समाचारपत्र का लेख पढकर सुनाया तो बडे जोश से सुन रहे थे। श्रील प्रभुपाद अत्यन्त प्रसन्न थे ः "यह लेख तुम्हारी प्रतिष्ठा बढाएगा। यह बहुत अच्छा लेख है इसलिए समाचारपत्र ने इसे छापने के लिए इतनी सारी जगह दी है। यह बहुत अच्छा है। इसे 'बैक टू गॉडहैड' (भगवत दर्शन) में प्रकाशित करना चाहिए। अभी 'बैक टू गॉडहैड' में एक स्तंभ है-'प्रभुपाद स्पीकस आउट'। तुम्हारें लेख का शीर्षक होगा – 'प्रभुपाद डीसाईपल स्पीकस आउट' (प्रभुपाद के शिष्य बोले)। हाँ, हम इस लेख को अवश्य प्रकाशित करेंगे। इस मूढ व्यक्ति को जनता के सामने बेवकूफ होने देना चाहिए। मैने इस लेख का बहुत आनन्द उठाया है। मै चाहता हूँ कि मेरे शिष्य भी बोले तर्क एवं कारणों के बलबूते पर 'ब्रह्मसूत्र सुनिश्चित' यही प्रचार है। मेरा आर्शिवाद तुम पर है। मेरे सभी शिष्य आगे बढे। टुमने यह चुनौति दी है। वे इसका उत्तर नही दे सकते। इस डॉ. कोवूर को डॉ.स्वरूप दामोदर के 'लाइफ कम्स फ्रॉम लाइफा' (जीवन का स्त्रोत जीवन) सम्मेलन में आमंत्रित करना चाहिए। इस वैज्ञानिक सम्मेलन से वह कुछ सीख सकता है।"

हाँ, तुम्हें इस्कॉन के 'फूड रिलीफ' (अन्नदान) की धनराशि जरूर मिलनी चाहिए। मेरा यह प्रस्ताव है कि अमरीकन पैसे इकट्ठे हो और अन्न वितरण के लिए भेज दिए जाएँ। तीन सौ लोग आ रहे है यह कोई मजाक नही। तुमने विभिन्न्न पकवानों का वर्णन भी किया है। मै खाना चाहता हूँ लेकिन खा नही सकता। इन पकवानों के नाम ही मुझे तृप्त कर रहे है। आज सुबह है मै तुम्हारे बारे में सोच रहा था और तुमने मुझे यह पत्र लिखा।

(अंतिम पंक्तियाँ अस्पष्ट)

तुम्हारा सेवक
(मूल प्रति पर हस्ताक्षर अंकित है)
तमाल कृष्ण गोस्वामी
सचिव – श्रील प्रभुपाद

वार्तालाप,१८ अक्टूबर,१६७७,वृन्दावन

श्रील प्रभुपाद ः हरे कृष्ण ! एक बंगाली सज्जन न्यूयार्क से आए है ? (एक व्यक्त न्यूयार्क से श्रील प्रभुपाद से दीक्षा लेने के लिए आया था।)

तमाल कृष्ण गोस्वामी ः हाँ। श्रील प्रभुपाद। श्री सुकमल राय चौधरी।

श्रील प्रभुपाद ः तो दीक्षा के लिए तुममें से कुछ को प्रतिनिधि बनाया है। हूँ।

तमाल ः हाँ, वास्तव में....हाँ, श्रील प्रभुपाद।

श्रील प्रभुपाद ः तो मै सोचता हूँ कि यह जयपताका कर सकता है यादि वह चाहे तो। मैने पहले ही प्रतिनिधित्व दे दिया है। उसे बता दो।

तमाल ः हाँ।

श्रील प्रभुपाद ः तो, हाँ कुछ प्रतिनिधि,जयपताका का नाम था ?

भगवान ः यह पहले से ही है।

श्रील प्रभुपाद ः उसका नाम सूची में था। तो वह मेरी ओर से मायापुर में कर सकता है, और तुम भी उसके साथ जा सकता हो। मैने यह तत्काल के लिए बंद कर दिया है। क्या यह ठीक है ?

तमाल ः क्या करना बंद कर दिया है श्रील प्रभुपाद ?

श्रील प्रभुपाद ः यह दीक्षा ! मैने इसके लिए अपने शिष्यों को नियुक्त किया है। यह स्पष्ट है या नही ?

तमाल ः यह स्पष्ट है।

श्रील प्रभुपाद ः तुम्हारे पास नामों की सूची है ?

तमाल ः हाँ,श्रील प्रभुपाद।

श्रील प्रभुपाद ः और यदि कृष्ण की कृपा से मेरी अवस्था सुधर जाती है तो मै फिर से शुरू करूँगा और यदि ऐसा ना हुआ तो मुझे पर कोई दबाव न डाले। इस अवस्था में दिक्षा देना उचित नही है।

वार्तालाप,२२ अप्रैल,१६७७,बम्बई

श्रील प्रभुपाद ः मैने उससे कहा,'तुम इतने स्वतंत्र होकर नही कर सकते। तुम अच्छा कर रहे हो, लेकिन इस तरह से नही....तुम सहमत हो।'(कुछ देर शांति) लोगों ने हंसदूत के विरूद्ध शिकायत की थी। क्या तुम्हें मालूम चला ?

तमाल ः मुझे घटनाओं की बारीकी से जानकारी नही है, लेकिन सामान्यतः मैने सुन था।

श्रील प्रभुपाद ः जर्मनी में। जर्मनी में.....

तमाल ः वहाँ के भक्त।

श्रील प्रभुपाद ः इतनी सारी शिकायते।

तमाल ः इसलिए परिवर्तन अच्छा है।

श्रील प्रभुपाद ः नही, तुम गुरू बनो, लेकिन सबसे पहले तुम्हें योग्य होना चाहिए। फिर बनो।

तमाल ः ओह ! उस तरह की शिकायत थी।

श्रील प्रभुपाद्र ः क्या तुम्हें मालूम था।

तमाल ः हाँ, मैने सुन था। हाँ।

श्रील प्रभुपाद ः दृष्ट गुरू बनने का क्या उपयोग ?

तमाल ः वैसे मैने अपने आप का और आपके सभी शिष्यों का अध्ययन किया है और यह बहुत ही स्पष्ट तथ्य है हम सब बद्ध-जीव है इसलिए हम गुरू नही हो सकते। हो सकता है यह एक दिन संभव हो।

श्रील प्रभुपाद ः हूँ।

तमाल ः ....लेकिन अभी नही।

श्रील प्रभुपाद ः हाँ। मै किसी को गुरू बनाऊँगा। मै कहूँगा कौन गुरू है। अब तुम आचार्य बनो। तुम्हें प्रामाणिक गुरू बनाया गया है। मै उसके लिए प्रतिक्षा कर रहा हूँ।तुम बनो सब, आचार्य, मै पूरी तरह निवृत्त हो जाऊँगा। लेकिन प्रशिक्षण पूरा होना चाहिए।

तमाल ः शुद्धिकरण की प्रकिया होनी चाहिए।

श्रील प्रभुपाद ः हाँ, बिल्कुल होनी चाहिए। चैतन्य महाप्रभु यह चाहते है। अमार आज्ञाय गुरू हाना। तुम गुरू बनो। (हँसी) लेकिन योग्यता प्राप्त करो। छोटी सी चीज, दृढतापूर्वक अनुसरण।

तमाल ः कृत्रिम रूप से किसी पर मोहर नही लगाई जा सकती कि यह गुरू है।

श्रील प्रभुपाद ः तब तुम प्रभावशाली नही रहेंगे। तुम लोगों को धोखा दे सकते हो लेकिन यह प्रभावशाली नही होगा। जैसे हमारे गौडीय मठ को देखो, सभी लोग गुरू बनन चाहते थे, एक छोटा मंदिर और 'गुरू'। किस प्रकार का गुरू ? कोई प्रकाशन नही, कोई प्रचार नही, केवल कुछ खाना इकठठा करना। मेरे गुरू महाराज कहते थे, 'संयुक्त भोजनालय, खाने व सोने के लिए एक जगह।'

भावानंद ः ऐसे लोग होंगे, मुझे मालूम है। ऐसे लोग होंगे जो गुरू की पदवी धारण करने की कोशिश करेंगे।

तमाल ः यह कुछ वर्ष पूर्व हो ही रहा था। आपके गुरूभाई ऐसा ही सोच रहे थे। माधव महाराज....

भावानंद ः हाँ, बिल्कुल, हाँ एकदम कूदने के लिए तैयार।

श्रील प्रभुपाद ः बहुत मजबूत प्रबंधन और सतर्क एवं सजग निरीक्षण की आवश्यकता है।

वार्तालाप,७ जुलाई,१६७७,वृंदावन

तमाल ः श्रील प्रभुपाद हमें बहुत सारे पत्र मिल रहे है, और ये वे लोग है जो दीक्षा लेना चाहते है। चूंकि आप बीमर हो इसलिए अभी तक तो हमने उन्हें प्रतिक्षा करने के लिए कहा था।

श्रील प्रभुपाद ः स्थानिक लोग, वरिष्ठ संन्याशी यह कार्य कर सकते है।

तमाल ः हम वही कर रहे थे..... मेरा मतलब है,पूर्व में हम लोग....स्थानक जी.बी.सी. या संन्यासी उनकी माला पर जप करते और वे आपको ख़त लिख़ते थे और आप उनको उनका आध्यात्मिक नाम देते। तो क्या उस प्रकिया को फिर से शुरू किया जाये, या फिर हम....? मेरा मतलब है, एक बात यह है कि यह कहा जाता है कि यह गुरू अपने ऊपर....आपको मालूम ही है, वह अपने ऊपर....वह शिष्य को शुद्ध करने के लिए....इसलिए हम यह नही चाहते कि आपको....उफ्....आपकी तबीयत अच्छी नही है, इसलिए ऐसा नही होना चाहिए....इसलिए हम सबसे प्रतिक्षा करने को कह रहे है। मै केवल यह जानना चाहता हूँ कि क्या हम कुछ और समय तक प्रतिक्षा करना जारी रख़े।

श्रील प्रभुपाद ः नही। वरिष्ठ संन्यासी....

तमाल ः तो वे वही करते रहे....

श्रील प्रभुपाद ः तुम संन्यासियों की एक सूची दो। मै उसमें अंकित कर दूँगा कि कौन करेगा....

तमाल ः ठीक।

श्रील प्रभुपाद ः तुम कर सकते हो। कीर्तनानंद कर सकता है। और हमारा सत्स्वरूप कर सकता है। तो यह तीन, तुम दे सकते हो, शुरू करो।

तमाल ः तो यदि कोई अमेरिका में है तो क्या उसे सीधे कीर्तनानंद या सत्स्वरूप को लिख़ना होगा ?

श्रील प्रभुपाद ः निकट में। जयतिर्थ कर सकता है।

तमाल ः जयतिर्थ।

श्रील प्रभुपाद ः भगवान।और वह भी कर सकता है। हरिकेश।

तमाल ः हरिकेश महाराज।

श्रील प्रभुपाद ः और....पाँच,छह लोग, तुम भाग करो, जो समीप है।

तमाल ः जो सबसे समीप है। तो लोगों को आपको पत्र लिख़ना नही पडेगा ? वो सीधे ही उस व्यक्ति को पत्र लिख़ सकते है।

श्रील प्रभुपाद ः हूँ।

तमाल ः वास्तव में वे लोग उस व्यक्ति को आपकी ओर से दीक्षा दे रहे है। जो लोग दीक्षा ग्रहण करेंगे वे फिर भी आपके....

श्रील प्रभुपाद ः दूसरी दीक्षा (गायत्री दीक्षा) हम दूसरी दीक्षा पर विचार करेंग।

तमाल ः यह पहली दीक्षा के लिए है। ठीक है। और दूसरी दीक्षा के लिए अभी उन्हें....

श्रील प्रभुपाद ः नही, उन्हें प्रतिक्षा करनी पडेगी। दूसरी दीक्षा....वह देनी चाहिये।

तमाल ः क्या....कुछ भक्त आपको दूसरी दीक्षा के लिए पत्र लिख़ रहे है,और मै उन्हें यह लिख़ रहा हूँ आपकी तबीयत ठीक नही है। तो क्या मै उन्हें यही बोलता रहूँ कि .....

श्रील प्रभुपाद ः वे दूसरी दीक्षा ले सकते है।

तमाल ः आपको पत्र ले सकते है।

श्रील प्रभुापद ः नही। ये लोग।

तमाल ः ये लोग। ये लोग दूसरी दीक्षा भी दे सकते है। अतएव पहली और दूसरी दीक्षा के लिए भक्तों को आपको पत्र नही लिखना पडेगा। वे अपने निकटतम व्यक्ति को लिख सकते है। लेकिन वे सब लोग फिर भी आपके शिष्य होंगे। कोई भी व्यक्ति जो दीक्षा देगा वह आपकी ओर से देगा।

श्रील प्रभुपाद ः हाँ।

तमाल ः जैसा आपको मालूम है कि मै आपके सारे शिष्यों के नाम की एक पुस्तक रखे हुए हूँ ? क्या मै उसे जारी रखूँ ?

श्रील प्रभुपाद ः हूँ।

तमाल ः यदि कोई दीक्षा देते है, जैसे- हरिकेश महाराज, तो उन्हें उस व्यक्ति का नाम हमें यहाँ भेजना चाहिए और मै उसे इस पुस्तक में लिख दूँगा। ठीक है। क्या भारत में कोई और है जिससे आप यह करवाना चाहेंगे ?

श्रील प्रभुपाद ः भारत ? मै यहाँ हूँ। हम देखेंगे। भारत मे,जयपताका।

तमाल ः जयपताका महाराज।

श्रील प्रभुपाद ः तुम भी भारत में हो। तुम इन नामों को लिख लो।

तमाल ः हाँ, मैने लिख लिये है।

श्रील प्रभुपाद ः वे कौन है ?

तमाल ः कीर्तनानंद महाराज,सतस्वरूप महाराज,जयतिर्थ प्रभु,भगवान प्रभु,हरिकेश महाराज,जयपताका महाराज और तमाल कृष्ण महाराज।

श्रील प्रभुपाद ः यह ठीक है।तुम इसका वितरण करो।

तमाल ः सात। यहाँ सात नाम है।

श्रील प्रभुपाद ः अभी के लिए सात नाम काफी है....तुम बना सकते हो,रामेश्वर।

तमाल ः रामेश्वर महाराज।

श्रील प्रभुपाद ः और हृदयानंद।

तमाल ः अरे हाँ,दक्षिण अमेरिका।

श्रील प्रभुपाद ः तो बिना मेरी प्रतिक्षा किए,जिसको भी तुम योग्य समझो उसे....यह (तुम्हारे) न्याय पर निर्भर होगा।

तमाल ः न्याय पर।

श्रील प्रभुापद ः हाँ।

तमाल ः यह पहली और दूसरी दीक्षा के लिए।

श्रील प्रभुापद ः हूँ।

तमाल ः क्या मै एक कीर्तन मंडली को भेजूँ,श्रील प्रभुपाद ?

'पिरामिड हाउस कन्फेशनस्' (पिरामिड नामक घर में तमाल कृष्ण महाराज द्वारा दोष स्वीकारना) ३ दिसम्बर, १६८०, लॉस एंजिल्स

तमाल कृष्ण महराज ः कुछ दिनों पूर्व मै कई चीजो का साक्षात्कार कर पाया हूँ....स्पष्टस्वरूप से श्रील प्रभुपाद द्वारा ऐसे कथन है कि उनके गुरू महाराज ने किसी को अपना उत्तराधिकारी नियुक्त नही किया था। अपनी पुस्तकों में भी श्रील प्रभुपाद कहते है कि योग्यता के आधार पर है कोई गुरू हो सकता है। .....

यह प्रेरणा मिली;क्योंकि मेरे द्वारा प्रश्न उठाया गया था, इसलिए कृष्ण बोले। वास्तव में प्रभुपाद ने कभी किसी को गुरू नियुक्त नही किया था। उन्होंने ग्यारह ऋत्विकों को नियुक्त किया था। श्रील प्रभुपाद ने उन्हें कभी गुरू के रूप में नियुक्त नही किया था। मैने और अन्य जी.बी.सी.यों ने पिछले तीन वर्षो में इस आन्दोलन को बहुत बडी हानि पहुँचायी है; क्योंकि हम गलत अर्थ निकालकर ऋत्विकों कि नियुक्ति को गुरू की नियुक्ति मान बैठे।

मै यह बताता हूँ कि वास्तव में क्या हुआ। मैने इसका वर्णन किया था लेकिन इसका गलत अर्थ निकाला गया था। वास्तव में हुआ यह कि श्रील प्रभुपाद बोले कि वे कुछ ऋत्विकों की नियुक्ति करने की सोच रहे है और तब अनेक कारणोंवश जी.बी.सी. द्वारा अपनी एक बैठक बुलाई गई और वे प्रभुपाद के पास गए, हममें से पाँच या द्यह लोग। (यहाँ २८ मई, १६७७ के वार्तालाप की बात हो रही है) हमने उनसे पूछा,'श्रील प्रभुपाद आपके चले जाने के बाद यदि हम शिष्य स्वीकार करते है तो वे किसके शिष्य होंगे, आपके या मेरे।'

कुछ समय दीक्षा चाहने वालों कि सूची का ढेर बन गया था। और ये पत्र भरे पडे थे। मैने कहा,'श्रील प्रभुपाद आपने एक बार ऋत्विकों की चर्चा की थी। मुझे मालूम नही करना चाहिए। हम आपके पास नही आना चाहते लेकिन हजारों भक्तो के नाम आ चुके है और मै उन पत्रों को अपने पास रखे हुए हूँ। मुझे यह मालूम नही है कि आप क्या करना चाहते है।'

श्रील प्रभुपाद बोले,'इतने लोगों को नियुक्त करूँगा....और वे उनके नाम बताने लगे। उन्होंने यह स्पष्ट कर दिया था कि वे उनके शिष्य है। तब मेरे मन में यह बहुत स्पष्ट था कि वे सब (नए दीक्षित शिष्य) उनके शिष्य थे। उसके कुछ समय बाद मैने उनसे दो प्रश्न पूछे। पहला ः ब्रह्मानंद स्वामी के बारे में आप क्या कहते है ? मैने उनसे यह पूछा क्योंकि मेरे हृदय में उनके लिए स्नेह था....तो श्रील प्रभुपाद बोले,'नही योग्य होने पर ही'। जब मै ही पत्र को टाइप करने के लिए तैयार हुआ तब मैने दूसरा प्रश्न किया ः श्रील प्रभुपाद इतने बहुत है या आप और नाम इसमें जोडना चाहते है ? वे बोले,'जैसी आवश्यकता हो वैसे अन्य लोगों को इसमे सम्मिलित किया जा सकता है।

अब मुझे समझ आ रहा है कि उन्होंने जो किया वह बहुत ही स्पष्ट था। वे शारीरिक रूप से दीक्षा का संस्कार सम्पन्न करने में असक्षम हो गए थे इसलिए उन्होंने 'आफिशियेटिंग प्रीस्ट्स' (दीक्षा संस्कार सम्पन्न करने वाले पुजारियों) को उनकी ओर से दीक्षा देने के लिए नियुक्त किया था। उन्होंने ग्यारह को नियुक्त किया और यह स्पष्त रूप से कहा कि 'जो भी निकट है वह दीक्षा दे सकता है'। यह बात अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है;क्योंकि जब दीक्षा लेने का प्रश्न उठता है तो उसका आधार यह नही कि जो भी निकटतम हो उससे ली जाए बल्कि जहाँ हृदय जाये वहाँ। जिस पर तुम्हारी श्रद्धा हो उससे तुम दीक्षा लोगे।

लेकिन जब प्रतिनिधियों द्वारा दीक्षा देने की बात आती है तो जो भी निकट है उससे ले सकते है औ वे इस बात पर बहुत ही स्पष्ट थे। उन्होंने उनको मनोनित किया था। वे लोग दुनिया में सभी जगह फैले हुए थे। उन्होंने कहा,'जो भी तुम्हारे पास है तुम उसके पास जाओ। वह तुम्हारी परीक्षा लेगा और उसके बाद मेरी ओर से दीक्षा देगा।'

यह जरूरी नही कि उसके प्रति तुम्हारे मन में श्रद्धा होनी चाहिए। वह तो गुरू के लिए होती है। 'इस आंदोलन के संचालन के लिए मुझे जी.बी.सी. का निर्माण करना होगा और इसके लिए मै निम्नलिखित लोगों को नियुक्त करूँगा। यदि इस आन्दोलन में नए लोगो के सम्मिलित होने व दीक्षा लेने की प्रकिया को जारी रखना है तो मुझे कुछ पुजारियों को नियुक्त करना होगा जो मेरी मदद कर सकेंगे। मै शारीरिक रूप से सबका अकेला संचालन नही कर सकता इसलिए मुझे कुछ पुजारियों को नियुक्त करना होगा।

बस यही सब कुछ था और इससे ज्यादा कुछ नही। तुम यह शर्त लगाकर कह सकते हो कि यदि वे वर्तमान में चलित गुरू प्रणाली चाहते तो इसको स्थापित करने के विषय में वे कई घटों,कई दिनों,कई सप्ताहों तक चर्चा करते;क्योंकि वे लाखों बार कह चुके थे,'मेरे गुरू महाराज ने किसी को नियुक्त नही किया था। यह योग्यता पर आधारित है।' हमने बहुत बडी गलती की है। प्रभुपाद के प्रस्थान के बाद इन ग्यारह लोगों की क्या स्थिति है ?.....

प्रभुपाद ने केवल संन्यासियों को ही नही बल्कि दो गृहस्थों के भी नाम बतलाये, ऋत्विक बनाया, जिससे यह प्रतित होता है कि 'ये गृहस्थ संन्यासी के बराबर थे। अतः जो भी योग्य हो सामान्यतः यह समझा जाता है कि गुरू की उपस्थिति में शिष्य ग्रहण नही किए जा सकते लेकिन गुरू के चले जाने के बाद शिष्य ग्रहण किये जा सकते है। यदि कोई तुम्हारे प्रति श्रद्धा रखता है तो उसे शिष्य बनाया जा सकता है। यह भी महत्त्वपूर्ण है कि भावि शिष्य को पूरी तरह से यह समझाया जाना चाहिए कि प्रमाणिक गुरू को कैसे चुने। यदि तुम प्रमाणिक गुरू हो और तुम्हारे गुरू अब नही रहे तब यह तुम्हारा अधिकार है। यह उसी प्रकार है जिस प्रकार हर मनुष्य संतान पैदा कर सकता है....दुर्भाग्यवश जी.बी.सी.ने इस तथ्य को स्वीकारा नही।उन्होंने तुरन्त ही (मान लिया) कि ये ग्यारह लोग ही चुने हुए गुरू है। मे अेने लिए तो यह कह सकता हूँ और इसके लिए मै सभी लोगों से नम्रतापूर्वक क्षमायाचना करता हूँ कि निश्चित रूप से इसमें कुछ हद तक अन्यों को अपने वशीभूत करने की प्रवृति उपस्थित है।यह एक बद्ध-जीव का स्वभाव है और यह सबसे ऊँचे स्थान गुरू बनने की चेष्टा में प्रकट हुआ है।'गुरू ,ओह अदउभुत। मै अब गुरू हूँ और केवल हम ग्यारह लोग ही है....।

मुझे लगता है कि यह समझ बहुत महत्त्वपूर्ण है जिससे भविष्य में ऐसी किसी और दुर्घटना को रोक जा सके। मै कहता हूँ कि भविष्य में यह फिर से होगा। केवल कुछ समय की देर है और जब स्थिति को लोग भूल जाएँगे फिर ऐसी दुर्घटना अपने आप को दोहराएगी चाहे वो लॉस एंजिल्स में हो या कही और। यह निरन्तर होता रहेगा तब तक जब तक तुम वास्तविक कृष्ण शक्ति को बिना रोक-टोक के प्रदर्शित होने नही दोगे। मुझे लगता है कि यदि जी.बी.सी. तुरन्त ही इस बात को नही अपनाएगी या यह साक्षात्कार नही करेगी.... तुम मुझे कोई भी 'टेप' या पुस्तक नही दिखा सकते जहाँ प्रभुपाद कह रहे हों,'मै इन ग्यारह लोगों को गुरू के रूप में नियुक्त करता हूँ'। इसका अस्तित्त्व नही है,क्योंकि प्रभुपाद ने कभी किसी को गुरू के रूप में नियुक्त नही किया। यह एक भ्रम है,आडम्बर है। .....जिस दिन तुम दीक्षा ग्रहण करते हो उसी दिन से तुम्हारे पिता के चले जाने पर तुम्हें पिता होने का अधिकार प्राप्त होता है यदि तुम योग्य हो। नियुक्त नही। इसके लिए नियुक्त की जरूरत नही; क्योंकि किसी की नियुक्ति हुई ही नही।

(vi) त्रिदण्डी गोस्वामी
ए.सी भक्तिवेदान्त स्वामी
संस्थापक आचार्य ः अंतर्राष्ट्रीय कृष्ण भावनामृत संघ
शाखा ः कृष्ण-बलराम मंदिर
भक्ति वेदान्त स्वामी मार्ग,
रमनरेती, वृन्दावन (उ.प्र.)
दिनांक ः ४ जून, १९७७

वसीयत की घोषणा

मै,ए.सी. भक्तिवेदान्त स्वामी प्रभुपाद, अंतराष्ट्रीय कृष्ण भावनामृत संघ का संस्थोक आचार्य, भक्तिवेदान्त स्वामी बुक ट्रस्ट का 'सेटलर' और ऊँ विष्णुपाद १०८ श्री श्रीमद् भक्तिसिद्धांत सरस्वती गोस्वामी महाराज प्रभुपाद का शिष्य वर्तमान में वृन्दावन में कृष्ण-बलराम का निवासी इसको अपनी आखिरी वसीयत (इच्छा) बनाता हूँ।

१. 'गवर्निंग बॉडी कमीशन' (जी.बी.सी.) संपूर्ण अंतराष्ट्रीय कृष्ण भावनामृत संघ की सर्वोतम प्रशासकीय अधिकारी होगी।

२. हर मंदिर इस्कॉन की सम्पति होगा और इसका प्रबन्ध 'एक्जीक्यूटिव डाइरेक्टर्स' (कार्यकारी निर्देशको) द्वारा होगा। यह प्रबन्धन प्रणाली जिस प्रकार चल रही है उसी प्रकार चलती रहेगी और किसी भी तरह के परिवर्तन की आवश्यकता नही है।

३. भारत में सम्पतियों का संचालन निम्नलिखित 'एक्जीक्यूटिव डाइरेक्टर्स' (कार्यकारी निर्देशको) करेंगे ः

क. श्री मायापयुर धाम,पानीहाटी,हरिदासपुर और कलकत्ता की सम्पत्तियाँ ः गुरू कृपा स्वामी,जयपताका स्वामी,भावनंद गोस्वामी और गोपाल कृष्ण दास अधिकारी।

ख. वृन्दावन की सम्पत्ति ः गुरू कृपा गोस्वामी, अक्षयानंद स्वामी और गोपाल कृष्ण दास अधिकारी।

ग. बम्बई की सम्पत्ति ः तमाल कृष्ण गोस्वामी, गिरिराज दास ब्रह्मचारी और गोपाल कृष्ण दास अधिकारी।

घ. भुवनेश्वर की सम्पतित्त ः गौर गोविन्द स्वामी, जयपताका स्वामी और भगवत दास ब्रह्मचारी।

ङ हैदराबाद की सम्पत्ति ः महांस स्वामी, श्रीधर स्वामी, गोपाल कृष्ण दास अधिकारी और बली मर्दन दास अधिकारी।

ये कार्यकारी निर्देशक, जिनको उपर्युक्त पदवियाँ दी गई है उन्हें सम्पूर्ण जीवन के लिए नियुक्त किया जाता है। उपर्युक्त निर्देशक यदि मृत्यु के कारण या किसी अन्य कारणवश कार्य करने में असफल हो जाएँ तो एक या एक से ज्यादा उत्तराधिकारी निर्देशक आपस में मिलकर चुन सकते है इस शर्त पर कि निर्देशक मेरा दीक्षीत शिष्य हो, जो दृढतापूर्वक अंतराष्ट्रिय कृष्ण भावनामृत संघ

के सभी नियमों का, जिनका सम्पूर्ण वर्णन मेरी पुस्तकों मे है, पालन कर रह हो। ओर इस शर्त पर कि एक समय में तिन (३) से कम या पाँच (५) से ज्यादा कार्यकारी निर्देशक कार्यरत न हो।

४. मैने अंतराष्ट्रिय कृष्ण भावनामृत संघ की सृष्टि की है, इसका विकास किया है एवं इसका संगठन भी किया है और अब मै यह चाहता हूँ कि भारत में इस्कॉन के नाम पर पंजीकृत सारी सम्पत्तियों को कभी भी गिरवी, बिकी,किसी अन्य के नाम पर स्थानान्तरित नही की जाए या किसी रूप से क्षति न पहुँचाई जाए, किसी को भेट या दान स्वरूप न दी जाए व इनके स्वामित्व को हस्तान्तरित नही किया जाए। यह निर्देश अपरिवर्तनीय है।

५. भारत के बाहर स्थित सारी सम्पत्तियों को मूलतः कभी गिरवी न रखा जाए, या इसको किसी चीज के बदले में न दिया जाए या इसकी बिकि नही की जाए एवं किसी के नाम हस्तान्तरित न किया जाए। लेकिन यदि जरूरत पडे तो इन्हें उसके साथ जुडे जी.बी.सी. समिति के सदस्यों कि सहमति से गिरवी रखा जा सकता है, इसका आदान-प्रदान किया जा सकता है या इसकी बिकि इत्यादी की जा सकती है।

६. भारत के बाहर स्थित सम्पत्तियाँ और उससे जुडे जी.बी.सी. समिति सदस्य निम्नलिखित है ः

क. शिकागो,डेट्राइट और एनन आर्बर की सम्पतियाँ ः जयतिर्थ दास अधिकारी,हरिकेश स्वामी और बलवंत दास अधिकारी।

ख. हवाई, टोक्यो एवं हांगकांग की सम्पत्तियाँ ः गुरू कृपा स्वामी, रामेश्वर स्वामी और तमाल कृष्ण गोस्वामी।

ग. मेलबार्न,सिडनी एवं आस्ट्रेलिया फार्म की सम्पत्तियाँ ः गुरू कृपा स्वामी, हरी सौरी और अजेय ऋषि।

घ. इंग्लैड (लंडन रेडलेट), फ्रांस,जर्मनी,नीदरलैड, स्वीडन की सम्पत्तियाँ ः जयतिर्थ दास अधिकारी, भगवान दास अधिकारी और हरिकेश स्वामी।

ङ केन्या, मारिशस, दक्षिण अफ्रीका की सम्पत्तियाँ ः जयतिर्थ दास अधिकारी,ब्रह्मानंद स्वामी और अजेय ऋषि।

च. मैक्सिको, वेनेजुएला,ब्राजील, कोस्टारिका, पेरू, इक्वेडोर, कोलम्बिया, चिली की सम्पत्तियाँ ः हृदयानंद गोस्वामी, पंचद्रविड स्वामी और ब्रह्मनांद स्वामी।

छ. जोर्जटाउन, गुयाना, सांता डोमिंगो, सेंट आगस्टीन की सम्पत्तियाँ ः आदि केशव स्वामी, हृदयानंद गोस्वामी और पंचद्रविड स्वामी।

ज. वेन्कुवर, सिआटल, बरक्ली, डलास की सम्पत्तियाँ ः सत्स्वरूप दास गोस्वामी, जगदीश दास अधिकारी और जयतिर्थ दास अधिकारी।

झ. लॉस एंजिल्स, डेन्वर, सन डीआगो, लैगूना-बिच की सम्पत्तियाँ ः रामेश्वर स्वामी, सत्स्वरूप दास गोस्वामी और आदि केशव स्वामी।

ञ. न्यूयार्क, बोस्टन, प्यूर्टोरिको, पोर्ट रायल, सेंट लूईस, सेंट लूईस फार्म की सम्पत्तियाँ ः तमाल कृष्ण गोस्वामी, आदि केशव स्वामी और रामेश्वर स्वामी।

ट. ईरान की सम्पत्तियाँ ः अजेय ऋषि, भगवान दास अधिकारी और ब्रह्मनंद स्वामी।

ठ. वाशिंगटन डी.सी., बाल्टिमोर, फिलाडेल्फिया, मांट्रियल और ओटावा की सम्पत्तियाँ ः रूपानुग दास अधिकारी, गोपाल कृष्ण दास अधिकारी और जगदीश दास अधिकारी।

ड. पिट्सबर्ग, न्यू वृदावन, टोरंटो, क्लीवलैड, बफैलो की सम्पत्तियाँ ः कीर्तनानंद स्वामी, अजेय ऋषि और बलवंत दास अधिकारी।

ढ. अटलांटा, टेनेसी फार्म, गेन्सविल, मायामी, न्यू आरलियन्स, मिसीसिप्पी फार्म, हाउस्टन ः बलवंत दास अधिकारी, आदि केशव स्वामी और रूपानुगा दास अधिकारी।

ण. फिजी की सम्पत्तियाँ ः हरि सौरी, अजेय ऋषि और वासुदेव।

७. मै यह घोषणा करता हूँ और इसकी पुष्टि करता हूँ कि सभी सम्पत्तियाँ स्थायी और अस्थायी, जो मेरे नाम पर है और करेन्ट अकाउन्ट्स (चालू खाता), सेविंग्स अकाउन्ट्स (बचत खाता), और फिक्स्ड डिपोजिट्स (स्थायी जमा पूँजी), जो विभिन्न बैंको में है, अंतराष्ट्रिय कृष्ण भावनामृत संघ की सम्पत्ति है एवं इस्कॉन की जायदाद है। मेरे पूर्व जीवन के उत्तराधिकारी यदि इन पर अपना अधिकार सिद्ध करने की कोशिश करे तो उनका इन सम्पत्तियों पर कोई अधिकार नही है, न ही उनका इसमें कोई दावा या रूचि है। निम्नलिखित व्यवस्था के आलावा उनका कोई अन्य अधिकार नही है।

८. हालांकि विभिन्न बैंको में जो पैसा है वो मेरे नाम पर है और इसका व्यय इस्कॉन कर रहा है और यह इस्कॉन का है फिर भी मैने कुछ राशि बैंक में डिपोजिट के रूप में रखी है ताकि मेरे पूर्व परिवार के सदस्यों को इसमें से हर एक को १000/- रूपये मासिक भत्ता प्राप्त हो (दो बेटे, दो बेटियाँ और पत्नि)। इन सदस्यों की मृत्युपरांत यह बचत की धन राशि जो डिपोजिट्स (कोपर्स, ब्याज राशि और बचत) के रूप में है, इस्कॉन की सम्पत्ति बन जाएगी। और मेरे पूर्व परिवार के वंशज या कोई और यदि दावा करते है तो उन्हें और कोई भत्ता नही दिया जाना चाहिए।

७. मै गुरू कृपा स्वामी, हृदयानंद गोस्वामी, तमाल कृष्ण गोस्वामी, रामेश्वर स्वामी, गोपाल कृष्ण दास अधिकारी, जयतिर्थ दास अधिकारी और गिरिराज दास ब्रह्मचारी को इस वसीयात के कार्यकारियों के रूप में नियुक्त करता हूँ। मैने यह वसीयत जून के चौथे दिन १६७७ में अपने पूरे होश और स्थिर मन से और बिना किसी दबाव या किसी की बातों में आकर बनायी है।

ए.सी. भक्तिवेदान्त स्वामी

गवाह ः

इस उपर्युक्त वसीयात पर श्रील प्रभुपाद ने हस्ताक्षर किये है और इसे सील करने व इसके गवाही के लिए निम्नलिखित व्यक्ति उपस्थित थे ः तमाल कृष्ण गोस्वामी, भगवान दास अधिकारी और कई अन्य गवाह। (मूल प्रति पर हस्ताक्षर अंकित)

मै, ए.सी. भक्तिवेदान्त स्वामी प्रभुपाद, एक संन्यासी और अंतराष्ट्रिय कृष्ण भावनामृत संघ का संस्थापक आचार्य, भक्तिवेदान्त बुक ट्रस्ट का 'सेटलर' और ऊँ विष्णुपाद १०८ श्री श्रीमद् भक्तिसिद्धांत सरस्वती गोस्वामी महाराज प्रभुपाद का शिष्य वर्तमान में वृन्दावन के कृष्ण-बलराम मंदिर का निवासी अपनी वसियत व 'कोडिसिल'(वसीयत में संशोधन) बनाता हूँ जिससे मेरे विचार जो मेरी पिछली वसीयत दिनांक ४ जून,१६७७ में कुछ हद तक अस्पष्ट प्रतित होते है उनका स्पष्टिकरण हो सके। यह इस प्रकार है ः

मैने ४ जून,१६७७ को एक वसीयत बनायी थी, जिसमें मैने कुछ प्रबन्ध किए थे। उसमें श्री एम.एम. डे, वृन्दावन चन्द्र डे, कु. भक्तिलता डे और सुलक्षमणा डे, जो मेरे गृहस्थ आश्रम में मेरे द्वारा उत्पन्न हुए थे, और श्रीमती राधारानी डे, जो गृहस्थ आश्रम में मेरी पत्नी थी, इन सबके लिए आजीवन जीवन-निर्वाह भत्ते का प्रबन्ध है जो वसीयत की ८ वी पंक्ति में उल्लेखित है। चूँकी ध्यान से देखने पर मुझे यह लगा कि ये पंक्तियाँ मेरे विचार स्पष्ट रूप से नही दर्शाती है इसलिए मै अब यह निर्देश दे रहा हूँ कि राधारानी डे को आजीवन १000/- रूपये की मासिक आय प्राप्ति होगी। यह आय एक लाख बीस हजार रूपये की राशी को इस्कॉन ७ साल के लिए जिस बैक में उचित समझे उसमें नकद राशि स्थायी जमा पूँजी के रूप में जमा कराएगा। यह मासिक आय उसके उत्तराधिकारीयों को उपलब्ध नही होगी। और उसकी मृत्यु के बाद यह राशि इस्कॉन के अधिकारियों व निर्देशकों द्वारा जिस प्रकार संस्था के लिए उचित हो उस प्रकार उसका प्रयोग किया जाएगा।

जहाँ तक श्री एम.एम. डे, श्री वृन्दावन चन्द्र डे, श्रीमती सुलक्षमणा डे और कु.भक्तिलता डे का प्रश्न है उनके लिए इस्कॉन एक लाख बीस हजार रूपाये के चार 'फिक्स्ड डिपाजिटस्' (स्थायी जमा राशि) बनाएगा। हर 'डिपाजिट'(जमा राशि) एक लाख बीस हजार रूपये का होगा। यह सात साल की अवधि के लिए होगा और इससे कम से कम १000/- रूपये प्रतिमाह का ब्याज हर स्थायी जमा राशि पर मिलेगा। अपने-अपने स्थायी जमा राशि से मिलने वाले ब्याज १000/- रूपयों में उन्हें केवल २५0/- रूपये प्रतिमाह दिया जाएगा और बाकी ७५0/- रूपये प्रतिमाह की रकम एक दूसरी नई स्थायी जमा कर दी जाएगी। यह उनके व्यक्तिगत नामों पर जमा की जाएगी जो सात साल तक के लिए होगी।सात साल पूरे होने पर मासिक ब्याज ७५0/- रूपयों
द्वारा सात साल तक जमा की गई कुल धनराशि को उपर्युक्त नामांकित व्यक्ति 'गवर्नमेंट बॉण्ड' (सरकारी प्रतिज्ञा-पत्र) अथवा 'फिक्स्ड डिपोजिट रिसीप्टस् (स्थायी जमा राशि रसीद) अथवा सरकारी जमा योजना में लगा सकते है अथवा इससे स्थायी जायदाद (सम्पत्ति) खरीद सकते है जिससे धनराशि सुरक्षित रहे और खत्म ना हो जाए। यदि उपर्युक्त इन नियमों का उल्लंघन कर धनराशि को किसी और उद्देश हेतु खर्च करे है तब इस्कॉन के कार्यकारी निर्देशक उनके मासिक भत्ते को बंद करने के लिए स्वतंत्र है, जो उन्हें एक लाख बीस हजार रूपये की मूल जमा राशि के ब्याज के रूप में प्राप्त होता था। फिर वे ब्याज की रकम को 'भक्तवेदान्त स्वामी चैरिटी ट्रस्ट' में जमा कर सकते है। यह बहुत स्पष्ट किया जाता है कि उपर्युक्त व्यक्तियों के उत्तराधिकारीयों का उपर्युक्त राशि पर कोई अधिकार नही होगा। चूँकी यह राशि उपर्युक्त व्यक्तियों (जो मेरे पूर्व जीवन के पारिवारिक सदस्य है) के निजी उपयोग के लिए ही है और वह भी उनके जीवनकाल तक ही।

मैने अपनी वसीयत के लिए कुछ कार्यकारियों को नियुक्त किया है। मेरी ४ जून, १६७७ की वसीयत में मैने जिन कार्यकारियों को नियुक्त किया था उनमें मै अब श्री जयपताका स्वामी, जो मेरे शिष्य है और श्री मायापुर

चन्द्रोदय मन्दिर, जिला नाडिया, पश्चिम बंगाल के निवासी है, को भी कार्यकारी के रूप में सम्मिलित करता हूँ।मै यहाँ आगे निर्देश देता हूँ कि मेरी वसीयत के अन्तर्गत अपने कर्तव्यों को व्यक्तिगत रूप से और सामूहिक रूप से पूरा करने के लिए मेरे कार्यकारियों को पूरा अधिकार है।

मै इस प्रकार उपर्युक्त उल्लेख के अनुसार अपनी ४ जून, १६७७ की वसीयत में सुधार,संशोधन व परिवर्तन करता हूँ।सभी माइनों में यह वसीयत हमेशा अपनी स्थिति बनाए रखेगी और भविष्य में सभी सदा पालनीय रहेगी।

मै इस नवम्बर के ५वें दिन, १६७७ को यह 'बिल कोडिसिल' अपने पूरे विवेक, स्थिर मन एवं बिना किसी की बातों में आकर व बिना किसी जोर जबर्दस्ती के बना रहा हूँ।

गवाह ः

(मूल प्रति पर हस्ताक्षर अंकित)

ए.सी. भक्तिवेदान्त स्वामी

क्या गुरू को सशरीर उपस्थित होना अनिवार्य है ?

सशरीर उपस्थिति महत्त्वपूर्ण नही है। गुरू द्वारा प्राप्त दिव्य वाणी की उपस्थिति ही जीवन में मार्गदर्शक होनी चाहिए। यही हमारे आध्यात्मिक जीवन को सफल बनाएगी। यदी तुम्हें मेरी अनुपस्थिति का अत्यधिक आभास हो रहा है तो मेरे बैठने के स्थानों पर मेरे चित्र (फोटो) रख दो और यह तुम्हारे लिए प्रोत्साहन का स्त्रोत बनेगा।

(ब्रह्मानंद तथा अन्य शिष्यों को श्रील प्रभुपाद का पत्र, १६/१/६७)

परन्तु सदा याद रखो कि मै सदा तुम्हारे साथ हूँ। जिस प्रकार तुम हमेशा मेरा चिन्तन करते रहते हो उसी प्रकार मै भी हमेशा तुम्हारे बारे में सोचता हूँ। चाहे हम शारीरिक रूप से एक साथ न हों फिर भी हमारी आत्मा अलग नही है। अतः हमें इस आध्यात्मिक संबंध के बारे में ही चिन्तन करना चाहिए।

(गौर सुन्दर को श्रील प्रभुपाद का पत्र, १३/११/६६)

इस तरह हमें वाणी (प्रकंपन) द्वारा संग करना चाहिए, भौतिक उपस्थिति द्वारा नही। यही सच्ची संगत है।

(श्रील प्रभुपाद प्रवचन, १८/८/६८, मांट्रियल)

उपस्थिति को दो प्रकार से समझा जा सकता है – सशरीर उपस्थिति और वाणी की उपस्थिति। सशरीर उपस्थिति नश्वर है जबकि वाणी की शाश्वत है.... जब हमें कृष्ण और गुरू से वियोग की अनुभूति हो तब हमें केवल उनके आदेशों के शब्दों को याद करना चाहिए और फिर यह वियोग का अभास नही रहेगा। कृष्ण और गुरू से इस प्रकार का संग वाणी का संग होना चाहिए, शारीरिक उपस्थिति का नही। यही सच्चा संग है।

(कृष्ण भावनामृत की प्राप्ति, अध्याय ४)

यदयापि भौतिक दृष्टि से श्रीमद् भक्तिसिद्धांन्त सरस्वती ठाकुर प्रभुपाद इस जगत से सन् १९३६ के दिसम्बर के आखरी दिन को प्रस्थान कर चुके है फिर भी अब भी मै यही मानता हूँ कि वे अपनी वाणी, अपनी शब्दों द्वारा मेरे साथ हमेशा उपस्थित है। संग करने के दो तरीके होते है ः वाणी से और वपु से। वाणी अर्थात् शब्द और वपु अर्थात सशरीर उपस्थिति। सशरीर उपस्थिति का कभी लाभ उठाया जा सकता है और कभी नही। अन्य शब्दों में सशरीर उपस्थिति का लाभ हमेशा नही उठाया जा सकता। लेकिन वाणी अनंतकाल तक विदयमान रहती है। अतएव व्यक्ति को वाणी का ही लाभ उठाना चाहिए, सशरीर उपस्थिति का नही।

(चैतन्य चरितामृत, अंत्य, निष्कर्ष में कह गये शब्द)

अतः हमें वाणी का लाभ उठाना चाहिए, सशरीर उपस्थिति का नही।

(श्रील प्रभुपाद का पत्र सूची देवी दासी को, ४/११/७५)

मै तुम्हारे निजी मार्गदर्शक बना रहूँगा चाहे सशरीर उपस्थित रहूँ या सशरीर नही। ठीक उसी प्रकार जिस प्रकार मुझे गुरू महाराज द्वारा व्यक्तिगत मार्गदर्शन मिल रहा है।

(श्रील प्रभुपाद वार्तालाप, १४/७/७७,वृन्दावन)

यह गलत धारणा है कि भक्तियुत सेवा में रत भक्तों से यदि किसी को संग करना है तो वह अपनी आर्थिक समस्याओं का समाधान नही कर सकता। इस तर्क का उत्तर देने के लिए यहाँ यह वर्णन किया गया है कि व्यक्ति को मुक्तात्माओं का संग करना चाहिए लेकिन प्रत्यक्ष रूप से नही,सशरीर रूप से नही, बल्कि जीवन की समस्याओं का दर्शन एवं द्वारा समझकर।

(श्रीमद्-भागवतम्, ३/३१/३८,भावार्थ)

मै हमेशा तुम्हारे साथ हूँ। चिन्ता ना करो अगर मै सशरीर अनुपस्थित रह रहूँ।

(जयानंद को श्रील प्रभुपाद का पत्र, १६/६/६७)

परमानंदा ः हम हमेशा आपकी उपस्थिति का तीव्र अनुभव कर रहे है, श्रील प्रभुपाद केवल आपके उपदेशों और आदेशों द्वारा। हम सदैव आपके आदेशों पर चिन्तन कर रहे है।

श्रील प्रभुपाद ः धन्यवाद। यही सच्ची उपस्थिति है। सशरीर उपस्थिति महत्त्वपूर्ण नही होता।

(श्रील प्रभुपाद वार्तालाप्, ६/१०/७७,वृन्दावन)

तुमने लिखा है कि तुम मेरा संग पाने को फिर इच्छुक हो, लेकिन तुम यह क्यों भूल गई हो कि तुम हमेशा मेरे संग में हो ? जब तुम मेरे आन्दोलन के कार्य में सहायता कर रहे हो तो मै हमेशा तुम्हारे बारे में सोच रहा हूँ और तुम भी हमेशा मेरे बारे में सोच रही हो। यही सच्चा संग है। जिस तरह मै प्रति क्षण अपने गुरू महाराज के बारें में सोच रहा हूँ यदयापि वे सशरीर विदयमान नही है और चूँकि मै अपनी पूरी क्षमता से उनकी सेवा करने की कोशीश कर रहा हूँ, मुझे पूरा विश्वास है कि वे अपना आशीर्वाद देकर मेरी सहायता कर रहे है। अतः दो प्रकार के संग होते है ः सशरीर और उपदेशात्मक संग जितना महत्त्वपूर्ण नही होता।

(गोविन्द दासी को श्रील प्रभुपाद का पत्र, १८/८/६६)

जहाँ तक मेरे आशीर्वाद का सवाल है इसके लिए मेरी सशरीर आवश्यक नही है। यदी तुम वहाँ हरे कृष्ण महामंत्र का जप कर रहे हो, और मेरे आदेशों का पालन कर रहे हो, मेरी पुस्तकें पढ रहे हो, केवल कृष्ण प्रसाद ले रहे हो, इत्यादी तब तुम्हें उन भगवान श्री चैतन्य महाप्रभु के आशिर्वाद न मिलने का प्रश्न ही नही उठता, जिनके आन्दोलन को मै विनम्रतापूर्वक आगे बढाने की कोशीश कर रहा हूँ।

(बाल कृष्ण को श्रील प्रभुपाद का पत्र,३०/६/७४)

जो भगवान व गुरू में अटूट आस्था रखता है उसके लिए शास्त्रों का अर्थ अपने आप स्पष्ट हो जाता है। इसलिए अपनी अभिरूचि जारी रखो और तुम अपनी आध्यात्मिक प्रगति में सफल रहोंगे। मुझे पूरा विश्वास है कि यदि मै तुम्हारे सामने सशरीर रूप से उपस्थित न भी रहूँ तब भी यदि तुम उपर्युक्त तत्त्वों का पालन करोंगे तो तुम कृष्ण भावनामृत मे अपने सारे आध्यात्मिक कर्तव्यों को निभाने में सक्षम रहोगे।

(सुबाल को श्रील प्रभुपाद का पत्र,२६/६/६७)

अतएव यदयापि भौतिक शरीर उपस्थित न हो, वाणी को ही गुरू की उपस्थिति समझना चाहिए, वाणी। जो हमने गुरू से सुन है, वही सजीव है।

(श्रील प्रभुपाद का प्रवचन,१३/१/६६, लॉस एंजिल्स)

भक्त ः तो कभी-कभी गुरू बहुत दूर होते है। वे लॉस एंजिल्स में हो सकते है। कोई हेमबर्ग मंदिर में आता है और सोचता है, 'गुरू को किस प्रकार संतुष्ट किया जाए' ?

श्रील प्रभुपाद ः केवल उनके आदेशों का पालन करो, गुरू अपने शब्दो द्वारा तुम्हारे साथ है। जिस तरह मेरे गुरू सशरीर उपस्थित नही है, लेकिन मै उनके शब्दों द्वारा उनका संग कर रहा हूँ।
(श्रील प्रभुपाद प्रवचन,१८/८/७१,लन्दन)

जिस तरह मै काम कर रहा हूँ, तो मेरे गुरू महाराज उपस्थित है, भक्ति सिद्धान्त सरस्वती। सशरीर शायद दे नही है, लेकिन हर कार्य में वे उपस्थित है।
(श्रील प्रभुपाद वार्तालाप,२७/५/७७,वृन्दावन)

तो उसे प्राकृत कहते है, सशरीर उपस्थित।और एक दूसरा पहलू है जिसे कहते है अप्राकृत, सशरीर अनुपस्थित। लेकिन इसका मतलब यह नही है कि कृष्ण मर जए है या भगवान मर गए है। उसका यह मतलब नही है, प्राकृत या अप्राकृत,सशरीर उपस्थित या अनुपस्थित इससे कोई फर्क नही पडता।
(श्रील प्रभुपाद प्रवचन,११/१२/७३, लॉस एंजिल्स)

तो आध्यात्मिक रूप से वियोग का कोई प्रश्न नही उठता जबकि हो सकता है हमारे शरीर भौतिक रूप से बहुत दूर हों।
(श्यामा दासी को श्रील प्रभुपाद का पत्र,३0/८/६८)

मै कृष्ण भावनामृत की जानकारी को फैलाने के लिए प्रचार हेतु तुम्हारे देश गया और मेरे इस कार्य में तुम मदद कर रही हो। हालांकि मै वहाँ तुम्हारे साथ सशरीर उपस्थित नही हूँ लेकिन आध्यात्मिक रूप से मै सदा तुम्हारे साथ हूँ।
(नंदरानी,कृष्ण देवी और सुबला को श्रील प्रभुपाद का पत्र,३/१0/६७)

वास्तव में हम बिछुडे नही है। दो होते है – वाणी और वपु। तो वपु सशरीर उपस्थित है और वाणी शब्दों द्वारा उपस्थित है। लेकिन यह सब एकसमान है।
(हंसदूत को श्रील प्रभुपाद का पत्र,२२/६/७0)

तो गुरू की सशरीर उपस्थिती के अभाव में वाणी सेवा ज्यादा महत्त्वपूर्ण है। ऐसा प्रतीत हो सकता है कि मेरे गुरू सरस्वती गोस्वामी ठाकर भौतिक रूप से अनुपस्थित है फिर भी क्योंकि मै उनके आदेश की सेवा करने का प्रयास कर रहा हूँ अतः मुझे उनसे कभी वियोग की अनुभूति नही होती।
(करंधरा को श्रील प्रभुपाद का पत्र,२२/८/७0)

मै तो कभी अपने गुरू महाराज से वियोग का अनुभव नही करता। जब मै उनकी सेवा में लगा रहता हूँ तो उनकी तस्वीरे मुझे पर्याप्त शक्ति प्रदान करती है। स्वामी के शब्द की सेवा उनके शरीर की सेवा से अधिक महत्त्वपूर्ण है।
(श्याम सुन्दर को श्रील प्रभुपाद का पत्र,१६/७/७0)

आदेश का अनुसरण करो, शरीर का नही

जहाँ तक गुरू के साथ व्यक्तिगत संग का प्रश्न है, मै केवल चार या पाँच बार अपने गुरू महाराज के साथ था, लेकिन मैने उनका संग कभी नही छोडा है, एक क्षण के लिए भी नही; क्योंकि मै उनके आदेश का पालन कर रहा हूँ, मुझे कभी भी उनके वियोग का आभास नही हुआ। यहाँ भारत में मेरे कई गुरू भाई है जो निरन्तर मेरे गुरू महाराज के व्यक्तिगत संग में रहते थे, लेकिन वे उनके आदेशों की अवहेलना कर रहे है। यह उस कीडे की तरह है जो राज की जाँघ पर बैठा रहा है। वह अपने पद के कारण बहुत घमण्डी हो सकता है, लेकिन केवल राज को काटने मे ही सफल हो सकता है। व्यक्तिगत संग उतना महत्त्वपूर्ण नही है जितना सेवा के माध्यम से संग।

(सत्यधन को श्रील प्रभुपाद का पत्र,२0/२/७२)

तो आध्यात्मिक रूप से उपस्थित और अनुपस्थित, इसमें कोई अंतर नही....आध्यात्मिक रूप से ऐसा कोई अंतर नही है उपस्थिति या अनुपस्थिति।यदयापि हमें वियोग की अनुभूति है जब हम ऊँ विष्णुपाद श्री श्रीमद् भक्ति-सिस्द्धान्त सरस्वती ठाकुर का तरोभाव महोत्सव मना रहे है, शोक का कोई कारण नही है, यदयापि हम विरह महसूस कर रहे है।

(श्रील प्रभुपाद प्रवचन,१३/१२/७३, लॉस एंजिल्स)

मेरे गुरू महाराज तुम पर अति प्रसन्न होंगे....ऐसा नही है कि वे मर कर चले गए है। यह आध्यात्मिक सोच नहै है। ....वे देख रहे है। मुझे कभी ऐसा नही लगता कि मै अकेला हूँ।

(श्रील प्रभुपाद प्रवचन,२/३/७५)

वाणी, वपु से अधिक महत्वपूर्ण होती है।

(तृष्ण कृष्ण को श्रील प्रभुपाद का पत्र,१४/१२/७२)

हाँ, मै यह सुनकर बहुत खुश हुआ कि तुम्हारा केन्द्र इतना अच्छा कर रहा है। और तुम सब लोग गुरू के आदेशों का पालन कर उनकी उपस्थिति महसूस कर रहे हो। यदयापि वे सशरीर उपस्थित नही है। यही सच्ची भावना है।

(करंधरा को श्रील प्रभुपाद का पत्र,१३/६/७0)

गुरू अपने शब्दों द्वारा पीडीत व्यक्ति के हृदय को भेडकर दिव्य ज्ञान से भर सकता है। यह ज्ञान ही भौतिक अस्तित्व की ज्वाला को शांत कर सकता है।

(श्रीमद-भागवतम्,१.७.२२, भावार्थ)

दो शब्द है वाणी एवं वपु। वाणी अर्थात शब्द और वपु अर्थात भौतिक शरीर। वपु खत्म हो जाएगी, इस भौतिक शरीर का अंत हो जाएगा, यही प्रकृति है। लेकिन यदि तुम वाणी से सम्पर्क बनाए रखोंगे, गुरू के शब्दों से, तब हम स्थिर रह सकते है।....यदि तुम उच्च आदेशों के शब्दों एवं आदेशों से अपना अटूट सम्पर्क बनाए रखोंगे तब तुम हमेशा उत्साहित रहोगे। यही आध्यात्मिक समझ है।

(श्रील प्रभुपाद प्रवचन,२/३/७५)

कभी यह नही सोचना कि मै तुम्हारे साथ नही हूँ। सशरीर उपस्थिति आवश्यक नही है, संदेश (या श्रवण) द्वारा उपस्थिति ही असली सम्पर्क है।

(शिष्यों को श्रील प्रभुपाद का पत्र,२/८/६७)

कोई भी भौतिक अवस्था आध्यात्मिक अवस्था आध्यात्मिक ज्ञानार्जन में बाधा नही डाल सकती।

(श्रीमद्-भागवतम्,७.७.१, तात्पर्य)

दिव्य वाणी की शक्ति, वक्ता की प्राकट्य अनुपस्थिति के कारण कभी हम नही होती।

(श्रीमद्-भागवतम्,२.६.८, तात्पर्य)

शिष्य और गुरू कभी अलग नही होते; क्योंकि जब तक शिष्य दृढतापूर्वक गुरू के आदेशों का पालन करता है तब तक गुरू शिष्य का साथ नही छाडिता। इसे कहते है वाणी का संग। सशरीर उपस्थिति को वपु कहते है। जब तक गुरू सशरीर उपस्थित है तब तक शिष्य को गुरू के शरीर की सेवा करनी चाहिए और जब गुरू सशरीर उपस्थित नही है तो शिष्य को गुरू के आदेशों की सेवा करना चाहिए।

(श्रीमद्-भागवतम्,४.२८.४७, तात्पर्य)

यदि गुरू की सेवा का प्रत्यक्ष अवसर न मिले तो भक्त को चाहिए कि वह उनके आदेशों को याद कर सेवा करे। गुरू के आदेशों व स्वयं गुरू में कोई अन्तर नही है। अतः उनकी अनुपस्थिति में उनके मार्गदर्शन के शब्द ही शिष्य का गर्व होना चाहिए।

(चैतन्य चरितामृत्, आदि,१.३.५, तात्पर्य)

वे अपने दिव्य आदेशों द्वारा जीवित रहते है और अनुयायी उनके साथ रहता है।

(श्रीमद्-भागवतम्,भूमिका)

वह गलत है जो कहता है वैष्णवों की मृत्यु हो जाती है, जबकी वे अब तक वाणी में विदयमान है।

(भक्ति विनोद ठाकुर)

हाँ, गुरू से विरह का आनन्द गुरू से मिलने के आनन्द से भी बढकर है।

(जादूरानी को श्रील प्रभुपाद का पत्र,१३/१/६८)

कृष्ण और उनके प्रतिनिधि एक ही है। जिस तरह कृष्ण लाखों जगहो पर एक ही समय पर विदयमान रह सकते है, उसी प्रकार शिष्य जहाँ भी चाहे वहाँ गुरू उपस्थित हो सकते है। गुरू एक तत्त्व है, शरीर नही। यह उसी प्रकार है जिस तरह प्रसारण की तरंगो को ध्वनी और चलचित्र में परिवर्तन करने मूल सिद्धान्त के द्वारा हजारों जगहो पर टीवी देखा जा सकता है।

(मालती को श्रील प्रभुपाद का पत्र,२८/५/६८)

कृष्ण और गुरू की विप्रलंभ सेवा करना बेहतर है। प्रत्यक्ष सेवा में कभी-कभी जोखिम होता है।

(मधुसूदन को श्रील प्रभुपाद का पत्र,३0/१२/६७)

पुस्तकें ही पर्याप्त है।

भक्त ः श्रील प्रभुपाद जब आप हमारे साथ नही होते तो आपसे आदेश ग्रहण करना कैसे संभव होगा ? उदाहरणार्थ प्रश्न जो उठ सकते है....

श्रील प्रभुपाद ः प्रश्न और उत्तर.... उत्तर मेरी पुस्तकों में है।
(श्रील प्रभुपाद प्रात भ्रमण,१३/५/७३, लॉस एंजिल्स)

तो जो कुछ तुम्हें मिलता है उसका उपयोग कर मेरी पुस्तकों का गहन अध्ययन करने मे लगाओ तब तुम्हारे सारे प्रश्नों का उत्तर मिल जाएगा।
(उपेन्द्र को श्रील प्रभुपाद का पत्र,७/१/७६)

यदि तुम मंदिर जा सकते हो तो मंदिर का लाभ उठाओ। मंदिर ऐसी जगह है जहाँ व्यक्ति को भगवान श्रीकृष्ण की प्रत्यक्ष भक्तियुक्त सेवा का अवसर दिया जाता है। इसके साथ-साथ तुम हर रोज हमेशा मेरी पुस्तकों को पढो और तुम्हारे सारे प्रश्नों का उत्तर मिल जाएगा। और तुम्हारे कृष्ण-भावनामृत का पक्का आधार बनेगा। इस तरह तुम्हारा जीवन सफल हो जायेगा।
(हुगो सालेमोन को श्रील प्रभुपाद का पत्र,२२/११/७४)

तुम सबको मेरी पुस्तके प्रतिदिन कम से कम दो बार पढनी चाहिए, सवेरे और श्याम को और अपने आप ही सारे प्रश्नों का उत्तर मिल जाएगा।
(रणधीर को श्रील प्रभुपाद का पत्र,२४/१/७0)

मेरी पुस्तकों में कृष्ण-भावनामृत के दर्शन का पूर्णरूप से उल्लेख है अतः यदि ऐसी कोई चीज है जो तुम्हें समझ नही आती तो तुम्हें दुबारा पढना चाहिए। प्रतिदिन पढने से तुम्हें यह ज्ञान प्रकट होगा और इस प्रकिया से तुम्हारा आध्यात्मिक जीवन विकसित होगा।
(बहूरूप को श्रील प्रभुपाद का पत्र,२२/११/७४)

श्रील प्रभुपाद ः शुद्ध भक्त के साथ क्षण मात्र का संग भी पूरी सफलता।
रेवतीनंदन ः क्या यह शुद्ध भक्त के शब्दों को पढने पर भी लागू होता है ?
श्रील प्रभुपाद ः हाँ।
रेवतीनंदन ः क्या, आपकी पुस्तकों से थोडा संग का भी वैसा ही प्रभाव होता है ?
श्रील प्रभुपाद ः प्रभाव। सही मायनें में इसके लिए दोनों चीजें आवश्यक है। इसे प्राप्त करने की तीव्र इच्छा भी होनी चाहिए।
(श्रील प्रभुपाद वार्तालाप,१३/१२/७0, इंदौर)

८0 साल के बाद कोई ज्यादा समय तक जीवित रहने की अपेक्षा नही कर सकता। मेरी जीवन लगभग समाप्त हो चुका है। तुम्हें चलते रहना है, और चलते रहना है, और ये किताबें सब कुछ करेंगी।
(श्रील प्रभुपाद वार्तालाप,१८/२/७६)

परमहंस ः मेरा प्रश्न यह है – एक शुद्ध भक्त, जब वह भगवद्-गीता पर टिप्पणी करता है, कोई व्यक्ति उन्हें सशरीर कभी नही देखता, लेकिन वह केवल टिप्पणी, व्याख्या के सम्पर्क में आता है, क्या यह एक ही बात ?

श्रील प्रभुपाद ः हाँ। तुम भगवद्-गीता पढकर कृष्ण से संग कर सकते हो। और ये सारे साधु उन्होंने अपनी टिप्पणी, व्याख्याएँ दी है। तो इसमें कठिनाई कहाँ है ?

(श्रील प्रभुपाद प्रात भ्रमण,११/६/७४,पेरिस)

नया कुछ भी कहना बाकी नही है। जो कुछ मुझे कहना था मै अपनी पुस्तकों मेंकहा चुका हूँ। अब तुम्हें इसको समझना है और अपने प्रयास जारी रखने है। मै उपस्थित रहूँ इससे कोई फर्क नही पडता।

(श्रील प्रभुपाद वार्तालाप,१७/५/७७,वृन्दावन)

यदि मै चला जाऊँ तो शक का कोई कारण नही है। मै अपनी पुस्तकों द्वारा और अपने आदेशों द्वारा सदा तुम्हारे साथ रहूँगा। मै उसे तरह से तुम्हारे साथ रहूँगा।

(बी.टी.जी. भगवद् दर्शन,१३.१- २,दिसम्बर,१६७७)

श्रील प्रभुपाद हमारे शाश्वत गुरू है।

रिपोर्टर ः जब आपकी मृत्यु होगी तो अमेरिका में आपके आन्दोलन का क्या होगा ?
श्रील प्रभुपाद ः मेरी मृत्यु कभी नही होगी ।
भक्तगण ः जय ! हरि बोल ! (हँसी)
श्रील प्रभुपाद ः मै अपनी पुस्तकों से जीवित रहूँगा और तुम इनका उपयोग करोगे।

(श्रील प्रभुपाद का साक्षात्कार,१७/५/७५,बरकली)

भारतीय नारी ः ....की क्या अपनी मृत्यु के बाद भी गुरू मार्गदर्शन करते है ?
श्रील प्रभुपाद ः हाँ, हाँ। जिस तरह से कृष्ण हमारा मार्गदर्शन कर रहे है उसी तरह गुरू मार्गदर्शन करेंगे।

(श्रील प्रभुपाद प्रवचन,२३/६/६६)

एक शिष्य और गुरू का शाश्वत संबंध उसी दिन से शुरू हो जाता है जिस दिन से वह पहली बार श्रवण करता है।

(जादूरानी को श्रील प्रभुापद का पत्र, १७/५/७५)

एक शुद्ध भक्त का प्रभाव इस प्रकार होता है कि यदी कोई थोडी श्रद्धा से उसका संग करने आता है, तो उसे भागवतम् जैसे प्रामाणिक शास्त्रों से भगवान के बारे में श्रवण करने का अवसर प्राप्त होता है।..... यह शुद्ध भक्तों के साथ संग करने का पहला चरण है।

(भक्तिरसामृत सिन्धू,अध्याय १६)

यह कोई साधारण पुस्तक नही है। यह रिकार्ड गया जाप है। जो भी पढता है वह सुन रहा है।

(रूपानुग को श्रील प्रभुपद का पत्र, १६/१०/७४)

परम्परा प्रणाली के विषय में, बडे अंतरो के बारे में कई आश्चर्य होने की बात नही है.... हमें महत्त्वपूर्ण आचार्यों के चुनकर अनुसरण करना चाहिए।

(दयानंद को श्रील प्रभुपद का पत्र, १२/४/६८)

वे महान आत्माएँ (गुरू परम्परा के सदस्य) केवल आकाश चमकते धूमकेतु की तरह नही है जो आकाश में कुछ समय के लिए प्रकट होते है और अपने उद्देश की पूर्ति के बाद अदृश्य हो जाते है। वे कई सूर्यों की भाँति है जो सदैव आने वाली पीढीयों को प्रकाश और गर्मी देते रहते है। बहुत लम्बा समय बीतना शेष है जब इन आत्माओं का उत्तराधिकार अन्य लोग लेंगे जो प्रविज्ञ मन, सुन्दरता और प्रतिभाशाली होंगे।

(भक्तिविनोद ठाकुर)

नारायण ः तो वो शिष्य जिनके पास देखने या आपसे बात करने का अवसर या मौका नही है....

श्रील प्रभुपाद ः वह वही बात कर रहा था, वाणी और वपु। यदि तुम उनके शरीर को ना भी देखो तब भी उनके शब्दों को लो, वाणी।

नारायण ः लेकिन वे यह कैसे जान पाएँगे कि वे आपको संतुष्ट कर रहे है ?

श्रील प्रभुपाद ः यदि तुम वास्तव में गुरू के शब्दों का अनुसरण कारो तो इसका अर्थ है कि वह संतुष्ट है। और यदि तुम अनुसरण नही करते तब वह कैसे संतुष्ट हो सकते है।

सुदामा ः केवल यही नही। आपकी कृपा सब तरफ फैली हुई है और यदि हम इसका लाभ उठाएँ तो अपने एक बार कहा था तब हमें परिणाम की अनुभूति होगी।

श्रील प्रभुपाद ः हाँ।

जय अद्वैत ः और यदि जो कुछ गुरू कह रहे है उसमें हमें श्रद्धा है तो अपने आप ही उसका पालन करेंगे।

श्रील प्रभुपाद ः मेरे गुरू महाराज १९३६ में चल बसे और मैने यह आन्दोलन १९६५ में शुरू किया, तीस साल के बाद। फिर ? मुझे अपने गुरू की कृपा मिल रही है। यही वाणी है। यदी गुरू भौतिक रूप से उपस्थित न भी यदि वाणी का पालन करो तो तुम्हें मदद मिलेगी।

सुदामा ः अतएव जब तक शिष्य गुरू के आदेशों का पालन करता है तब तक वियोग का प्रश्न ही नही उठता।

श्रील प्रभुपाद ः नही। 'चक्षु दान दिलो जेई'। वह क्या है, अगला ?

सुदामा ः 'चक्षु दान दिलो जेई, जन्मे जन्मे प्रभु सेई '।

श्रील प्रभुपाद ः 'जन्मे जन्मे प्रभु सेई ', तो वियोग कहाँ है ? जिसने तुम्हारी आँखे खोली है वह जन्म-जन्मांतर तुम्हारा प्रभु है।

(श्रील प्रभुपद प्रातः भ्रमण, २१/७/७५, सेन फ्रांसिस्को)

मधुद्विषा ः क्या एक देसाई बिना किसी गुरू का मार्गदर्शन लिये और केवल ईसा मसीह के उपदेशों को सच मानकर और उनका पालन करके आध्यात्मिक जगत जा सकता है ?

श्रील प्रभुपाद ः मुझे समझ नही आया।

तमाल कृष्ण गोस्वामी ः क्या आज कोई ईसाई बिना गुरू के, परन्तु बाइबिल पढकर और ईसा मसीह के शब्दों को पालन कर, पहुँच....

श्रील प्रभुपाद ः जब तुम बाइबल पढते हो तब तुम गुरू का अनुसरण करते हो।तुम यह कैसे कह सकते हो कि बिना गुरू के ? जैसे ही तुम बाइबल पढते हो उसका अर्थ है कि तुम ईसा मसीह के आदेशों का पालन कर रहे हो जिसका अर्थ है कि तुम गुरू का अनुसरण कर रहे हो। तो बिना गुरू के कहने का अवसर ही कहाँ है।

मधुद्विषा ः मेरा मतलब था जीवित गुरू।

श्रील प्रभुपाद ः गुरू कोई ऐसा विषय नही कि .... घुरू शाश्वत है। .... तो तुम्हारा प्रश्न है 'बिना गुरू के'। बिना गुरू के तुम अपने जीवन की किसी भी अवधि में नही रह सकते। तुम इसको गुरू स्वीकार करो या उसको गुरू स्वीकार यह अलग बात है लेकिन स्वीकार करना ही होगा। जैसकि तुमने कहा 'बाइबल पढने से', तो जब तुम बाइबिल पढते हो तो इसका मतलब है तुम ईसा मसीह को गुरू मान रहे हो, जिनके प्रतिनिधि कोई 'प्रीस्ट' या 'क्लर्जी' होते है।

(श्रील प्रभुपद प्रातः भ्रमण, २/१०/६८, सिया)

तुमने यह पुछा है कि क्या यह सत्य है कि जब तक सारे शिष्य आध्यात्मिक जगत को स्थानान्तरित न हो जाएँ गुरू उसी ब्रह्माणंड में रहता है ? इसका उत्तर है – हाँ, यह एक नियम है।

(जयपताका को श्रील प्रभुपद का पत्र, ११/७/६६)

----------o----------